7-7 Scanned

श्रीः

दामोदरपण्डितोद्धृतः–

यन्त्रचिन्तामणिः

मुरादाबादनिवासिपण्डित बलदेवप्रसादजीमिश्रकृत–

भाषाटीकोपेतः



मुद्रक व प्रकाशक–

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष– "लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्–प्रेस,

कल्याण–बम्बई.

संवत् २०२४, सन् १९६७.

दिसम्बर, १९६७

मुद्रक व प्रकाशक : मेसर्स खेमराज श्रीकृष्णदास, अध्यक्ष श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, वम्बई—४ के लिए दे॰ स॰ शर्मा मैनेजर द्वारा श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, ७ वीं गली, खेतवाड़ी, वम्बई ४ में मुद्रित.

प्रस्तावना

प्रिय महानुभावो !

यह वही ग्रंथ है कि, जिसके लिये आप चिरकालसे उत्कंठित हो रहे हैं। संसारमें जितने ग्रंथ दिखाई देते हैं, उनमें यह मंत्रशास्त्र बड़ा अलौकिक है, कारण इससे मनुष्यकी आकांक्षा बहुतही शीघ्र पूर्ण हो जाती है। फिर यह शास्त्र वेदोंसे निकला है; इसलिये इसकी सत्यंतापर तो किंचिन्मात्र भी सन्देह नहीं किया जा सकता, वरन इसके वाक्य ब्रह्मवाक्य समझे जाते हैं। मंत्रशास्त्रके अन्तर्गत ही यन्त्र और तंत्रशास्त्र भी हैं।

प्राचीन कालमें हमारे महान् आचार्य ऋषि मुनियोंने इन्हीं मंत्र (यंत्र-तंत्र) शास्त्रोंके द्वारा अपना जीवन सुखमय बनाया था। इन दिनों मंत्रशास्त्रका प्रचार बहुत कम होने तथा इस विषयपर अच्छे सरल ग्रंथ न रहने एवं जनता की अश्रद्धा बढ़ने आदिसे यह शास्त्र प्रायः लुप्तसा हो रहा है। किन्तु अब भी इस विषयका जो कुछ प्रचार शेष रह गया है उसपर यदि पाठक भली-भांति ध्यान देकर अध्ययन तथा मनन करें तो इस मंत्रवाक्यसे अल्प कालमें ही उनकी वह चिर अभिलाषा पूरी हो सकती है कि जो मरणपर्यन्त अन्य शास्त्रों के पठन-पाठनसे नहीं हो सकती।

इस कर्मभूमिमें सिद्धि प्राप्त करानेके लिये अनेक अन्यान्य शास्त्र हैं और मन्त्रशास्त्र भी। उसमें जहां और और शास्त्र दूध अथवा दहीके सदृश हैं, वहां मन्त्र शास्त्र मक्खनके सदृश है। मक्खनमें दूध या दहीसे अवश्य ही बहुत अधिक स्वाद और शक्ति होती है। यह इससे भी सिद्ध है कि खाद्य पदार्थमें श्रीकृष्ण भगवान् माखनको ही श्रेष्ठ समझते थे। अतः शीघ्रही मनुष्योंके अभिलषित फल प्राप्त होनेके लिये मंत्रशास्त्रसे बढ़कर कोई दूसरा उपयोगी शास्त्र नहीं है। मंत्रशास्त्रके अन्तर्गत ही यह "यंत्रचिन्तामणि" है कि, जिसमें अनेक प्रकारके सिद्धिदायक मंत्र और यंत्र भरे हुये हैं।

इसको लोकमें लानेका श्रेय परमपूज्य महात्मा गंगाधरजीके पुत्र ६४ कलाओंमें चतुर श्रीगणेशजीके परमभक्त महायशस्वी परम बुद्धिमान् दामो-

दरजीको है । उन्होंने जब शिवोक्त, देव्युक्त प्रभृति अनेकों शास्त्रोंको विस्तार-पूर्वक देखकर लोकोपकारके लिये स्वयम् मन्त्रयुक्त यंत्रोंके संग्रह करनेकी इच्छा की, उसी समय स्वप्नावस्थामें श्रीशंकर महाराजकी प्रेरणा हुई । तब महा-पंडित दामोदरजीने इस चिन्तामणिरूपी यंत्रोंका संग्रह किया ।

फिर तंत्रोंके आदि अनुवादक, अनेक ग्रंथोंके सुप्रसिद्ध टीकाकार, रचयिता, संपादक और महानिर्वाण तन्त्र, कामरत्न तंत्र, आश्चर्ययोगमाला तंत्र, गुप्तसाधन तंत्र, गौरीकांचनलिकातंत्र, गुरुतन्त्र, नित्यतन्त्र आदिके भाषां-तरकर्ता मुरादाबाद निवासी परमपूज्य मेरे पितृव्य पंडित बलदेवप्रसादजी मिश्रने इस ग्रन्थका सरल हिन्दी भाषामें अनुवाद किया, जिसके लिये तांत्रिक समाज उनका चिर कृतज्ञ रहेगा । किंतु दुःखकी बात है कि हमारे पितृव्यजी इस ग्रंथके प्रकाशनके पूर्व ही अपनी जीवनयात्रा समाप्तकर ब्रह्ममें लीन हो गये ।

यद्यपि कलियुगी जीव इस विद्याकी सिद्धि कर सकते हैं, किंतु जिस प्रकार करना चाहते हैं, वैसे यह विद्या सिद्धिप्रदान नहीं कर सकती । पृथ्वी निर्वीर्य नहीं है, आज भी यदि पूर्ण विधिसे अनुष्ठान किया जाय तो अवश्य ही सिद्धि प्राप्त हो सकती है ।

पूर्वकालमें जितने ग्रंथ मंत्र (यंत्र-तंत्र) विद्याके मिलते थे, आज वे अदृश्य हो रहे हैं, किंतु बड़े आनंदकी बात है कि ऐसे समयमें भी यंत्र-मंत्र तथा तंत्र ग्रंथोंके प्रकाशित करनेकी रुचि फिर मनुष्योंके हृदयोंमें लहराने लगी है ।

मंत्र इत्यादिके प्रयोगोंकी सिद्धि कहीं नहीं गई है, किंतु सिद्धिकी अभि-लाषा रखनेवाले ही नहीं हैं । जो मनुष्य मंत्र (तंत्र-यंत्र) विद्याको सीखना चाहें वे प्रथम सद्गुरुकी खोज करें। खोज करनेपर क्या नहीं मिलता है ? सच्चे-गुरुके मिल जानेपर उनसे यथाविधि दीक्षा लें और उनके बताये मार्गका अनु-सरण करें तो फिर सिद्धि प्राप्त कर लेना कुछ कठिन नहीं है ।

अन्त में साधकगणोंसे हमारी विनम्र प्रार्थना यही है कि, कदाचित् यथा-विधि प्रयोग करने पर भी आपको सिद्धि प्राप्त न हो तो यह दोष शास्त्रका न समझकर अपना ही समझिये और दोबारा सावधानीके साथ कार्यमें प्रवृत्त

होइये, तो आपकी मनःकामना अवश्य फलीभूत होगी, ऐसा मेरा दृढ विश्वास है ।

इस ग्रंथका पूर्ण संशोधनकर अनेक क्लिष्ट श्लोकों और पदोंको सरल तथा स्पष्टकर तांत्रिक प्रेमियोंके लिये इसे और भी परमोपयोगी बना दिया है ।

यदि मंत्र-यंत्र-तंत्र-प्रेमी प्रिय पाठक, ग्राहक, अनुग्राहक इसका आदर कर एक-एक प्रति अपने पास रक्खें तो हम अपने विशेष उद्योग तथा अनुवादक के परिश्रमको सफल समझेंगे ।

यदि इसमें कहीं कोई त्रुटि नरधर्मानुसार रह गयी हो तो पाठक महाशय उसको क्षमा करते हुए सूचना देनेकी कृपा करें। पुनरावृत्तिमें उसका सुधार कर दिया जायगा ।

इसके लिये उदारचेता "श्रीलक्ष्मीवेंकटेश्वर" प्रेसाध्यक्ष सर्वगुणसंपन्न परमोदार रावसाहब श्रीमान सेठ रंगनाथजी तथा सेठ श्री श्रीनिवासजीको अनेकानेक हार्दिक धन्यवाद है कि, जिन्होंने इस पुस्तकके प्रकाशन तथा इसके सर्वांगसुन्दर बनानेमें कोई बात उठा नहीं रक्खी है। अतः उनके इस अद्वितीय उत्साहकी हम अत्यंत सराहना करते हैं।

चिरपरिचित
जगदीशप्रसाद मिश्र
मुरादाबाद

श्रीः

यन्त्रचिन्तामणेर्विषयानुक्रमणिका

इति अनुक्रमणिका समाप्ता

श्रीः

यन्त्रचिन्तामणिः

भाषाटीकोपेतः

मङ्गलाचरणम्

यं ध्यायन्ति सुरासुराश्च निखिला यक्षाः पिशाचोरगा राजानश्च तथा मुनीन्द्रनिवहाः सर्वार्थसंसिद्धये। भक्तानां वरदाभयप्रदकरं पाशाङ्कुशालंकृतं चञ्चच्चामरवीज्यमानमनिशं सोऽहं श्रये शङ्करम् ॥ १ ॥ बभार दुःस्थान्मुनिपुङ्गवान्यो बुद्ध्याऽथ मन्त्रैश्च दुरासहौजाः। जाज्वल्यमानो दिशि दृश्यते यः स भार्गवो मामवताच्छरण्यः ॥ २ ॥ यस्य प्रसादाद्बलिनो भवन्ति जानन्ति दैत्या विविधां च मायाम्। यो लब्धवान् मन्त्रवरं षडङ्गं मृत्युञ्जयं देववराद्गणेशाद् ॥ ३ ॥ ग्रन्थकर्तुः प्रशस्तिः— जालन्धरे पीठवरे प्रसिद्धे प्रत्यक्षरूपा भुवि वर्तते या। गोत्रे

सम्पूर्ण सिद्धियोंके लिए जिन शिवजी महाराजका सुर, असुर, यक्ष, पिशाच, उरग (सर्प), राजा, मुनिगण आदि ध्यान करते हैं, जो भक्तोंको वर और अभय दान देते हैं, एवं पाश और अंकुशके धारण करनेवाले, जिनपर निरन्तर चँवर डुलता रहता है, उन श्रीशिवजीमहाराजका मैं बारम्बार आश्रय लेता हूँ ॥ १ ॥ प्रतापशील श्री शुक्राचार्यजी गुप्त भावसे रहनेवाले मुनिश्रेष्ठोंको मंत्रबलसे जानकर भरण करते हुए आकाश मंडलमें प्रकाशमान शरणागतोंकी रक्षा करनेवाले श्री भार्गवजी मुझ शरणमें आयेकी रक्षा करें ॥ २ ॥ जिनकी कृपासे दैत्यगण बलवान् होते और अनेक प्रकारकी मायाको जानते हैं, उन्हीं शुक्राचार्यजीने देवताओंमें श्रेष्ठ श्रीगणेशजीसे मृत्युको जीतनेवाली श्रेष्ठ-षडङ्गमंत्र विद्याको प्राप्त किया ॥ ३ ॥ प्रसिद्ध और पवित्रस्थान जालन्धर नामक नगरकी सुन्दर पुण्य भूमिमें उत्पन्न, वेदादि शास्त्रोंसे विमुख नास्तिकोंका

तस्मिन्वेदविद्याप्रवीणे योऽन्वाजैषीन्नास्तिकान्वेदबाह्यान् ॥ ४ ॥
तदन्वये पण्डितः सन्नृसिंहो ज्वालामुखीं नौमि महाप्रभावाम् । यां योगमायां परमार्थविद्यां विशेषवन्द्यां भृगुवंशजानाम् ॥ ५ ॥
तस्यात्मजोऽभूद्भुवि धर्मशीलो नाम्ना महादेव इति प्रसिद्धः । निसर्गवैरं प्रजहुः सुसत्त्वा यं प्राप्य दुष्टाहितरक्षसङ्घाः ॥ ६ ॥
तस्मादासीत्सुमतिविकसद्देवदत्तःकलावान्मान्यो राज्ञां सदसि विदुषां गद्यगङ्गाप्रवाहः । उत्कल्लोलां दिशि दिशि जनाः कीर्तिपीयूषसिन्धुं यस्याद्यापि श्रवणपुटकैः कुञ्चिताक्षाः पिबन्ति ॥ ७ ॥
गङ्गाधरस्तत्तनयो बभूव विवेकगाम्भीर्यगुणैरुदारः । संप्राप्य

पराजय करनेवाले षडङ्ग शास्त्रादिकोंके ज्ञाता जो उक्त[1] भार्गवजीके वंशमें कोई महान् पुरुष उत्पन्न हो हुए हैं ॥ ४ ॥ उन्हीं महात्मा भृगुवंशीके वंशमें उत्पन्न होकर मैं नृसिंह नामक पंडित महाप्रभावशालिनी श्रीज्वालामुखी देवीको प्रणाम करता हूँ । जो जगज्जननी योगमाया परम विद्या भृगुवंशियोंके विशेषकर वन्दन करनेके योग्य है ॥ ५ ॥ उन नृसिंहजीके पुत्र धर्मात्मा महादेव हुए, जिन महात्मा महादेवको प्राप्त करके जीवोंने स्वाभाविक वैर छोड़ दिया और दुष्ट अहित करनेवाले राक्षसादि भी स्वाभाविक वैरको त्यागकर प्रीति करने लगे ॥ ६ ॥ महादेवजीके पुत्र बुद्धिमान्, ६४ कलाओंमें निपुण, राजाओंके माननीय और पंडितोंकी सभामें गद्यपद्यात्मक वाणी बोलनेवाले देवदत्त हुए । जिन महात्माकी ऊंची कल्लोलवाली कीर्तिरूपी नदीके अमृतरूप रसको सम्पूर्ण दिशाओंमें आजतक भी कुञ्चिताक्ष मनुष्य श्रवणपुटोंसे पान कर रहे हैं ॥ ७ ॥ देवदत्तजीके पुत्र विवेक गंभीरतादि गुणोंसे

---

१. यहां पर नाम न लेनेके कारण यह है कि –" आत्मनाम गुरोर्नाम नामातिकृपणस्य च " अपना नाम, गुरुदेवका नाम और बड़े कृपणका नाम नहीं लेना चाहिये । शास्त्रकी इस मर्यादासे नाम नहीं लिया ।

लक्ष्मीश्च सरस्वती च यत्पादयुग्मं स्थिरतामवाप ॥ ८ ॥ दामोदरः सर्वकलाप्रवीणस्तस्मादभूच्छ्रीगणनाथ भक्तः । लब्धप्रतिष्ठो गुरुदेवभक्तो मान्यः सतां धर्मपरायणोऽयम् ॥ ९ ॥ प्रयोजनादि :— दृष्ट्वाऽनेकशिवागमांश्च बहुलांश्चालोक्य सौरागमान्देवीशास्त्रमहागमांश्च विविधानालोक्य विस्तारतः । कर्तुं वाञ्छितसंग्रहं सुमतिमान्दामोदरः स स्वयं लोकानां च हिताय यन्त्रनिकरं मन्त्रेण युक्तं स्फुटम् ॥ १० ॥ प्रेरितश्चन्द्रचूडेन स्वप्ने तु द्विजपुङ्गवः । चकार कल्पं यन्त्राणां चिन्तामणिरिति स्फुटम् ॥११॥ पुरा कैलासशिखरे नानाधातुविचित्रिते । नानाद्रुमलताकीर्णे नाना पुष्पोपशोभिते ॥ १२ ॥ अप्सरोगणसंकीर्णे सिद्धचारणसेविते । शिवभक्तैः सुरैर्दैत्यैः पन्नगैश्च

उदार गंगाधर हुए, जिन महात्मा गंगाधरजीके दोनों चरणकमलोंको पाकर लक्ष्मी और सरस्वतीजी स्थिर भावको प्राप्त हुईं ॥ ८ ॥ गंगाधरजीके पुत्र ६४ कलाओंमें चतुर गणेशजीके भक्त दामोदरजी उत्पन्न हुए, यह बड़े प्रतिष्ठित गुरुदेवके भक्त, भक्त पुरुषोंके माननीय और अपने धर्ममें तत्पर हुए ॥ ९ ॥ शिवोक्त, सौरोक्त, देव्युक्त प्रभृति अनेकों शास्त्रोंको विस्तारपूर्वक देखकर परम बुद्धिमान् दामोदरजी लोकोपकारके लिये स्वयं मंत्रयुक्त यंत्रोंके संग्रह करनेकी इच्छा करते रहे । स्वप्नावस्थामें श्रीशिवजी महाराजकी प्रेरणाको प्राप्तकर दामोदर पंडित इस चिन्तामणिरूपी यंत्रोंका संग्रह किया ॥ १० ॥११॥ पूर्वकालमें कैलास पर्वतकी चोटी, नाना प्रकारकी धातुओंसे विचित्र, अनेक प्रकारके वृक्ष और लताओंसे व्याप्त और अनेक प्रकारके पुष्पोंसे विराजमान ॥ १२ ॥ अप्सराओंके समूहसे शोभित, सिद्ध चारणादिकोंसे सेवित

विराजिते ।। १३ ।। योगध्यानैकनिपुणैस्तत्त्वविद्भिः सुसेविते । आयुधैश्चेतनावद्भिरुदीरितजयस्वनैः ।। १४ ।। एकनेत्रैर्द्विनेत्रैश्च त्रिनेत्रैरप्यनेककैः । एकपादैर्द्विपादैश्च त्रिपादैश्च सहस्रशः ।। १५ ।। महाक्रूरैर्महाभीमैः करालैश्च विराजिते । कम्बलाश्वतरैर्नागैर्गीतध्वनिविराजिते ।। १६ ।। इन्द्राद्यैर्लोकपालैश्च बाणाद्यैरसुरैस्तथा । दुर्वासाद्यैश्च मुनिभिः समन्तात्परिसेविते ।। १७ ।। एवंभूते च कैलासे देवदेवः स्वयंप्रभुः । ज्योतिर्मयोऽमृतमयो योगचिन्त्यः सदाशिवः ।। १८ ।। अव्यक्तो व्यक्तरूपोऽसौ यत्रास्ते तु स्वयं शिवः । विष्णुना स्तूयमानस्तु प्रहृष्टस्तु सदाशिवः ।। १९ ।। कदाचिदुपविष्टोऽयमेकान्ते परमेश्वरः । हृष्टस्तुष्टः प्रसन्नात्मा सृष्टिसंहारकारकः ।। २० ।। चिन्तामणौ

शिवभक्त, सुर, दैत्य और पन्नगोंसे विराजमान ।। १३ ।। योगध्यानमें चतुर, तत्त्वोंके जाननेवालोंसे निषेवित, चेतनावाले आयुधों से युक्त जयशब्दसे गुञ्जायमान थी ।। १४ ।। त्रिनेत्रवाले, दो नेत्रवाले, एक नेत्रवाले और अनेक नेत्रवाले; तीन चरणवाले, दो चरणवाले, एक चरणवाले हजारों महाक्रूर अतिभयंकर, करालकम्वल (पशुविशेष), अश्वतर (खच्चर) और हाथियोंके शब्दोंकी ध्वनिसे गरज रही थी ।। १५ ।। १६ ।। इन्द्रादि लोकपालोंसे, वाणादि असुरोंसे, दुर्वासादि मुनियोंसे सव प्रकारसे सेवित थी ।। १७ ।। ऐसे कैलासपर्वतके शिखरपर ज्योतिर्मय, अमृतमय, योगचिन्त्य सदाशिव अव्यक्त (नहीं प्रकाशस्वरूप) व्यक्तरूप विष्णुभगवान्से स्तुतिको प्राप्त प्रफुल्लित सदाशिव, हृष्ट, पुष्ट, प्रसन्न, आत्मा, सृष्टि और संहार करनेवाले देवताओंके देवता स्वयं प्रकाशमान श्री शंकरजी महाराज विराजमान थे ।। १८–२०।। श्रीशिवजी महाराजके मुखकमलसे निकले कल्पोंमें श्रेष्ठ सुतन्त्र

कल्पवरे सुतन्त्रे श्रीचन्द्रचूडस्य मुखाद्विनिर्गते । तस्मिन्मयाऽऽद्या किल पीठिकेयं कृताऽत्र दामोदरपण्डितेन ॥ २१ ॥

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणौ महाकल्पे प्रत्यक्षसिद्धिप्रदे उमामहेश्वर-
संवादे दामोदरपण्डितोद्धृते प्रथमपीठिका समाप्ता ॥

स पातु देव्याः कबरीविलासो लास्ये लसन्त्या गिरिराजपुत्र्याः । यं पश्यतो बालमृगाङ्कमौलेः क्षणेन सर्वज्ञपदं बभूव ॥ १ ॥ एकदा देवदेवेशं दृष्ट्वा देवी शुचिस्मिता । उपगम्य शनैर्वाक्यं प्रोवाच जगदम्बिका ॥ २ ॥ श्रीदेव्युवाच । देवदेव जगन्नाथ करुणाकर शङ्कर । वर्णाश्रमाश्च धर्माश्च संदे-

---

यन्त्रचिंतामणि कल्पकी यह पूर्वपीठिका दामोदर नाम पंडितने इस ग्रंथमें इस प्रकार कल्पना की है ॥ २१ ॥

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणौ महाकल्पे प्रत्यक्षसिद्धिप्रदे उमामहेश्वर-
सम्वादे दामोदर पंडितोद्धृते पण्डितबलदेवप्रसादजीमिश्र-
कृतभाषाटीकासहित प्रथमपीठिका समाप्ता ।

जिस नृत्य करती हुई गिरिराजपुत्री श्रीपार्वतीजीके कबरी (चोटी) विलासको देखकर श्री शंकरजी क्षणमात्रमें सर्वज्ञपदको प्राप्त हुए । (पार्वतीजीका) वह कबरीविलास हमारी रक्षा करे ॥ १ ॥ एक समय देवताओंके देवता श्री शिवजी महाराजको देखकर जगज्जननी श्री पार्वतीजी निकट आकर कुछ हँसती हुई धीरे से बोलीं ॥ २ ॥ पार्वतीजी बोलीं –हे देव जगन्नाथ ! हे करुणासागर ! हे शिव शंकर ! हे प्रभो ! वर्ण, आश्रम, धर्म संदेह इत्यादि मैंने सब आपके मुखारविन्दसे श्रवण किये, क्योंकि आप

हाश्च महाप्रभो ।। ३ ।। कौतुकानि स्वकल्पानि पुराणादीनि वै प्रभो। श्रुतं सर्वं मया त्वत्तः सर्वज्ञोऽसि यतः स्वयम् ।। ४ ।। मन्त्राणां विनियोगस्तु यन्त्राणां निर्णयस्तथा। आचारभेदा ये लोके योगाभ्यासः सुदुर्लभः ।। ५ ।। सुदुर्लभतरं ज्ञानं यज्ञकाण्डः सुदुर्लभः। अनेकमन्त्रयोगो वै वेदोक्तोऽपि हि दृश्यते ।। ६ ।। तथैवागमभेदेषु उदितो हि न संशयः। एवं द्विजाश्च मन्त्रज्ञा दृश्यन्ते क्लेशभागिनः ।। ७ ।। पाखण्डिभिः पराभूता नास्तिकैर्वेदनिन्दकैः ।। विना मन्त्रैर्जपैर्होमैरल्पक्लेशेन च प्रभो ।। ८ ।। तत्क्षणाज्जायते सिद्धिः सुसिद्धा सर्वकामदा। मारणोच्चाटनाकृष्टे विद्वेषे स्तम्भने तथा ।। ९ ।। अभिचारेषु सर्वेषु काम्यार्थेषु च सर्वदा। विवादे च विषादे च रणे वैरिजये तथा ।। १० ।। एतत्सर्वं यथा देव सिध्यते साधकस्य हि। विचार्य देवदेवेश रहस्यं परमं वद ।। ११ ।। श्रीशिव उवाच ।। वेदाचारो मया प्रोक्त ऋषीणां तु महात्मनाम्। शिवधर्मस्तु

सर्वज्ञ हैं ।। ३ ।। ४ ।। मंत्रोंके विनियोग, यंत्रोंका निर्णय, आचार भेद, कठिनतासे प्राप्त होने वाला योगाभ्यास और अनेक जो वैदिक मन्त्र योग दृष्टिमें आते हैं ।। ५ ।। ६ ।। तथा आगम भेदसे सभीका आपने वर्णन किया है इन सव विपयोंके जाननेवाले द्विजाति वेदके निन्दक नास्तिकोंसे पराजित होकर दुःख भोगते हैं ।। ७ ।। अतः हे प्रभो ! विनाही मन्त्र, जप, होम, इत्यादिके किये सुखपूर्वक साधक को क्षणकालमें सुप्रसिद्ध सम्पूर्ण कामनाओंकी देनेवाली सिद्धि प्राप्त हो जाय ।। ८ ।। और मारण, आकर्षण, स्तम्भन आदि सव प्रकारके अभिचार तथा काम्य अर्थ विवाद, विषाद, संग्राममें वैरीकी जय इत्यादि प्रयोग साधकको शीघ्रही सिद्ध हो जाय ।।९।। १० ।। हे देवदेवेश ! विचारकर उस परमरहस्यको प्रकाशित करो ।। ११ ।। श्री शिवजी बोले—महात्मा ऋषियोंका वेदाचार

मुक्तानां वैष्णवानां तु वैष्णवः ।। १२ ।। सौरं साङ्ख्यं मया प्रोक्तं बहूनां सिद्धिमिच्छताम् । शाक्तं च बहुधा प्रोक्तं भैरवं बहुधा प्रिये ।। १३ ।। धर्मकामार्थमोक्षाणां ज्ञानं चैव प्रकाशितम् । रहस्यं गोपितं भद्रे सर्वत्रापि न संशयः ।। १४ ।। रहस्यहीनो मन्त्रस्तु ध्यानेनाऽपि विशेषतः । न सिध्यति वरारोहे कल्पकोटिशतैरपि ।। १५ ।। श्रीदेव्युवाच ।। प्रसादं कुरु देवेश सुखोपायं वदस्व मे । सुरहस्यं सुबोधं च सद्यः प्रत्ययकारकम् ।। १६ ।। विना होमेन जाप्येन पुरश्चरणसेवया । कलौ तु सिद्ध्यते देव तथोपायं वदस्व मे ।। १७ ।। श्रीशिव उवाच ।। साधु साधु महाप्राज्ञे लोकानां हितकारिके । इदमित्थं न केनापि पृष्टोऽहं पद्मलोचने ।। १८ ।। शृणुष्वैकाग्रचित्ता त्वं रहस्यं क्षणसिद्धि-

---

मैंने कहा, मुक्त पुरुषोंका शिवधर्म कहा और वैष्णवोंका वैष्णव धर्म कहा ।। १२ ।। सिद्धिकी इच्छा करनेवालोंके निमित्त सौर और सांख्य योग कहा, हे प्रिये ! शाक्त और अनेक प्रकारके भैरव कहे ।। १३ ।। धर्म, काम, अर्थ, मोक्षका ज्ञान भी प्रकाशित किया । हे भद्रे ! रहस्यको तो सदा निस्सन्देह सब स्थानोंमें गुप्तही रखना चाहिये ।। १४ ।। हे वरारोहे ! विशेष ध्यान करनेपर भी रहस्यहीन मंत्र अनेकों उपाय करनेसे भी सिद्ध नहीं होता है ।। १५ ।। श्री पार्वतीजी बोलीं– हे देवेश ! मेरे ऊपर कृपाकर, सुखपूर्वक जानने योग्य शीघ्र विश्वासके देनेवाले रहस्यको सुखपूर्वक कहो ।। १६ ।। हे देव ! विना तप, जप, होम इत्यादि पुरश्चरणोंके किये कलियुगमें सिद्ध होनेवाले उपायको कहो ।। १७ ।। श्रीशिवजी बोले–हे महाप्राज्ञे ! हे लोकोंका हित करनेवाली ! तुमने बड़ा उत्तम प्रश्न किया है । हे कमलनयने ! आजतक मुझसे इस प्रकार किसीने नहीं पूछा ।। १८ ।। अब तुम एकाग्रचित्त हो शीघ्र सिद्धि

दम्। कल्पं चिन्तामणिं नाम गुह्याद्गुह्यतरं महत् ॥ १९ ॥ सर्वाङ्गमस्य सारं च मन्त्राणां सारमुत्तमम् । अथर्वणस्यवेदस्य सारात्सारतरं परम् ॥ २० ॥ अस्मिन्कल्पे भविष्यन्ति चिन्तामणिमये शुभे । यन्त्राणि बहुधा देवि काम्यकर्मकराणि च ॥ २१॥ एतत्कल्पं सदा यस्य लिखितं विद्यते गृहे । संपूज्यते प्रतिदिनं प्रभावं तस्य वै शृणु ॥ २२ ॥ अल्पमृत्युभयं नास्ति नास्ति चौरभयं तथा । भूतप्रेतपिशाचानां प्रभावो नैव जायते ॥ २३ ॥ अन्यस्य कपटं नूनं न सिध्यति कदाचन । अविश्वासो न कर्तव्यः साधकेन वरानने ॥ २४ ॥ अभिचारो भवेत्कल्पे ह्यविश्वासान्न संशयः । संशयेन कृतं यन्त्रं विपरीतं प्रजायते ॥ २५ ॥ यन्त्रलेखनविधिः– स्नानं कृत्वा शुचिर्भूत्वा पूजयेत्कुलदेवताम् । लेखनीयं प्रयत्नेन एकान्ते यन्त्रमुत्तमम्

देनेवाले गुप्तसे गुप्त अतिश्रेष्ठ चिन्तामणि कल्पको श्रवण करो ॥ १९ ॥ सम्पूर्ण शास्त्रोंके सारभूत और मंत्रोंके उत्तम साररूप अथर्वण वेदके अति सारयुक्त इस चिन्तामणि नाम कल्पमें काम्य कर्मके करनेवाले अनेकों यंत्र हैं ॥ २० ॥ २१ ॥ यह लिखित कल्प सदा जिसके स्थानमें प्रतिदिन पूजित होता है, उसके प्रतापको सुनो ॥ २२ ॥ अल्प मृत्युका भय, चोरका भय, भूत प्रेत पिशाच इत्यादिकोंका द्वारा उपद्रव उनके यहाँ नहीं होता ॥ २३ ॥ और अन्य किसी जीवका किया हुआ कपट भी उस स्थानपर नहीं चलता है ॥ २४ ॥ हे वरानने ! साधकको अविश्वास न करना चाहिये, कल्पमें अविश्वास करनेसे निस्सन्देह अभिचार हो जाता है और संदेह पूर्वक किया हुआ विपरीत (उल्टा) हो जाता है ॥ २५ ॥ स्नान कर पवित्र हो शुद्ध मनसे कुलदेवताका पूजन करे, फिर

॥ २६ ॥ यस्य कस्य प्रयोगस्य विधिरेष प्रकीर्तितः। दिनत्रयं प्रकुर्वीत पूजाभोगविधानतः ॥ २७ ॥ त्रिरात्रं भूमिशायी स्याद् ब्रह्मचर्यरतः शुचिः। त्रिदिनाज्जायते स्वप्नं साधकस्य वरानने ॥ २८ ॥ सिद्धादिः—सिद्धं साध्यमरिं चैव सुसिद्धमथवा ध्रुवम्। अवश्यं वदति स्वप्ने मन्त्राधिष्ठानदेवता ॥ २९ ॥ यदा न जायते स्वप्नं तदाऽसाध्यं विनिर्दिशेत्। नो चेद्यथा श्रुतं स्वप्ने तत्तथैव विनिर्दिशेत् ॥ ३० ॥ श्रुत्वा देवमुखात्स्वप्ने फलसिद्धि विधानतः। यदाऽनिवारितः स्वप्ने तदा तद्यन्त्रमुत्तमम् ॥ ३१ ॥ एवं विलिख्य यः कुर्यात्सिद्धिरेव प्रकीर्तिता। अत एव मयोक्तानि यन्त्राणि सुबहून्यपि ॥ ३२ ॥ येन मन्त्रेण संसिद्धिर्येषां येषां प्रजायते। तेन तेन हि तद्ग्राह्यं निषिद्धं तु परित्यजेत् ॥ ३३ ॥ विधिरेष प्रसिद्धोऽस्ति यन्त्राणां भूतले कलौ। मन्त्रकोष्ठे तु

एकान्तमें उत्तम यंत्रको लिखे ॥ २६ ॥ सम्पूर्ण प्रयोगोंकी विधि यह कही कि तीन दिन विधि-विधानसे पूजा करे। ब्रह्मचर्य्यको धारणकर, शुद्ध अंतःकरण हो, तीन दिनतक भूमिमें शयन करे। हे वरानने! तीन दिनके भीतरही साधकको स्वप्न होता है ॥२७॥ २८ ॥ सिद्ध, साध्य, अरिभाव तथा सुसिद्ध इत्यादि लक्षणोंको अधिष्ठातृ देवता स्वयं प्रकाश कर देता है ॥ २९ ॥ यदि स्वप्न न हो तो प्रयोगको असिद्ध समझे। अनिवारित (नहीं निषेध किया हुआ) साधन जैसा कुछ स्वप्नमें मुखसे श्रवण करे उस कथनके अनुसार फलसिद्धिको विधानपूर्वक मन्त्रमें लिखकर आरंभ करनेसे निश्चय सिद्धिको प्राप्त करेगा इस कारण मैंने बहुतसे यंत्र कहे हैं ॥३०–३२॥ जिन-जिन मंत्रोंसे जिन-जिन मंत्रोंकी सिद्धि कही है उन-उन मंत्रोंको ग्रहण करना चाहिये। निषिद्ध विधिको त्याग देना उचित है, कलियुगमें ऐसी ही यंत्रोंकी विधि प्रसिद्ध है। सिद्ध

पश्यन्ति सिद्धसाध्यादि साधकाः ।। ३४ ।। न तेषां जायते सिद्धिः कलिदोषात्कदाचन । न चैकसाधको लोके नैकप्रकृतिको जनः ।। ३५ ।। न चैकराशिनक्षत्रं न चैका कुल-देवता । यन्त्रं बीजं तथा मन्त्रं चतुर्धा भवति प्रिये ।। ३६ ।। नवैकपञ्चमे सिद्धः साध्यःषड्दशयुग्मके । त्रिसप्तरुद्रे सुसिद्धो वेदाष्टद्वादशो रिपुः ।। ३७ ।। सिद्धसाध्यावरिश्चेति सुसिद्धस्तु तथा परः । सिद्धः सिध्यति कालेन साध्यः सिद्धयति वा न वा ।। ३८ ।। अरिर्निकृन्तते मूलं सुसिद्धस्तत्क्षणार्थदः । तस्माद्दैववशाद्राशिं कालं स्वप्नं महोदयम् ।। ३९ ।। साधकस्य मनोभावं सम्यग् ज्ञात्वा समाचरेत् ।। ४० ।। एतद्रहस्यं परमं समी-

---

साध्य आदि साधकलोग, मंत्रकोष्ठकको देखते हैं ।। ३३ ।। ३४ ।। अतः उनको कलिदोषसे किसी प्रकार सिद्धि नहीं होती, न तो लोकमें एक साधक है और न एक प्रकृतिके मनुष्य हैं, न एक राशि है और न एक नक्षत्र है और न एक कुलदेवता है किन्तु अनेकों हैं ।। ३५ ।। हे प्रिये ! यंत्रबीज तथा मन्त्र चार प्रकारके हैं–सिद्ध, साध्य, अरि और सुसिद्ध ।। ३६ ।। नौ, एक, पाँचमें सिद्ध, छः दश दोमें साध्य, तीन सात ग्यारहमें सुसिद्ध और चार आठ बारहवींमें रिपुसंज्ञक होते हैं । अर्थात् अपनी राशिसे मंत्रकी या यन्त्रराशि यदि नौ, एकपाँचवीं हो तो सिद्ध, छठी दशवीं दूसरीमें साध्य, तीसरी सातवीं ग्यारहवींमें सुसिद्ध कौर चौथी आठवीं बारहवींमें शत्रु होता है ।। ३७ ।। सिद्ध तो कुछ कालमें सिद्ध होता है । साध्य सिद्ध भी होता है और नहीं भी होता, अरि मूलको काटता है सुसिद्ध तत्काल फलको देता है इस कारण राशि काल, स्वप्न, और साधनके मनोगत अभिप्रायको भली प्रकार जानकर क्रिया आरंभ करनी चाहिये ।। ३८–४० ।। मन्त्र-यन्त्रोंकी सिद्धिका देनेवाला यह परम पवित्र रहस्य

रितं मन्त्रस्य यन्त्रस्य च सिद्धिदायकम्। एतद्विदित्वाऽखिल-
सिद्धिभाजनं भवन्तु सर्वे भुवि साधकाः सदा ।। ४१ ।। चिन्ता-
मणौ कल्पवरे सुगोप्ये श्रीचन्द्रचूडस्य नियोगतो हि। यन्त्रा-
दिसाध्याङ्गमयीं हि पीठिकां चकार दामोदर विप्रवर्यः।। ४२ ।।

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणौ प्रत्यक्षसिद्धिप्रदे उमामहेश्वरसंवादे-
द्वितीयपीठिका समाप्ता

अथ वश्याधिकारः

एको देवः स जयति शिवः सर्वदुःखान्तकारी प्रादाच्चक्रं नयनकमलेनार्चितो विष्णुना यः । यः शृङ्गारी गिरीशतनया दत्तदेहार्द्धभागो लोकानां यो हवनविधिकृत्कालकूटं दधार।। १ ।। राज्ञां वश्यकराणि दुष्टपुरुषस्त्रीणां जनानां तथा तान्युद्धृत्य महागमाच्च बहुधा यन्त्राणि बीजानि च। अस्मिन्कल्पवरे क्रमेण

कहा गया, इस रहस्यको जानकर सम्पूर्ण मनुष्य भूमंडलमें सिद्धि-
भावके पात्र होंगे ।। ४१ ।। इस प्रकार शिवजीकी आज्ञाको स्वी-
कारकर दामोदरजी सुगोप्य चिन्तामणि यन्त्रको और यन्त्रादिकों
की सिद्धिको विधान पूर्वक द्वितीय पीठिकामें कहते हैं ।। ४२ ।।

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणौप्रत्यक्षसिद्धिप्रदे उमामहेश्वरसम्वांदे
द्वितीयपीठिका—समाप्ता ।

सम्पूर्ण दुःखोंके नाश करनेवाले, नयनकमलसे पूजित, विष्णु भगवान्को चक्रके देनेवाले, शृङ्गार क्रियामें निपुण, गिरिराजकी पुत्री श्रीपार्वतीजीको अर्द्धाङ्गमें धारण करनेवाले और संसारको हवन करनेवाले कालकूटके पान करलनेवाले श्रीशंकरजीकी जय हो ।।१।। अव नृप, दुष्ट मनुष्य, स्त्री इत्यादिकोंको वश्यकारण यन्त्रों तथा

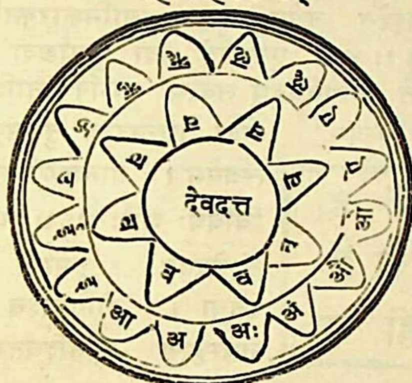
विविधान् गङ्गाधरस्यात्मजो नित्यं सत्यमतिः प्रवक्ष्यति तरां दामोदरः साम्प्रतम् ।। २ ।। श्रीशिव उवाच ।। राजवश्यं महायन्त्रं श्रृणु देवि सुशोभितम् ।। कांस्यभाजनमानीय शुद्धं भस्मादिभिः कृतम् ।। ३ ।। जातीकाष्ठेन विलिखेद्रोचनाचन्दनेन च। साध्यनाम लिखेन्मध्ये वर्तुलं वेष्टयेत्ततः ।। ४ ।। तस्योपरि दलान्यष्टौ वकारांस्तत्र विन्यसेत्। ततस्तद्वेष्टयेत् सम्यग्वर्तुलं पूर्ववत् प्रिये ।। ५ ।। तस्योपरि प्रकुर्वीत पद्मं षोडशपत्रकम्। अकारादिस्वरा लेख्या दले प्रत्येकतः क्रमात् ।। ६ ।। ततस्तद्वेष्टयेत्सम्यग्रेखाभिस्तिसृभिस्ततः । मल्लिकाजातिकुसुमैः सिताम्भोजैः प्रपूजयेत् ।। ७ ।। अन्यैश्च श्वेतकुसुमैः सुगन्धैः श्वेतकर्पटैः। संपूज्य यंत्रराजं तं महा-

---

वीजोंको शास्त्रोंसे उद्धारकर विधिपूर्वक इस चिन्तामणि कल्पमें गंगाधरजीके पुत्र दामोदरजी वर्णन करेंगे ।। २ ।। श्री शिवजी बोले– हे देवि ! राजवश्यकारक महायन्त्रको सुनो, कांसीके पात्रको लाकर भस्म गोमय इत्यादिसे शुद्ध करे ।।३।। फिर जाती वृक्षकी लकड़ी की कलम बनाकर गोरोचन और चन्दनसे लिखे, मध्यमें साध्यके नामको लिखे फिर गोलाकार खींचे उस गोलाकारके ऊपर अष्टदल कमल बनाकर " व " अक्षर उनके भीतर भर देवे, फिर एक और कमल दलके ऊपर गोलाकार चिह्न लिखे ।। ४ ।। ५ ।। उसके ऊपरभी पूर्ववत् सोलह दल कमल बनाये, हरेक कमलको क्रमानुसार अकारादि वर्णोंसे पूर्ण करदे ।। ६ ।। फिर तीन रेखा उस सोलह कमल दलके ऊपर भी खींचे, तत्पश्चात् मालती, चमेली, श्वेत कमल इत्यादि सुगंधित द्रव्योंसे पूजन करे ।। ७ ।। अन्य सुगंधित द्रव्योंसे तथा श्वेत पुष्पोंसे इस यन्त्रकी विधिपूर्वक पूजा करे, क्योंकि

मोहनसंज्ञकम् ॥ ८ ॥ एवं सप्तदिनं कृत्वा त्रिलोहैर्वेष्टयेत्ततः। यो धारयेत्तं शिरसि बाहुमूले गलेऽथवा ॥ ९ ॥ योषिद्वा पुरुषो वाऽपि कृतनिश्चयसंयुतः। किंकरा इव ते सर्वे वशीभूताः सदैव हि ॥ १० ॥

महामोहनयन्त्रम्



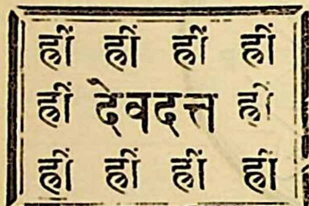
इति श्रीयन्त्रचिन्तामणौ महाकल्पे प्रत्यक्षसिद्धिप्रदे उमामहेश्वरसंवादे तृतीयपीठिकायां वशीकरणाधिकारे दामोदरपण्डितोद्धृते महामोहनं नाम प्रथमं यन्त्रम् ॥ १ ॥

महामोहन नामक यह यन्त्र है ॥ ८ ॥ इस प्रकार सात दिनतक पूजनकर त्रिलोह (सोना, चांदी, तांवा,) में बंदकर अर्थात् त्रिलोह के तावीजमें बंदकरके शिर, वाहुमूल, (दंड) वा गलेमें धारण करे ॥ ९ ॥ विश्वासपूर्वक स्त्री वा पुरुषके धारण करनेसे सब किंकर के समान उसके वशीभूत हो जायेंगे ॥ १० ॥

इति श्रीयंत्रचिन्तामणौ महाकल्पे प्रत्यक्षसिद्धिप्रदे उमामहेश्वरसम्वादे दामोदर पंडितोद्धृते वलदेवप्रसादजी मिश्रकृतभाषाटीकासहिते तृतीयपीठिकायां वशीकरणाधिकारे महामोहनं नाम प्रथमं यंत्रम् ॥ १ ॥

श्रीशिव उवाच-अतः परं प्रवक्ष्यामि यन्त्रं वै बीजसंपुटम् । राजवश्यकरं श्रेष्ठं जनवश्यकरं तथा ॥ १ ॥ एकपंक्तौ समालेख्यं ह्लींकाराणां चतुष्टयम् । ह्लींकारपुटितं पश्चात्साध्यनाम लिखेदधः ॥२॥ अधश्च चतुरो बीजान् ह्लींकारांश्च पुनः स्तथा ॥ रेखाद्वयं चतुष्कोणं भूर्जपत्रे लिखेद्बुधः ॥ ३ ॥ रोचनाकुङ्कुमेनैव श्रीखण्डेन तथैव च। अनामिकारक्तमिश्रं लिखेद्यन्त्रं सुशोभनम् ॥ ४ ॥ एतद्यन्त्रं तदा कुर्याद्यदा क्रुद्धो नराधिपः। वाञ्छते निगडैर्बद्धुं सर्वस्वं वाऽपि नाशितुम् ॥ ५ ॥

बीजसंपुटं यन्त्रम्



तदा तद्यन्त्रराजं तु संपूज्य विधिवत्स्वयम् । नानापुष्पैः सुनैवेद्यैर्गन्धैश्च विविधैः शुभैः ॥६॥ यथाशक्त्या तु संभोज्याः कुमार्यो ब्राह्मणास्तथा । योगिन्यश्च सुवासिन्यो नमस्कृत्य सुनिश्चितम् ॥ ७ ॥

श्री शिवजी बोले–राजाओं तथा लोगोंके वश्यकारक बीजसे संपुटित परमश्रेष्ठ यंत्रको कहता हूं ॥ १ ॥ गोरोचन, केशर, लालचंदन अनामिका (कन उंगलीके छोरेकी उंगली) का रुधिर इनसब द्रव्योंको एकत्रितकर भोजपत्रके ऊपर दो रेखायुक्त चतुष्कोण यंत्र लिख उस यंत्रके बीचमें तीन रेखा कल्पना कर प्रथम पंक्तिमें चार 'ह्लीं' वर्ण लिखे, दूसरी पंक्तिमें ह्लीं कारसे पुटित साध्यके नामको लिखे तत्पश्चात् तृतीय पंक्तिमें फिर चार 'ह्लीं' लिखे अर्थात् १० ह्लींकार वर्ण और एक साध्यका नाम लिखे ॥ २–४ ॥ इस यंत्रको उस समय लिखे, जिस समय राजा अतिक्रुद्ध होकर सम्पूर्ण धनादिक लेनेकी इच्छा करे अथवा कारागार में भेजने की इच्छा करे ॥ ५ ॥ तब अनेक प्रकारके पुष्प नैवेद्य इत्यादि शुभद्रव्योंसे यंत्रराजका पूजन करे ॥ ६ ॥ बाद में कुमारी, ब्राह्मण,

तद्यन्त्रं मुष्टिमावध्य गच्छेद्वै राजमन्दिरम् । तत्कोपं शमयत्याशु वशीकरणमुत्तमम् ।। प्रसादस्तत्क्षणाद्देवि जायते नात्र संशयः ।।८।।

इति यन्त्र० म. क. उ. सं. तृ. पी. व. कोपशमनं वीजसंपुटं नाम द्वितीयं यंत्रम् ।। २ ।।

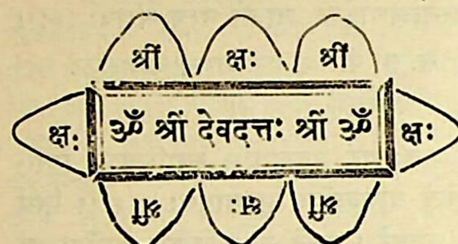
श्रीशिव उवाच ।। अतः परं प्रवक्ष्यामि स्वामिवश्यं मनोहरम् । य इच्छेत्स्वामिनं कर्तुं यावज्जीवं हि मानवः ।। १ ।। तिर्यग्रेखाद्वयं कुर्याद्दीर्घं दक्षिणे चोत्तरे । अन्ते तु कर्णिकां कुर्याद्दाक्षणे चोत्तरे पुनः ।। २ ।। प्रणवं च तथा श्रीं च साध्यनाम तथैव च । तदन्ते श्रीं च प्रणवं लिखेन्मध्ये तु साधकः ।। ३ ।। उपर्यपि दलांस्त्रींश्च अधोभागे त्रयं तथा । दक्षिणोत्तरपूर्वं च

योगिनी, सुवासिनी इनको निश्चय पूर्वक-नमस्कारकर भोजन कराये ।। ७ ।। फिर यंत्रराजको मुठ्ठीमें दबाकर राजभवनमें जानेसे साध्य व्यक्तिका क्रोध तत्क्षण शांत होगा और मन में प्रसन्नता होगी, यह उत्तम वशीकरण है ।। ८ ।।

इति श्रीयंत्रचिन्तामणौ महाकल्पे उमामहेश्वरसंवादे भाषाटीकासहिते तृतीयपीठिकायां वशीकरणाधिकारे कोप शमनं बीजसम्पुटं नाम द्वितीयं यन्त्रम् ।। २ ।।

श्री शिवजी बोले:– अब स्वामी वश्यकारक मनोहर यन्त्र कहता हूं जिसका प्रयोग करनेसे जीवन पर्यन्त स्वामी वश्य होता है ।। १ ।। दक्षिण उत्तर वृद्धि तिरछी दो रेखाकर उनके दक्षिण उत्तर भागमें दो कर्णिका निर्माणकर ऊर्ध्व भाग तथा अधोभागमें साध्य व्यक्तिके नामको लिखे फिर श्रीं और ओंकारको लिखकर कर्णिका तथा वीजके दलके विसर्गसहित क्षकार अक्षर लिखकर बाकी स्थानोंमे

यावज्जीवं स्वामिवश्यकरं यन्त्रम्



दलेषु विलिखेत्क्रमात् ।।४।। क्षकाराः सविसर्गान्ताः कोणे श्रीङ्कारबीजकाः । एवं लिखित्वा तद्यन्त्रं रोचनाभूर्जपत्रके ।।५।। शरावसंपुटे क्षिप्त्वा पुटयेदग्निना ततः । उद्धृत्य स्वाङ्गशीतं च यन्त्रभस्म पिबेन्नरः ।। ६ ।। यावज्जीवं भवेत्तस्य स वश्यो नात्र संशयः । तृतीयं तु समाख्यातं स्वामिवश्यकरं परम् ।। ७ ।।

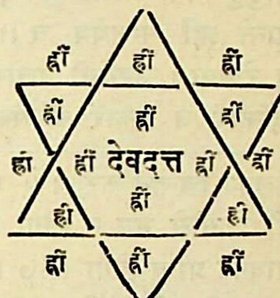
इति श्रीयन्त्रचिन्तामणौ० उमाम० सं० तृतीयपीठिकायां वशीकरणाधिकारे दामोदरपण्डितोद्धृते यावज्जीवं स्वामिवश्यकरं नाम तृतीयं यन्त्रम् ।। ३ ।।

श्रीं इस अक्षरको लिखे ।। २–४ ।। इस प्रकार उक्त यंत्रको गोरोचनसे भोजपत्रपर लिखकर सरय्योंमें बंदकर अग्निमें पुटित करे जब वह ठंडा हो जाय तब उसको खोलकर यंत्रराजकी भस्मको पान करे, इस प्रयोगके करनेसे साध्यव्यक्ति निस्सन्देह जीवनपर्यंत वशीभूत रहता है । यह तीसरा स्वामीको वशमें करनेवाला यंत्र कहा ।। ६–७ ।।

इति श्रीमंत्रचिन्तामणौ महाकल्पे उमामहेश्वरसम्वादे ब० कृ० भाषाटीकासहिते तृतीयपीठिकायां वशीकरणाधिकारे यावज्जीवं स्वामिवश्यकरं नाम तृतीयंत्रम् ।।३।।

श्रीशिव उवाच ।। यदा कस्यापि केनापि कार्यं निर्णाशितं भवेत् । तदा महाभियोगेन दिव्यं कोऽपि प्रकारयेत् ।। १ ।। तदा तन्मोहनार्थाय कुर्याद्दिव्यं विचक्षणः । रोचनाकुङ्कुमेनैव षट्कोणं भूर्जपत्रके ।। २ ।। कोणे कोणे तु ह्लींकारं मध्यदेशे लिखेन्नरः । कोणान्तराले ह्लींकारान्विलिखेत्तु षडेव हि ।। ३ ।। साध्यनाम लिखेन्मध्ये चतुर्ह्लींकार संपुटम् । उपर्यधः पूर्वतोऽन्ते ह्लींकारांश्चतुरो लिखेत् ।। ४ ।। शरावसम्पुटे क्षिप्त्वा पूजयेद्भक्ति भावतः । द्वितीयेऽह्नि तदाकृष्य यन्त्र-राजं सुपूजितम् ।। ५ ।। दिव्यकाले शिखायां तु बद्ध्वा यन्त्रं प्रयत्नतः । मौनस्थश्चिन्तयेत्कालं फलं वेगेन

दिव्यस्तंभनयन्त्रम्



शिवजी बोले—जब कि किसी पुरुषने किसीके कार्यको विनाशित किया हो तब उस पुरुषके मोहनार्थ गोरोचन, कुंकुम इन दो वस्तुओं से भोजपत्रपर षट्कोण दिव्ययंत्र लिखे ।। १ ।। तत्पश्चात् पूर्व और पश्चिम इन दो कोणोंमें ह्लींकाराक्षर लिखे, इनके अन्तरालमें ६ ह्लींकाराक्षर और लिखे एवं आठ ह्लींकार हुए । पुनः षट्कोण यंत्रके भीतरके भागमें ह्लींकाराक्षर संपुटित साध्य मनुष्यके नामाक्षर लिख अन्य चार कोणोंको भी ४ ह्लींकाराक्षरसे वेष्टितकर दिव्य यन्त्रराजको पूर्ण करे । एवं सब १६ ह्लींकाराक्षर हुए ।। २-४ ।। इस प्रकार यंत्रको बनाकर शराव (सरइया) सम्पुटमें रखकर भक्तिभावसे पूजनकर दूसरे दिन शरावमेंसे निकाल कर श्रेष्ठ मुहूर्त्तमें यत्नपूर्वक शिखामें बाँधे फिर मौन हो काल और

मानवः ।। ६ ।। न तदाऽस्य भयं किंचिद्यन्त्रराजप्रसादतः । दिव्यस्तम्भो भवेन्नूनं स लोके साध्यतामियात् ।। ७ ।।

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणौ० दिव्यस्तम्भनं नाम चतुर्थं यन्त्रम् ।।४।

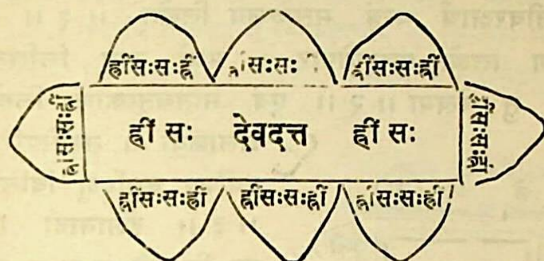
श्रीशिव उवाच ।। यदा कस्योपरि क्रुद्धो राजा वाञ्छति मारितुम् । तदा तन्मोहनार्थाय दुष्टनिग्रहणाय च ।। १ ।। रोचनाकुंकुमेनैव लिखेद्यन्त्रं तु भूर्जके । ह्रीं सश्च साध्यनाम च ह्यन्ते ह्रीं सस्तथैव च ।। २ ।। पश्चात्तद्वेष्टयेत्सम्यक् चतुष्कोणे तु रेखया । उपर्यधो दलांस्त्रींस्त्रीन्कोणे कोणे लिखेद्बुधः ।। ३ ।। ह्रींकारं च सकारं च सकारं ह्रीं तथैव च । एवं दलेषु प्रत्येकं

फलका चिन्तन करे ।। ५ ।। ६ ।। तो इस साधक को किसी समय भी किसीसे भय न होगा किन्तु दिव्यस्तंभन होकर लोकमें साध्य भावको प्राप्त होगा ।। ७ ।।

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणौ महाकल्पे प्रत्यक्षसिद्धिप्रदे उमा-
महेश्वरसम्वादे पं० बलदेवप्रसादमिश्रकृतभाषाटीकासहिते
तृतीयपीठिकायां वशीकरणाधिकारे दिव्यस्तंभनं नाम
चतुर्थं यन्त्रम् ।। ४ ।।

श्रीशिवजी बोले—जब कि, किसी समय किसीके ऊपर राजा क्रुद्ध होकर उसको मारनेकी इच्छा करे तब राजाके मोहन तथा दुष्ट राजानुयायी पुरुषोंके निग्रहके लिए गोरोचन और कुंकुमसे भोजपत्रपर इस प्रकार यन्त्रको लिखे ।। १ ।। कि, चौकोरलम्बी रेखा खींचकर कर्णिका युक्तकर ऊपर नीचेके भागमें तीन दल स्थापितकर ह्रीं सः सः ह्रीं इस प्रकार प्रत्येक दलके भीतर उक्त चार बीजोंको लिखकर रेखाके मध्यभागमें ह्रीं सः इन दो बीजोंसे पुटितकर साध्यव्यक्तिका नामाक्षर लिखे, शरावमें संपुटितकर

राजमोहन, दुष्टमुखस्तम्भनं यन्त्रम्



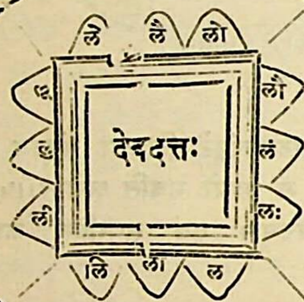
लिखेद्बीज चतुष्टयम् ॥ ४ ॥ शरावसंपुटे क्षिप्त्वा संपूज्य च विधानतः। दुष्टानां च मुखस्तम्भः स वश्यो भवति क्षणात्॥५॥ राजकोपहरं नाम दुष्टमोहनकं परम्। एवं सप्तदिनं कार्यं संसिध्यति न संशयः॥ ६ ॥

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणौ महाकल्पे राजमोहनंदुष्टमुखस्तम्भनं-
नाम पञ्चमयन्त्रम् ॥५॥

पूजन करे तो दुष्टोंका मुखस्तंभन होगा और साध्यव्यक्ति वशीभूत होगा ॥ २–५ ॥ राजकोपका नाशक दुष्टोंका मुखस्तम्भकारक इस यंत्रका सात दिनतक पूजन करनेसे निस्सन्देह कार्य सिद्ध होता है॥ ६ ॥

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणौ महाकल्पे प्रत्यक्षसिद्धिप्रदे उमा-
महेश्वरसम्वादे बलदेवप्रसादमिश्रविरचितभाषा-
टीकासहिते तृतीय पीठिकायां वशीकरणा-
धिकारे राजमोहनं दुष्टमुखस्तम्भनं
नाम पचमं यन्त्रम् ॥ ५ ॥

श्रीशिव उवाच ।। यदा क्रुद्धः प्रभुर्नूनं घातं कर्तुं हि वाञ्छति । तदा स्वजीवरक्षार्थं यन्त्रं मृत्युञ्जयं लिखेत् ।। १ ।। आनीय भूर्जपत्राणि लिखेत् पत्रद्वयोपरि । मध्ये नाम लिखित्वा तु चतुष्कोणं तु रेखया ।। २ ।। एवं सप्तचतुष्कोणं लिखेल्लोह-शलाकया । तस्योपरि दलांस्त्रींश्च चतुर्दिक्षु विलिख्य च ।। ३ ।। ईशानादौ लिखेल्ल ला लि ली लु लू च दक्षिणे । ले लै लो लौ पश्चिमे च लं लः स्यादथ चोत्तरे ।।४।। एवं द्वादशदलेषु प्रत्येकंबीजमेक-कम् । त्रिशूलं च चतुष्कोणे सबिन्दुं विलिखेन्नरः ।। ५ ।। एवं यन्त्रद्वयं लेख्यं संपुटं कार-



महामृत्युञ्जययन्त्रम्

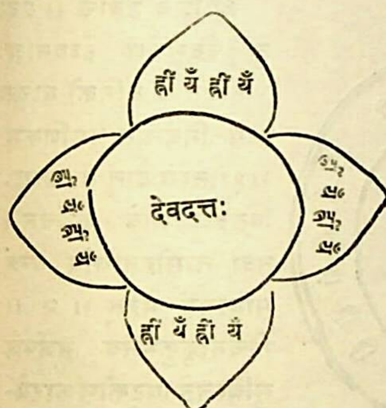
येत्ततः । निक्षिप्य भूमौ तद्यन्त्रं साधकश्चोत्तरामुखः ।। ६ ।। तस्योपरि क्षिपेन्नूनं महतीं च शिलां दृढाम् । पश्चात्तत्संमुखे

श्रीशिवजी बोले जब कि, स्वामी क्रोधित होकर घात करनेकी इच्छा करे तब अपने जीवनकी रक्षाके लिये मृत्युञ्जयनामक यन्त्रको लिखे । भोजपत्रके दो टुकड़ोंके ऊपर पृथक्-पृथक् चतुष्कोण (चौकोर सात रेखावाला चारोंभागमें तीन-तीन कमलदलसे सुशोभित और चारों कोनोंमें त्रिशूल लगाकर लोहेकी कलमसे यंत्रराजको लिखे । तत्पश्चात् उक्त यंत्रके भीतर साध्य मनुष्यके नामके अक्षर लिख ईशान दिशातक ल, ला, लि, ली, लु, लू, ले, लै, लो, लौ, लं, लः इन बारह अक्षरोंको प्रत्येक कोष्ठमें लिखे । इस प्रकार साधक दो यंत्रों-को लिखकर उत्तरकी ओर मुखकर बैठ पृथ्वीमें रक्खी हुई एक

गच्छेत्कोपस्तस्य प्रशाम्यति ।। ७ ।। मृत्युञ्जयं महायन्त्रं प्राणरक्षाकरं परम् । यदा कस्योपरि क्रुद्धः कालोऽपि हि दुरासदः ।।८।। तदापि यन्त्रराजोऽयं रक्षत्येव न संशयः ।। ९ ।।

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणौ० वशीकरणाधिकारे महामृत्युञ्जयं नाम षष्ठं यन्त्रम् ।। ६ ।।

विवादविजययंत्रम् ।



श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि विवादे विजयं नृणाम् । यन्त्रं कुर्यात्प्रयत्नेन सर्वलोकमनोहरम् ।। १ ।। मध्ये नाम लिखित्वा तु वर्तुलं वेष्टयेत्ततः । चतुर्दलं ततः कुर्याद्बीजयुक्तं तु मानवः ।। २ ।। ह्रीं यँ ह्रीं यँ प्रतिदले रोचनाकुंकुमेन च । भूर्जपत्रे समालिख्य पूज-

---

भारी शिलासे दावकर यदि साध्यव्यक्तिके सम्मुख जायगा तो उस साध्यव्यक्ति का क्रोध दूर होगा और मन में प्रसन्नता होगी । कारण कि यह मृत्युञ्जयनामक यंत्र प्राणोंकी रक्षा करनेवाला है, इसका प्रताप एकबार कालके क्रोधको भी शांतकर रक्षा करनेके लिए निस्सन्देह समर्थ होगा ।। १–९ ।।

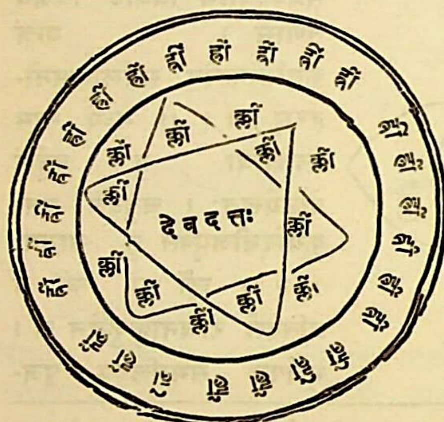
इति दुष्टवश्यकरं महामृत्युञ्जयं षष्ठं यन्त्रम् ।। ६ ।।

श्री शिवजी बोले-अब विवादमें जय देनेवाले इस सर्व मनोहर यन्त्रको विधानपूर्वक निर्माण करे ।। १ ।। निर्माणका विधान-एक गोलाकार चक्रको कुंकुमसे भोजपत्रपर खींचकर चार कमलदलोंसे

येद्भक्तिमान्नरः ।।३।। धूपै र्दीपैः सुनैवेद्यैः पुष्पैर्नानाविधैः शुभैः । त्रिलोहवेष्टितं यन्त्रं दुग्धमध्ये क्षिपेत्ततः ।।४।। ततो गच्छेद्विवादार्थं जयेन्नास्त्यत्र संशयः। विवादविजयं नाम यन्त्रं देवैः प्रपूजितम् ।।५।। न देयं यस्य कस्यापि यदीच्छेत्सिद्धिमात्मनः ।। ६ ।।

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणौ महाकल्पे प्रत्यक्षसिद्धिप्रदे विवादविजयं नाम सप्तमं यन्त्रम् ।। ७ ।।

मायामययन्त्रम् ।



श्रीशिव उवाच ।। यदा तु दैवसूत्रेण द्रव्यनाशः प्रजायते । धनिको याचते द्रव्यं निर्बन्धेनाधमर्णिकम् ।।१।।तस्य दातुं न चेच्छक्तिर्द्रव्याभावे कथंचन । तदा तन्मोहनार्थाय यन्त्रं मायामयं महत् ।। २ ।। रोचनाकुंकुमेनैव भूर्जपत्रे सुविस्तृते ।षट्कोणं कारयेद्यत्नात् साध्यनामसम

युक्तकर बीचमें साध्य व्यक्तिके नामके अक्षर लिखकर ह्रीं, यं इन दो बीजोंको प्रत्येक दलमें लिखे । फिर धूप, दीप, नैवेद्य पुष्पादिकोंसे पूजन कर त्रिलोहमें बंद करके दूधके भीतर डाल मुकदमको जाय तो निस्सन्देह जय होगी । इस विवादकी विजय यन्त्रकी देवताओंने भी पूजा की है । आत्मसिद्धिकी इच्छा करनेवाला साधक इस यन्त्रको गुप्त रक्खे, प्रत्येकको न दे ।। २–६ ।।

इति विवादविजयं नाम सप्तमं यन्त्रम् ।। ७।।

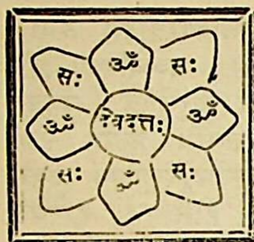
श्रीशिवजी बोले—यदि भाग्यवश व्यवहारमें धनका नाश हो जाय और धनिक वारम्वार धनका तकादा करे, परन्तु द्रव्यके

न्वितम् ॥ ३ ॥ कोणान्तरे बहिर्लेख्यं क्लींकारद्वादशं तथा। ततस्तद्वेष्टयेत्सम्यग्वर्तुलं यन्त्रमुत्तमम् ॥ ४ ॥ पञ्चविंशतिर्ह्रींकारैश्चक्रवत्परिवेष्टयेत् । ततस्तद्वेष्टयेत्सम्यग् वर्तुलेनैव पूर्ववत् ॥ ५ ॥ एवं सप्तदिनं यन्त्रं पूजयेद्विधिना ततः। प्रत्यहं पूजयेद्देवीं महामायां विचक्षणः ॥ ६ ॥ मार्कण्डेयपुराणोक्तं देवीमाहात्म्यमुत्तमम्। जपेत्सप्तदिनं यावत्ततो होमं तु कारयेत् ॥ ७ ॥ अन्ते पूर्णाहुतिं हुत्वा भोजयेत्कन्यकात्रयम् । प्रतिश्लोकं च जुहुयात्पायसं मधुसर्पिषा ॥ ८ ॥ त्रिलोहवेष्टितं कृत्वा बाहुमूले गलेऽथवा ॥ ९ ॥ तेनैवं धृतमात्रेण धनिको वश्यतामियात् । न याचते च तद्द्रव्यं वाणिज्यार्थं ददाति च ॥ १० ॥

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणौ महाकल्पे वश्यकरं नाम मायामयमष्टं यन्त्रम् ॥ ८ ॥

अभावसे अपने पास धन देनेके लिए न हो तो गोरोचन-कुंकुम से भोजपत्रके ऊपर मायामय नाम षट्कोण यन्त्रको लिखकर एक गोलाकार चक्र उस षट्कोणके समीप मिलाकर और दूसरा चक्र कुछ ही अंगुलीके फासलेसे खींचकर उक्त षट्कोणके मध्यमें साध्यव्यक्तिके नामाक्षर लिख कोष्ठ तथा कोष्ठोंके प्रान्तभागमें क्लीं इस बीजको स्थापितकर उक्त दोनों गोलाकार रेखाओंके भीतर २५ ह्रींकार बीजोंको लिखकर चक्रके समान वेष्टित करे । इस प्रकार सात दिनतक विधानपूर्वक यन्त्रका पूजन कर महामाया देवीका पूजन करे और मार्कण्डेयपुराणान्तर्गत देवीमाहात्म्यका सात दिनतक जप करे । तत्पश्चात् खीर, शहत, घृत इन द्रव्योंसे प्रति श्लोकसे आहुति देता हुआ पूर्णाहुति कर तीन कन्याओंको भोजन कराये, यन्त्रको त्रिलोहमें बंदकर बाहु अथवा गलेमें धारण करे तो धनिक वश्य होकर पूर्व दिये धनकी याचनामें विमुख हो व्यवहारके लिये और धन दे सकता है ॥ १–२० ॥

इति धनिकउत्तमर्णवश्यकरं नाम मायामयमष्टमं यंत्रम् ॥८ ॥



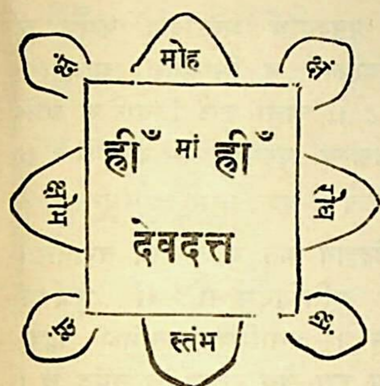
दुष्टमोहनयन्त्रम्

श्रीशिव उवाच ।। यदा राजकुले दुष्टा भवन्ति परिचारकाः । पैशुन्यं कुर्वते नित्यं कार्यघातं प्रकुर्वते ।।१।। तदा कुर्यान्महायन्त्रं दुष्टमोहनसंज्ञकम् । मध्ये नाम लिखित्वा तु वर्तुलं वेष्टयेत्ततः ।।२।। ततश्चाष्टदलं कृत्वा बीजानि विलिखेत्ततः । सकारान् सविसर्गान्तान् कोणे कोणे तु विन्यसेत् ।। ३ ।। प्रणवं मुख्यदिग्लेख्यं चतुर्दिक्षु क्रमेण च । ततस्तद्वेष्टयेत्सम्यक् चतुष्कोणं द्विरेखया ।। ४ ।। खररक्तेन संलेख्यं भूर्जपत्रे मनोहरे । एतद्यन्त्रं सुसंपूज्य प्रक्षिपेद्दुग्धमध्यतः ।।५।। दुष्टा सर्वे विनश्यन्ति राजा मानं ददाति च । एकविंशद्दिनं यावत्तावत्तत्रैव यन्त्रकम् ।।६ ।।

इति श्रीयन्त्रचिन्ताम० उ० म० स० तृतीयपीठिकायां
पिशुनवश्यकरं नाम नवमं यन्त्रम् ।। ९ ।।

श्रीशिवजी बोले– यदि राजकुलमें रहनेवाले पुरुषपिशुन भाव (चुगुलखोरी) को स्वीकार कर नित्यप्रति घात करनेमें उद्यत रहते हों तो उन दुष्टोंको मोहनेके लिए भोजपत्रके ऊपर अपने रुधिर से एक गोलाकार चक्र खींचकर अष्टदलसे विभूषितकर चतुष्कोणकी दो रेखाओंसे युक्तकर चक्रके भीतर साध्यव्यक्तिके नामाक्षर लिख प्रतिकोणमें विसर्ग मिलाकर पूर्वादि चारोंदिशाओंमें प्रणवको लिखे । फिर दुष्ट मोहन संज्ञक इस यन्त्रका विधानपूर्वक पूजनकरके २१ दिनतक दूधमें स्थापित रखनेसे दुष्टोंका मुखमर्दन होगा ।।१–६ ।।

इति श्रीयन्त्रचिंतामणौ महाकल्पे प्रत्यक्षसिद्धिप्रदे उमामहेश्वरसंवादे
तृतीयपीठिकायां वशीकरणाधिकारे पं० वलदेव० भा० टी०
सहिते पिशुनवश्यकरं नाम नवमं यन्त्रम् ।।९।।



व्यवहारविवादजयदं यन्त्रम्

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि विवादे जयवर्द्धनम्। व्यवहारे भयहरमिदं यन्त्रं प्रशस्यते ।। १ ।। पूर्वपंक्तौ समालेख्यं ह्रींमां ह्रीं च तथैव च ।तस्याधःसाध्यनाम स्याच्चतुष्कोणेन वेष्टयेत् ।।२।। कोणे कोणे दलं कुर्यान्मध्यदेशे तथैव च । दक्षिणे रोधबीजं तु नैर्ऋते क्षं तथैव च ।।३।। पश्चिमे स्तम्भबीजं तु वायव्ये क्षं तथैव च। उत्तरे क्षोभबीजं तु ऐशान्ये क्षं तथैव च ।। ४ ।। पूर्वे च मोहबीजं तु आग्नेय्यां क्षं तथैव च। एवं चाष्टदले न्यस्य बीजानि द्वादशैव तु ।। ५ ।। शरावसंपुटे क्षिप्त्वा यन्त्रराजं जयावहम् । अभ्यर्च्य गन्धपुष्पाद्यैर्दीपैश्चाष्टभिरेव च ।। ६ ।। लोकपालांस्तु संपूज्य भोज-

---

श्रीशिवजी बोले–विवाद तथा व्यवहारमें भयनाशक जयके देनेवाले सबमें प्रशंसनीय यन्त्रको कहता हूँ । दो रेखामिश्रित चतुष्कोण यन्त्रको खींचकर उस यन्त्रके चारों कोनोंमें तथा पूर्वादि चारों दिशाओंमें कमलदल स्थापित करे, कुल आठ दल होते हैं । फिर उक्त यंत्रके भीतर तिरछी दो रेखा खींचकर ऊपरकी रेखामें ह्रीं, मां, ह्रीं इन बीजोंको लिख नीचेकी पंक्तिमें साध्यव्यक्तिके नामको लिखे और उक्त दलोंमें वक्ष्यमाण बीजोंको पूर्ण करे । विधान यथा–दक्षिणदलमें रोधबीजको , नैर्ऋत्यकोणमें क्षं बीजको, अग्निकोणमें क्षोभ बीजको, ईशानकोणमें क्षं बीजको, पूर्वदिशामें मोहबीजको, अग्निकोणमें क्षं बीजको लिखे, इस प्रकार जयके

यित्वा कुमारिकाः। बलिदीपैः प्रपूज्याथ अष्टदिक्षु क्रमेण तु ॥ ७ ॥ तावत्पूज्यं प्रयत्नेन यावत्कार्यं च सिध्यति। व्यवहार-जयं नाम विवादविजयं तथा ॥ ८ ॥ राज्ञां कुले विवादे च जये-न्नास्त्यत्र संशयः। मानोन्नतिर्भवेत्तस्य यन्त्रराजप्रसादतः ॥ ९ ॥

इति श्रीयन्त्र०दा०प०व्यवहारे विवादे च जयदं नाम दशमं यन्त्रम् १०

श्रीशिव उवाच ॥ यमिच्छेद्वशगं कर्तुं यावज्जीवं वरानने। तदा यन्त्रं प्रकुर्वीत गाणपत्यं सुसिद्धिदम् ॥ १ ॥ भूर्जपत्रं समानीय विस्तृतं छिद्रवर्जितम्। अनामिकारक्तमिश्रं द्विर-दस्य मदं तथा ॥२॥ यावकस्य रसं चैव रोचनं च तथैव च।

देनेवाले यंत्रका निर्माणकर शरावसंपुटमें रखकर अष्ट गंध धूप दीप नैवेद्यादिसे पूजनकर आठों दिशाओंमें बलिदानादि क्रियाओंको विधिपूर्वक करके इन्द्रादि लोकपालोंका पूजनकर कुमारियोंको भोजन कराये और जबतक कार्य सिद्ध न हो तबतक विधानपूर्वक यन्त्रराजका पूजन करता रहे; तो विवादमें यन्त्रराजके प्रसादसे जयको प्राप्त हो राजकुलमें प्रतिष्ठा और उन्नतिका भागी हो ॥ १-९ ॥

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणौ महाकल्पे प्रत्यक्षसिद्धिप्रदे उमा-महेश्वरसंवादे बलदेवप्रसादजीमिश्रकृतभाषाटीकासहिते व्यवहारे विवादे च जयदं नाम दशमं यंत्रम् ॥१०॥

श्रीशंकरजी बोले—हे वरानने! यदि जीवनपर्यन्त किसी व्यक्ति-को वशमें करनेकी इच्छा हो तो शीघ्र सिद्धिके देनेवाले गणपति यन्त्रका प्रयोग करे ॥ १ ॥ विधान यथा-चौड़े और छिद्ररहित भोज-पत्रके टुकड़ेके ऊपर दो रेखाओंसे मिश्रित चतुष्कोण यन्त्रको अना-मिका रुधिर, हाथीका मद, लाखका रस, गोरोचन, इन सम्पूर्ण

गँ गँ ग ग गँ गँ गँ गँ गँ गँ

ह्लीं ह्लीं ह्लीं ह्लीं ह्लीं ह्लीं ह्लीं

क्रों ह्लीं क्लीं गँ देवदत्तः गँ

क्लीं ह्लीं क्रौं ह्लीं क्लीं क्रों ह्लीं

ह्लीं ह्लीं ह्लीं ह्लीं

गँ गँ गँ गँ गँ गँ ग गँ गँ गँ गँ

गँ गँ गँ गँ गँ गँ गँ गँ गँ गँ गँ

यावज्जीववश्यकरं गाणपत्यं यन्त्रम्

एतच्चतुष्कं संयोज्यजातीकाष्ठेन संलिखेत् ।।३।। ह्लींकाराः सप्त संलेख्याः पूर्वपंक्तौ वरानने। अधः पंक्तौ तु संलेख्यं क्रों ह्लीं क्लीं गँ तथैव च ।।४।। साध्य-नाम तथा गँ च ततः पंक्तौ तृतीयके। क्लीं ह्लीं क्रों च त्रिबी-जानि ह्लीं क्लीं क्रों ह्लीं तथैव च ।। ५ ।। ततः पंक्तौ चतुर्थ्यां च ह्लींकाराणां चतुष्टयम् । एवं संलेख्य बीजानि त्रिविंशति-समूहकम् ।। ६ ।। पश्चात्तद्वेष्टयेत्सम्यक् चतुष्कोणं तु रेखया। गँकारा दश संलेख्याः पूर्वे पश्चिमे उत्तरे ।। ७ ।। प्राङ्मुखास्तु सुसंलेख्या स्त्रिंशत्संख्या गकारकाः । सुक्षेत्रात्तु समानीय मृत्तिकां कृष्णवर्णकाम् ।।८ ।। तया गणपतिं कृत्वा यन्त्रं तस्यो-

---

वस्तुओंको एकत्रितकर जाती वृक्षकी लकड़ीकी कलम बनाकर भोजपत्रके ऊपर दो रेखावाले चतुष्कोण यंत्रको खींचकर उक्त यन्त्रके भीतरके भागमें ४ तिरछी रेखाएं खींचे । फिर प्रथम रेखामें सात ह्लीं बीज और दूसरी रेखामें क्रों, ह्लीं, क्लीं, गँ इन चार बीजों-ो आदिमें लगाय साध्यव्यक्तिके नामाक्षर को लिख अन्तमें एक गँ बीज और लिखे, पुनः तीसरी पंक्तिमें क्लीं, ह्लीं, क्रौं, ह्लीं, क्लीं, क्रों, ह्लीं इन सात बीजोंको स्थापितकर चौथी पंक्तिमें ह्लीं, ह्लीं, ह्लीं ह्लीं इन चार बीजोंको लिख, पूर्व, पश्चिम, उत्तर दिशामें दश-दश गँबीज लिखे, अर्थात् यन्त्रके पूर्वादि भागोंमें लिखे दक्षिणमें नहीं ! तत्पश्चात् पवित्र स्थानसे काली मिट्टी लाकर गणेशजीकी

दरे क्षिपेत् । संपूज्य गन्धपुष्पाद्यैरिमं मन्त्रमुदीरयेत् ।। ९ ।। देवदेव गणाध्यक्ष सुरासुरनमस्कृत । देवदत्तं महावश्यं यावज्जीवं कुरु प्रभो ।। १० ।। इमं मन्त्रं समुच्चार्य हस्तमात्रं निखन्य च । क्षिप्त्वा तत्र गणाध्यक्षं पूरयित्वा तु मृत्तिकाम् ।। ११ ।। यावज्जीवं भवेद्वश्यो गणराजप्रसादतः ।। १२ ।।

इति श्री०वशी०यावज्जीववश्यकरं गाणपत्यं नामैकादशंयन्त्रम् ११

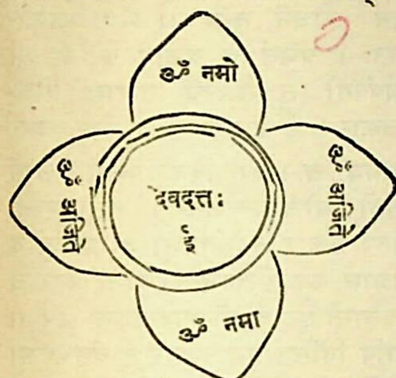
श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि जनवश्यकरं परम् । मध्ये नाम लिखित्वा तु ईंकारं विलिखेदधः ।। १ ।। त्रिरावृत्तं तु संवेष्टय भूर्जपत्रे सुविस्तृते । चतुर्दले लिखेत्पश्चात्पूर्वादौ दिक्चतुष्टये ।। २ ।। ॐ नमो ॐ नमो लेख्यं पश्चिमे पूर्वके दले ।

निर्माणकर उक्त यन्त्र को गणेशजीके उदरमें स्थापितकर गंध पुष्पादिसे पूजनकर "देवदेव गणाध्यक्ष सुरासुरनमस्कृत । देवदत्तं (यहां साध्यव्यक्तिका नामोच्चारण करना योग्य है) महावश्ये यावज्जीवं कुरु प्रभो ।।" इस मंत्रका उच्चारण करता हुआ हांथभर जमीनको खोदकर उसमें गणेशजीकी प्रतिमाको वंदकर ऊपरसे मिट्टी डाल बन्द कर दे । साध्य व्यक्ति गणेशजीके प्रसादसे जीवनपर्यन्त वशमें रहेगा ।। १-१२ ।।

इति यावज्जीववश्यंकरं यंत्रम् ।। ११ ।।

. श्रीशिवजी बोले-प्रिये ! जन वश्यकारक यंत्रको कहता हूं, उसकी विधि सुनो । तीन रेखा युक्त एक गोलाकार चक्रको कपूर, कुंकुम, गोरोचन, कस्तूरी इन सव वस्तुओंके द्वारा भोजपत्रके ऊपर लिख, पूर्वादि चारों दिशाओंको कमल दलसे वेष्टित करे, तत्पश्चात् उक्त यंत्रके मध्यमें साध्यव्यक्तिके नामाक्षरों को लिखकर

यावज्जीवं जनवश्यकरं यन्त्रम्



ॐ अजिते अजिते चैव लिखेद्दक्षिण उत्तरे ॥३॥ राजवश्यकरं नाम यन्त्रराजं मनोहरम् ।त्रिदिनं पूजयेन्नित्यं ब्रह्मचर्यरतो नरः ॥४॥ ब्राह्मणं भोजयेच्चैकं चतुर्थेऽहनि सुप्रभे त्रिलोहवेष्टितं कृत्वा बाहुमूले च धारयेत् ॥५॥हैमं च राजतं चैव ताम्रं चैव विशेषतः ॥ यन्त्रस्य धारणं श्रेष्ठं बाहुमूले गलेऽथवा ॥ ६ ॥ सर्वेषां चैव यन्त्राणां विधिरेष उदाहृतः । सुभगो दर्शनीयश्च स्वजनानां विशेषतः ॥ ७ ॥ यन्त्रस्य धारणाद्देवि स भवेन्नात्र संशयः । कर्पूरकुंकुमाभ्यां च रोचनागरुकेसरैः ॥ ८ ॥ लिखेद्यन्त्रवरं श्रेष्ठं मन्त्रतन्त्रविचिक्षणः ॥ ९॥

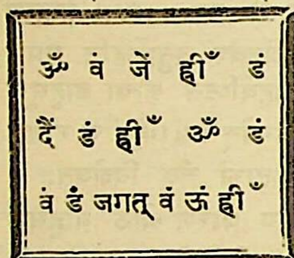
इति श्रीयन्त्रचि० म० प्र० उ० तृ० पी व० दा० यावज्जीवं जनवश्यकरं नाम द्वादश यन्त्रम् ॥ १२॥

नीचे ईन्कार लिखे और पूर्व पश्चिमदलोंमें ओं नमो और दक्षिण-उत्तर दल में ॐ अजिते इनको स्थापित कर ब्रह्मचर्यपूर्वक तीन दिनतक गन्ध पुष्पादिकोंसे पूजन कर चौथे दिन एक ब्राह्मणको भोजन करा प्रातःकालके समय त्रिलोह (सोना, चांदी, तांवा) में वेष्टितकर भुज दण्ड अथवा गलेमें धारण करे तो इस मनोहर राज वश्यकारक यंत्रेश्वरसे प्रतापके स्वबन्धुगणका दर्शनीय तथा अति माननीय होगा ॥१–९ ॥

इति श्रीयंत्रचिन्तामणौ महाकल्पे प्रत्यक्षसिद्धिप्रदे यावज्जीवं जनवश्यकरं नाम द्वादशं यंत्रम् ॥१२॥

श्रीशिव उवाच ।। जगद्वश्यं महायन्त्रं शृणु देवि सुशोभनं । कर्पूरं मृगनाभिश्च चन्दनं रोचनं तथा ।। १ ।। जातीकाष्ठेन संलेख्यं भूर्जपत्रे प्रयत्नतः । प्रणवं च वकारं च जें ह्ली डं तथैव च ।। २ ।। पूर्वपंक्तौ तु संलेख्यं ताराद्यं बीजपञ्चकम् । दैं डं ह्लीं प्रणवं चैव डंकारं च तथैव च ।।३। द्वितीयपंक्तौ संलेख्यं यत्नतो बीजपञ्चकम् । तृतीयपंक्तौ संलेख्यं वंकारं तदनंतरम्।।४।।डंकारं च जगन्नाम वंकारं तदनन्तरम्। ह्लींकारश्च ततश्चान्ते एवं वै बीजपञ्चकम् ।।५ ।। तथापि विलिखेन्नूनं ऊंकारं तु चतुर्थकम्। एवं बीजानि संलेख्य चतुःकोणं तु कारयेत् । ६ ।। द्विरेखया महाकार्यं जगद्वश्यकरं परम् । पूजयेत्त्रिदिनं देवि सुगन्धैः सुमनोहरैः ।। ७ ।। त्रिलोहवेष्टितं कृत्वा धारयेद्बाहुमध्यतः । जगद्वश्यं भवेत्तस्य यन्त्रं यावत्तु तिष्ठति ।। ८ ।। संपूज्य नित्यमेवादौ यन्त्रं देवार्चनादिषु ।। ९ ।। इति श्रीय०चि०म०प्र०उ०तृ०व०दा०जगद्वश्यं त्रयोदशं यन्त्रम्।।१३

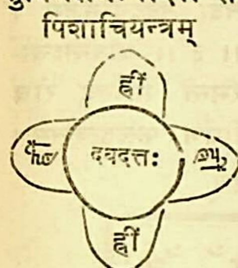
जगद्वश्यकरं यन्त्रम्



श्री शंकरजी बोले–हे देवि ! जगत्के वश्यकारक अतिशोभायमान यंत्रको श्रवण करो । उसका विधान यह है– दो रेखायुक्त एक चौकोर यंत्रको भोजपत्रके ऊपर चमेलीकी लकड़ीकी कलम बनाकर, केशर, कस्तूरी, लालचन्दन, गोरोचनसे लिखकर उक्त यंत्रके भीतर तीन तिरछी रेखा खींचकर पहली रेखामें , वं, जें, ह्लीं, डं; दूसरी रेखामें दैं, डं, ल्हीं, ओं, डं; तीसरी रेखामें वं, डं, जगत् वं, ऊं, ह्लीं बीजोंको लिखे । तत्पश्चात् तीन दिनतक गन्ध पुष्पादिसे पूजनकर त्रिलोहमें बन्दकर भुज दंडमें धारण करे तो जबतक यह यन्त्र बँधा रहेगा तबतक जगत् वश्य रहेगा । परंतु प्रथम देवता आराधनके समय प्रतिदिन नियमपूर्वक यन्त्रका पूजन करना आवश्यक है ।। १–९ ।। इति त्रयोदशं यन्त्रम् ।।१३।।

श्रीशिव उवाच ।। यदा स्वभृत्यः क्रुद्धः सन्मर्म सर्वं प्रकाशते । न शक्यते निराकर्तुं देशकालबलेन च ।। १ ।। तदा तन्मोहनार्थाय स्वकीयार्थस्य सिद्धये । यन्त्रं पिशाचिकानाम कर्तव्यं सुविचक्षणैः ।।२।। साध्यनाम लिखित्वा तु वर्तुलं वेष्टयेत्ततः । चतुर्दलं प्रकर्तव्यं बीजयुक्तं मनोहरम् ।।३।। ह्रीं काराश्चतुरो लेख्या दलमध्ये चतुर्दिशम् । रोचना भूर्जपत्रे तु लेखन्या विलिखेन्नरः ।४ । संपूज्य गन्धपुष्पाद्यैर्धूपैर्नानाविधैरपि । ततस्तद्दभिमध्ये तु क्षिपेद्यन्त्रवरं शुभे ।। ५ ।। स वश्यो जायते नूनं यन्त्रराजप्रसादतः ।। यन्त्रं पिशाचिकं नाम भृत्यवश्यकरं परम् ।। ६ ।। न देयं यस्यकस्यापि स्वयं रुद्रेण भाषितम् ।। ७ ।।

पिशाचियन्त्रम्



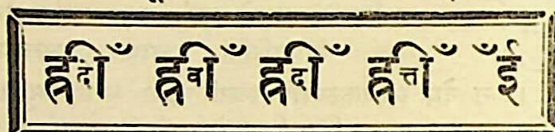
इति यं०चि० भृत्यवश्यकरं पिशाचिसंज्ञं चतुर्दशं यन्त्रम् ।।१४।।

श्रीशिवजी बोले, हे प्रिये ! यदि सेवक क्रुद्ध होकर स्वामी के मर्म को प्रकाशितकर नाश करनेके यत्नमें उद्यत हो और देशकालके वशसे स्वामी उसे किसी प्रकार निषेध भी न कर सके, तब उसके वश्यके लिये एक वर्तुल चक्र भोजपत्रके ऊपर गोरोचनसे खींचकर पूर्वादि चारों दिशाओंमें कमल दलसे युक्तकर चक्रके भीतर सेवकके नामके अक्षरोंको लिखे । पूर्वादि चारों दिशाओंमें ह्रींकार वीजोंको स्थापितकर पिशाचिका नामक यन्त्रको लिखे । फिर गंध पुष्पादिसे उक्त यंत्रका पूजनकर दही के भीतर रख दे तो वह सेवक निश्चय वशीभूत होगा । यह पिशाचिका नामक यंत्र सेवक वश्यका परम सुन्दर यंत्र है । इसको श्रीशंकरने स्वयं प्रकाशित किया है, अतः प्रत्येकको न देना चाहिये । किन्तु अधिकारीको ही देना योग्य है, नहीं तो गुप्त रक्खे १–७

इति श्री य० चि० म० प्रत्यक्षसिद्धिप्रदे उमामहेश्वरसम्वादे तृ० बलदेवप्रसादमिश्रकृत भा०टी– भृत्यवश्यकरं पिशाचिसंज्ञं चतुर्दशं यन्त्रम् ।। १४ ।।

श्रीशिव उवाच।। क्रूरप्रकृतिकः स्वामी यदा संसेव्यते जनैः। सेव्यमानोऽपि हि सदा भवत्येव दुराग्रही ।। १ ।। खलैः परिवृतो नित्यं दुराचारो महीपतिः। उत्तमो वाऽधर्मो वाऽपि म्लेच्छो वा प्रभुतां गतः ।। २ ।। यन्त्रं कालानलं कुर्यात्तदा तद्वश्यसिद्धये । साध्यनामक्षरं लेख्यं ह्रीं कारे गर्भमध्यगम् ।। ३ ।। यावन्तश्चाक्षरा नाम्नि तावंतश्च तथा लिखेत् ।। ईकारमन्ते संलेख्यं रोचनाभूर्जपत्रके ।। ४ ।। त्रिरावर्तं चतुष्कोणं दीर्घेण फलवत्कृतम्।

क्रूरवश्यकरं कालानलंयन्त्रम्



राजिकाप्रतिमां कुर्यात्तत्पादस्य च पांसुना ।। ५ ।। हृन्मध्य प्रक्षिपेत्तस्य यन्त्रं कालानलं महत् । संपूज्य प्रतिमां तां तु

श्रीशिवजी बोले—हे शैलसुते ! यदि दुष्ट पुरुषोंसे युक्त क्रूरप्रकृति स्वामी मनुष्योंके यथायोग्य सेवन करनेपर भी अपने दुराग्रह भावको न छोड़े, सब उसके मोहके लिये गोरोचनसे भोजपत्रके ऊपर तीन रेखासे मिश्रित चतुष्कोण कालानक यंत्रको लिखकर ह्रीं बीजकी रेखाके भीतर साध्यव्यक्तिके नामके अक्षर लिख अन्तमें ई इस बीजको लिखे । परन्तु जितने साध्यव्यक्तिके नामके अक्षर हों उतनेही ह्रीं वर्ण होने चाहियें अर्थात् ह्रीं बीजोंकी कोई मुख्य गणना इस प्रसंगमें नहीं है, इसका उदाहरण यन्त्रमें देखना, तत्पश्चात् वृक्षके नीचेसे धूलि लाकर एक राजिका प्रतिमाको निर्माणकर उस प्रतिमाके हृदय भागमें उक्त कालानक यन्त्रको स्थापितकर गन्धादिसे पूजन करके कृष्ण १४ की रात्रिमें चूल्हेकी कर्वटमें

चुल्लीपार्श्वे निखन्य च । ॥ ६ ॥ पूरयेत्तां प्रयत्नेन चतुर्दश्यां महानिशि । एतत्करणमात्रेण स वश्यो जायते ध्रुवम् ॥ ७ ॥ अजारक्तेन संमिश्रं भक्तं पूपं तथैव च । बलिदानं प्रदातव्यं दिक्पालप्रीतये तदा ॥ ८ ॥ महाकालाय स्वाहेति मन्त्रेण जुहुयात्ततः । एवं क्रमेण संस्कृत्य ततश्चाष्टोत्तरं शतम् ॥ ९ ॥ तदेव भक्तं साज्यं तु रक्तपुष्पैश्च मिश्रितम् । यन्त्रं कालानलं नाम त्रिदशैरपि पूजितम् ॥ १० ॥

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणौ कालानलं नाम पञ्चदशं यन्त्रम्॥ १५ ॥

श्रीशिव उवाच॥ वाणिज्यार्थं तु वाणिज्यं लाभार्थं वाञ्छितं पथि । तेषां मध्ये यदा कोऽपि प्रदुष्टो जायते नरः ॥ १ ॥ मार्गदेशे प्रभुर्वापि तदा यन्त्रं प्रकल्पयेत् । ह्रींकारोदरमध्ये तु साध्यनाम लिखेन्नरः ॥ २ ॥ उपरिष्टाच्चतुर्दिक्षु स्वाहान्तं प्रणवादिकम् । मध्ये आकर्षय लिखेच्चतुर्दिक्षु क्रमेण तु ॥ ३ ॥

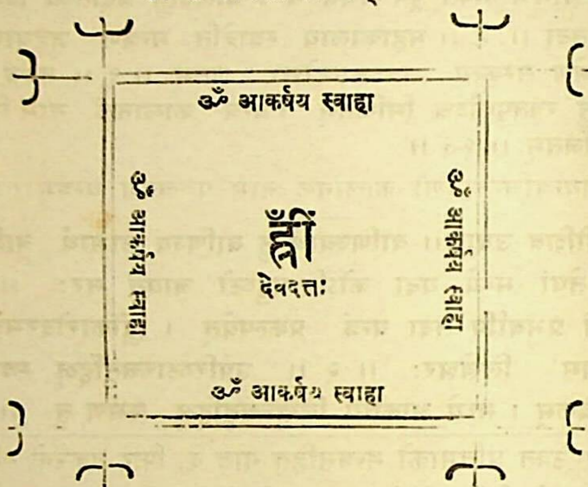
खोदकर उक्त प्रतिमाको मन्त्रसहित गाड़ दे, फिर बकरेके रुधिरसे मिले भातसे दिक्पालोंकी प्रसन्नताके लिये बलिदान करके उक्त पदार्थमें घी लाल फूल मिलाकर 'ओं महाकालाय' इस मन्त्रसे अष्टोत्तरशत आहुति दे, तो देवताओंसे पूजित इस कालानलके प्रयोगसे साध्यमनुष्य निश्चय वशीभूत हो जायगा ॥ १–१० ॥

इति भाषाटीकासहित यन्त्रचिन्तामणिकी तृतीयपीठिका में कालानलनामवाला पन्द्रहवां यन्त्र ॥ १५ ॥

श्रीशिवजी बोले–यदि वाणिज्य व्यवहारके करनेवाले पुरुषों को वाणिज्य मार्गमें प्रभु अथवा अन्य कोई व्यक्ति दुखदाई हो तो उसके वशके लिये स्वरक्त गोरोचनसे भोजपत्रके ऊपर दो रेखावाले चतुष्कोण यन्त्रको लिखकर भीतरके भागमें ह्रीं बीजरेखाके मध्यमें साध्यव्यक्तिके नामको लिखकर पूर्वादि चारों दिशाओंमें 'ओं

पश्चात्तद्वेष्टयेद्यन्त्रं चतुष्कोणं द्विरेखया । कोणे कोणे त्रिशूलौ द्वौ चतुर्दिक्षु प्रकल्पयेत् ॥ ४ ॥ एवं कृत्वा प्रयत्नेन पूजयित्वा

उच्छिष्टपिशाचयन्त्रम्



सुगन्धकैः । स्वरक्तेन तु संमिश्रं रोचनाभूर्जपत्रके ॥ ५ । लिखित्वा खण्डवत्कृत्वा रहसि प्रक्षिपेत्ततः । ओमाकर्षय स्वाहा इमं मन्त्रं जपेत्तदा ॥६॥ तत्क्षणाज्जायते वश्यो महाक्रूरोऽपि मानवः ॥७॥

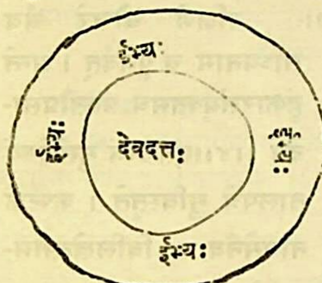
इति य०चि० ना० म०प्र० उ० सं० तृ० पी०व० दामोदरपण्डितोद्धृते दुष्टवशीकरणं उच्छिष्टपिशाचिकं नाम षोडशं यन्त्रम् ॥१६ ॥

आकर्षय स्वाहा ' इसको यन्त्रके भीतरही लिखे कि, जिससे साधकके नामके अक्षर मध्यगत हो जायँ, परन्तु यन्त्रके चारों कोनोंमें दो त्रिशूल भी लिखने योग्य हैं । फिर गन्धादिसे पूजन कर ' ओं आकर्षय स्वाहा' इस मन्त्रको पढ़कर यन्त्रके टुकड़े कर उक्त मार्गमें डालदे तो अति क्रूर प्रकृतिवाला मनुष्य भी उसी समय वशीभूत हो जायगा ॥ १–७ ॥

इति भाषाटीकासहित यन्त्रचिन्तामणिकी तृतीयपीठिकामें उच्छिष्टपिशाचिनामक सोलहवाँ यन्त्र समाप्त ॥ १६ ॥

श्रीशिव उवाच ।। यदा महाबलः शत्रोर्घातं कर्तुं हि वाञ्छति । तदा तत्सानुकूल्यार्थं यन्त्रं कुर्वीत कण्टकम् ।। १ ।। साध्यनाम लिखेन्मध्ये वर्तुलं वेष्टयेत्ततः । ईकारश्च भ्यकारश्च विसर्गान्तश्चतुर्दिशम् ।। २ ।। एकैकं तु लिखित्वा तु वर्तुलं वेष्टयेत्ततः । श्मशानभस्मना लेख्यमर्कपत्रद्वयोपरि ।।३।। संपुटं मेलयित्वा तु वेधयेत्कण्टकैस्ततः । निखन्य पूरयेद्यन्त्रं श्मशाने निशि पूजितम् ।।४ ।। बलिदानं प्रदातव्यं भूतेऽह्नि प्रयतो नरः। तत्क्षणाज्जायते शत्रुः सानुकूलो न संशयः ।।५।। कण्टकाख्यं महायन्त्रं दुष्टमोहनकं परम् । स्वशक्त्या दक्षिणां दद्यात्कालरात्रिः प्रीयतामिति ।। ६ ।।

दुष्टमोहनकरं कण्टकयन्त्रम्



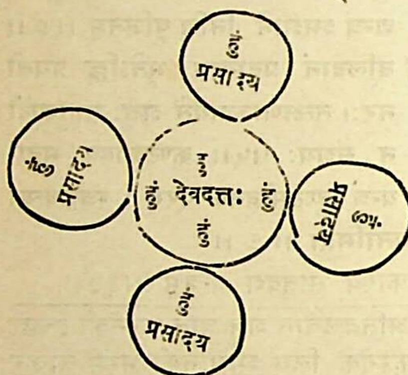
इति दुष्टमोहनकरं कण्टकाख्यं सप्तदशं यन्त्रम् ।।१७।।

श्रीशिवजी बोले—जब कि, अतिबलवान् शत्रु घात करनेकी इच्छा करता हो तो उसको अनुकूल करनेके लिए श्मशानकी भस्म लाकर दो आकके पत्तोंपर पृथक्-पृथक् एक गोलाकार चक्र खींचकर उसके भीतर साध्य व्यक्तिके नामके अक्षर लिख " ईभ्यः " विसर्ग मिश्रित इन दो बीजोंको पूर्वादि चारों दिशाओंमें लिखकर फिर एक गोलाकार चक्र और खींचे कि जिसके खींचनेसे उक्तचक्र मध्यवर्ती हो जाय, तत्पश्चात् दोनों पत्रोंको संपुटमें लेकर काँटोंसे छेदकर कृष्णपक्षकी रात्रिमें पूजन करके श्मशानभूमिमें खोदकर गाड़ दे और भूतादि बलिप्रदान करे तो शत्रु उसी समय वशीभूत हो जायगा, यह दुष्टमोहनकालकंटक नाम यंत्र है, इसका यथायोग्य प्रयोगकर, " हे कालरात्रि ! प्रसन्न हो " इसको उच्चारण कर ब्राह्मणोंको दक्षिणा दे ।।१–६।।

इति यंत्रचिन्ता० तीसरी पीठि० बल० भाषाटीकासहित
दुष्टमोहनकर कण्टक नामवाला सत्रहवाँ यन्त्र ।।१७।।

श्रीशिव उवाच ।। सुहृदो बन्धुवर्गो वा शत्रुर्वा क्रुध्यते यदि तदा तत्कोपशान्त्यर्थं कुर्याद्यन्त्रं विचक्षणः ।। १ ।। मध्ये नाम लिखित्वा तु वर्तुलं वेष्टयेत्ततः । उपर्यधश्चोत्तरे च दक्षिणे च तथैव च ।। २ ।। बिन्दुवर्यं चतुर्दिक्षु वेष्टयित्वा लिखेत्तदा । हुंकारं तु लिखेद्गर्भे बिंदुमध्ये उपर्यधः ।। ३ ।। दक्षिणे चोत्तरे चैव

क्रोधशमनं जामदग्न्ययन्त्रम्



साध्यनाम च पूर्ववत् । अन्ते हुंकारसंयुक्तमधःपंक्तौप्रसादय ।।४।।एतद्यन्त्रं सुसंलेख्यं तालपत्रे सुविस्तृते । कण्टके नायसेनैव विलिखेत्सोमवासरे ।। ५ ।। कुलालमृत्तिकामध्ये यन्त्रं क्षिप्त्वा तु गोलकम् । कृत्वा पूजां प्रयत्नेन यस्मात्कोपः प्रशाम्यति ।। ६ ।। जामदग्न्यं महायन्त्रं सद्यः कोपहरं परम् । अक्रोधनः सत्यवादी जमदग्निदृढव्रतः ।। ७ ।। रामस्य जनकः

शिवजी बोले –मित्र अथवा बंधुवर्ग या शत्रु यदि क्रोधित हो जायँ तो उनके कोपको शान्त करनेके लिये गोरोचनसे ताड़के पत्रपर लोहेके काटोंसे सोमवारके दिन एक गोलाकार चक्र लिखकर पूर्वादि चारों दिशाओंमें कमलदल स्थापित कर उक्त गोलाकार चक्रके भीतर ३ रेखा निर्माण कर पहिली तीसरी रेखामें हुं इस बीजको लिख बीजकी पंक्तिके आदि अंतमें हुंकार मिश्रित अन्तमें अनुस्वार लगाकर साध्य व्यक्तिके नामके अक्षर लिखे और उक्त दलोंमें भी दो-दो रेखा कल्पनाकर प्रथम रेखामें हुं बीजको लिख नीचेकी रेखामें ‘ प्रसादय ’ इन अक्षरोंको लिखे, तत्पश्चात् कुम्हारकी मिट्टीमें

साक्षात्सत्त्वमूर्त्ते नमोऽस्तु ते । एवं मन्त्रं समुच्चार्य पूजयित्वा प्रयत्नतः ॥ ८ ॥ एवं सप्तदिनं कार्यं क्रोधोपहरणं परम् । सप्तमेऽह्नि पूजनीयो ब्राह्मणो वेदपारगः ॥ ९ ॥ नो चेद्दध्योदनं देयं मनुष्याहारपूरितम् ॥ क्रोधस्तु हृदयाद्याति प्रसन्नो जायते क्षणात् ॥१०॥

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणौ क्रोधशमनं जामदग्न्यं नामाष्टादशं यन्त्रम् ॥ १८ ॥

श्रीशिव उवाच ॥ अतः परं देवि तव ब्रवीमि दौर्भाग्यहन्तृणि च कामिनीनाम् । यन्त्राणि सौभाग्यविवर्धनानि सम्मोहनानि प्रियकामुकानाम् ॥ १ ॥ एकपंक्तौ तु संलेख्यं ह्रींकार-

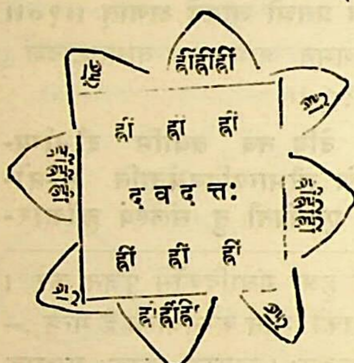
---

यंत्रको रखकर इस मन्त्रको पढ़ता हुआ गंधादिकोंसे पूजन करें । यह जामदग्न्य महायन्त्र तुरन्त कोपको शांत करनेवाला है मन्त्र :– " अक्रोधनः सत्यवादी जमदग्निर्दृढव्रतः । रामस्य जनकः साक्षात् सत्त्वमूर्ते नमोस्तु ते ॥ " इस विधिसे सात दिनतक क्रोधके-नाश करनेवाले जामदग्न्य यन्त्रका पूजनकर वेदके जाननेवाले अतिश्रेष्ठ ब्राह्मणका पूजन कर भोजनादि क्रियाओंसे तृप्त करे अथवा मनुष्य की तृप्तिके योग्य दही चावल देकर ब्रह्मदेवको तृप्त करे तो साध्य व्यक्ति हृदयसे क्रोधको दूरकर प्रसन्न होगा ॥ १–१० ॥

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणिकी तृतीय पीठिकामें बलदेवप्रसादकृत भा० टी० में क्रोधशमन जामदग्न्य नामवाला अठारहवां यन्त्र॥१८॥

श्री शंकरजी बोले–हे देवि ! कामिनी स्त्रियोंके दौर्भाग्यनाशक और सौभाग्यवर्द्धक संमोहन नामक यंत्रको तुमसे कहता हूं । यन्त्रके निर्माणकी क्रिया इस प्रकार है – गोरोचन, कुंकुम, कस्तूरी, लालचन्दन इन चारों वस्तुओंको एकत्रित करके भोजपत्रके ऊपर चतुष्कोण वेष्टित एक चौकोर यन्त्रको लिखकर ईशानादि चारों कोनोंमें

त्रितयं शुभम् । तस्याधस्तात्समालेख्यं नाम वै रमणस्य च ॥ २ ॥ ततस्तृतीयपंक्तौ तु ह्रीँ कारत्रितयं पुनः ।



स्त्रीसौभाग्यकरं ललिता यंत्रम्

ततस्तद्वेष्टयेत्सम्यक् चतुष्कोणं तुरेखया ॥ ३ ॥ ततश्चाष्टदलं कृत्वा बीजन्यासं प्रकल्पयेत् । ह्रींकारत्रितयं लेख्यं चतुर्दिक्षु वरानने ॥ ४ ॥ कोणेकोणे दले न्यस्य ह्रींकारं तु विचक्षणः । रोचनाकुंकुमेनैव मृगनाभिस्तु चन्दनम् ॥ ५ ॥ एकीकृत्य लिखेद्यन्त्रं भूर्जपत्रे सुविस्तृते । त्रयोदश्यां सिते पक्षे साधकश्चोत्तरामुखः ॥ ६ ॥ तद्यन्त्रं पूजयेन्नित्यं रात्रौ रात्रौ वरानने । भोगैर्नाना विधैः पुष्पैर्वस्त्रालंकारभूषणैः ॥ ७ ॥ एवं सप्तदिनं कृत्वा

कमल दल स्थापित करे । पुनः यन्त्रके भीतर तीन रेखा तिरछी लिखकर ऊपर नीचेकी दो रेखाओंमें तीन-तीन ह्रीं बीज स्थापितकर बीचकी रेखाओंमें अनुस्वार युक्त अर्थात् द्वितीयविभक्ति के एक वचनान्त पतिके नामको लिखे, तत्पश्चात् वहिर्भागके चतुष्कोणमें तीन तीन ह्रीं बीज लिखकर उक्त दलोंमें एक-एक ह्रीं वर्ण लिखकर कृष्णपक्षकी त्रयोदशीके दिन रात्रिके समयमें उत्तरकी ओर मुखकरके सात रात्रितक नियम पूर्वक नानाप्रकारके भोग तथा गंधादिकसे तुम्हारी प्रसन्नताके कारण यन्त्रराजका पूजनकर सौभाग्यवती सात स्त्रियोंको भोजन कराये । तत्पश्चात् वक्ष्यमाण मंत्रको उच्चारणकर विसर्जन करे । मंत्रो यथा—"शंकरस्य प्रिये देवि ललिते प्रीयतामिति । रूपं देहि यशो देहि सौभाग्य देहि मे श्रियम् ।

तदन्ते तव तुष्टये । स्त्रियः सौभाग्यसंयुक्ता भोजयेत् सप्त-संख्यया ।। ८ ।। शंकरस्य प्रिये देवि ललिते प्रीयतामिति ।। रूपं देहि यशो देहि सौभाग्यं देहि मे श्रियम् ।। ९ ।। भगवति वाञ्छितं देहि प्रियमायुष्यवर्धनम् । एवं मन्त्रं समुच्चार्य ततश्चाथ विसर्जयेत् ।। १० । तन्द्यन्त्रं धातुनावेष्टय सदा कण्ठे तु धारयेत् । सुभगा रूपसंपन्ना पतिप्रियतमा भवेत् । ललिताख्यं महायन्त्रं स्त्रीणां सौभाग्यकारकम् ।। ११ ।।

श्रीय० सौभाग्यकरं ललिताख्यमेकोनविंशं यन्त्रम् ।। १९ ।।

श्रीशिव उवाच ।। शृणु देवि प्रसन्नेन यन्त्रं भर्तृप्रसादनम् । संलिख्याथ प्रियं नाम सांकारपुटितं शुभम् ।। १ ।। अधोपरि तथा लेख्यं सांकारद्वितयं शुभम् । ततस्तद्वेष्टयेत्सम्यग् वर्तुलं रेखयैकया ।। २ ।। तस्योपरि दलान्यष्टौ ह्रींकारसहिताँल्लिखेत् । रोचनाकुंकुमेनैव भूर्जपत्रे लिखेन्नरः ।। ३ ।। त्रिदिनं पूजयेन्नित्यं

भगवति वाञ्छितं देहि प्रियमायुष्यवर्धनम् ।।" फिर यंत्रको धातुके बने तावीजमें बन्द करके जो स्त्री कंठमें धारण करेगी वह यन्त्रराजके स्थित रहनेतक सौभाग्य तथा रूपादिसे युक्त प्रीतमको अत्यन्त प्यारी होगी। यह ललिताख्य यन्त्र स्त्रियोंको अधिक सौभाग्यका देनेवाला है ।। १–११ ।।

इति यत्र० ललितानाम सौभाग्यदायक उन्नीसवां यन्त्र ।।१९।।

श्रीशिवजी बोले—हे देवि ! प्रसन्न मन होकर पतिवश्य-कारक यन्त्रको सुनो ! गोलाकार एक चक्रको गोरोचरनसे भोज-पत्रके ऊपर खींचकर अष्टदलसे वेष्टित कर उक्त गोलाकार यन्त्रके भीतर पूर्वादि चारों भागोंमें सांबीजको लिखकर अनुस्वार युक्त साध्यव्यक्तिके नाम को लिखे और उक्त आठ दलोंमें ह्रीं बीजोंको लिख तीन रात्रितक यन्त्रका गन्धादिसे पूजन करे, चौथे दिन विधान-

रात्रौ रात्रौ तु पूर्ववत् । ततःस्नात्वा चतुर्थेऽह्नि पूजयेत्सुभगा त्रयम् ॥ ४ ॥ अनङ्गवल्लभे देवि त्वं च मे प्रीयतामिति ।

स्त्रीसौभाग्यकरं यंत्रम्



एनं प्रियं महावश्यं कुरु त्वं स्मरवल्लभे ॥ ५ ॥ एतन्मन्त्रं समुच्चार्य पूजयित्वा तु ताः स्त्रियः । तद्यन्त्रं धातुनाऽऽवेष्टच कृत्वा कण्ठे प्रधारयेत् ॥ ६ ॥ पतिर्दासो भवेत्तस्या यन्त्रराजप्रसादतः । सौभाग्यमतुलं तस्या जायते नात्र संशयः ॥ ७ ॥ न सपत्नीं गणयति सौभाग्यमदर्दर्पिताम् । एका सुवासिनी भोज्या चतुर्दश्यां सितेतरे ॥८॥ पक्षे पक्षे रतिप्रीत्यै पूज्यं यन्त्रं तु नित्यशः । यासां तासां न दातव्यं यन्त्रं सौभाग्यवर्धनम् ॥ ९ ॥

इति यं० स्त्रीसौभाग्यकरं विंशतितमं यन्त्रम् ॥२०॥

पूर्वक तीन सौभाग्यवती स्त्रियों को पूजितकर वक्ष्यमाण मन्त्रका उच्चारण करे । मन्त्र यथा—"अङ्गवल्लभे देवि त्वं च मे प्रीयतामिति, एनं प्रियं महावश्यं कुरु त्वं स्मरवल्लभे ॥" इस प्रकार यन्त्रका पूजन कर धातुवेष्टित कर कंठमें धारण करे तो पति दासके समान हो जायगा और यन्त्रराजके प्रतापसे उसका प्रताप अतुल होगा, उपरोक्त क्रियाओंके करनेपर भी पति सौभाग्य मदसे दर्पित स्त्रीको कुछ न समझे तो शुक्लपक्षकी प्रति चतुर्दशीमें रतिकी प्रीतिके लिये एक सौभाग्यवती स्त्रीको भोजन कराकर पुनः यन्त्रराजका पूजन करे, यह सौभाग्यवर्द्धकयंत्र अधिकारीको ही दे ॥ १–९॥

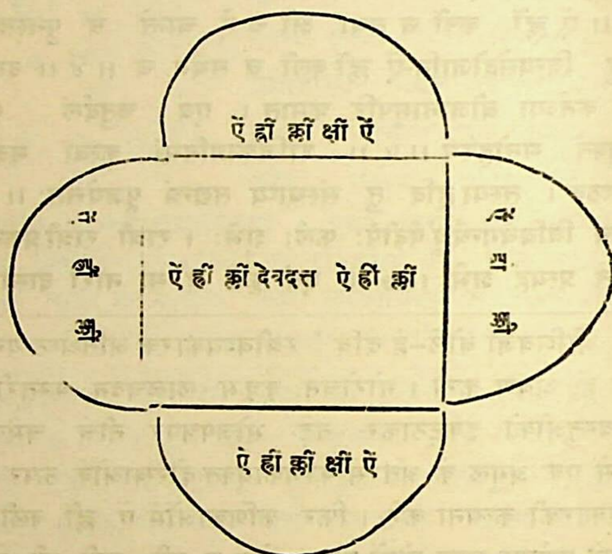
इति श्रीयन्त्रचिन्तामणिकी पं० बलदेवप्रसादमिश्रकृतभाषाटीकायुत तीसरी पीठिकामें स्त्रीसौभाग्यकारकनामवाला बीसवां यन्त्र ॥२०॥

श्रीशिव उवाच ।। योषिद्वश्यं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभनम् । रोचनाकुंकुमेनैव श्रीखण्डमृगनाभिना ।। १ ।। भूर्ज पत्रे तु संलेख्यं जातीकाष्ठेन यन्त्रकम् । ऐं ह्रीं क्लीं च ततो नाम ऐं ह्रीं क्लीं च पुनस्तथा ।। २ ।। एवं संपुटितं कृत्वा चतुष्कोणं तु वेष्टयेत् । उपर्यधोऽपि विलिखेत्पञ्च बीजानि यत्नतः ।। ३ ।। ऐं ह्रीं क्लीं च तथा क्षीं च ऐं चान्ते च पुनस्तथा । कोणेषु विन्यसेद्बीजानि-ऐं ह्रीं क्लीं च तथैव च ।। ४ ।। दलाकृतिस्तु कर्तव्या बीजानामुपरि क्रमात् । एवं चतुर्दलं कृत्वा बीजमुक्तं मनोहरम् ।। ५ ।। राजिकाप्रतिमां कृत्वा मदनस्य तु काष्ठके । तस्या हृदि तु संस्थाप्य तद्यन्त्रं पूजयेत्ततः ।। ६ ।। भोगैश्च विविधैर्गन्धैर्धूपैदीपैः फलैः शुभैः । रात्रौ रात्रौ प्रकर्तव्या दिनान्ते प्रत्यहं शुभे ।। ७ ।। एवं कृते च सा नारी दासी नूनं

श्रीशिवजी बोले—हे देवि ! स्त्रीवश्यकारक अतिश्रेष्ठ यन्त्रको कहता हूँ, श्रवण करो । गोरोचन, कुंकुम, लालचंदन, कस्तूरी इन सब वस्तुओंको इकट्ठाकर बड़े भोजपत्रपर नीचे चमेलीकी कलमसे एक अंगुल के अंतरसे कर्णिकायुक्त दोरेखाओंके ऊपर नीचे दो आकारकी कल्पना करे । फिर कर्णिकाओंमें ऐं, ह्रीं, क्लीं, इन बीजोंको पूर्णकर उक्त दोनों दलाकारोंमें ए, ह्रीं, क्लीं, क्षीं, ऐं इन बीजोंको लिखकर रेखाओंके भीतर ऐं, ह्रीं, क्लीं, इन बीजोंको आदि अंतमें लगाकर अनुस्वारयुक्त साध्यव्यक्तिके नामको लिखे । तत्पश्चात् काष्ठके ऊपर (राजिका) राईसे कामदेवकी प्रतिमाको निर्माणकर उक्त यंत्रको हृदयपर स्थापितकर, गंध, पुष्प, धूप, दीप, फल, नैवेद्य आदि शुभ वस्तुओंसे सायंकालके समय सिद्धिपर्यंन्त प्रत्येक रात्रिमें वक्ष्यमाण मन्त्रको उच्चारणकर कामदेवका पूजन करे तो वह नारी दासीके समान हो जायगी । मंत्र यथा—"कामो-

प्रजायते। यन्त्रं श्रीकामराजाख्यंयोषिद्वश्यकरं परम् ।। ८ ।। संपूज्यो मदनश्चात्र राजिकाप्रतिमोदरे । कामोऽनङ्गः पुष्पशरः कन्दर्पो मीनकेतनः ।।९।।श्रीविष्णुतनयो देवः प्रसन्नो भव मे प्रभो ।। इति पूजनमन्त्रः ।। एवं नित्यं प्रकर्तव्यं यावत्सा वश्यतामियात् ।। १० ।।

स्त्रीवश्यकरं कामराजयन्त्रम्



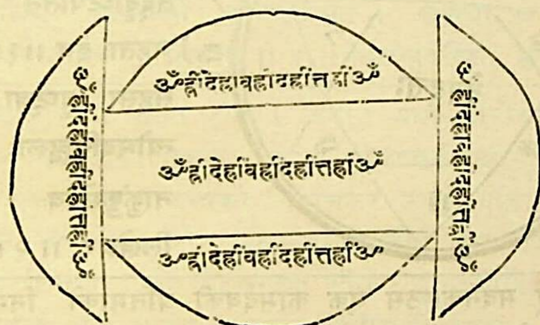
इति श्रीयन्त्रचि० ना० म० प्र० उ० तृ० व० दा० स्त्रीवश्यकरं कामराजाख्यमेकविंशं यन्त्रम् ।। २१ ।।

ऽनङ्गः पुष्पशरः कन्दर्पो मीनकेतनः। श्रीविष्णुतनयो देवः प्रसन्नो भव मे प्रभो।" यह काम राजाख्य मंत्र स्त्रियोंके वश्यकारक है, इसके उपरान्त राईकी वनी प्रतिमाके उदरमें कामदेवका पूजन करे ।। १–१० ।।

इति यन्त्रचिन्तामणिकी तीसरी पीठिकाकी भाषाटीकामें स्त्रीवश्यकारक कामराजनामवाला इक्कीसवां यन्त्र ।। २१।।

श्रीशिव उवाच ।। शृणु देवि प्रवक्ष्यामि मानिनीमानमर्दनम् । यन्त्रं सुदुर्लभं लोके विख्यातं मानमर्दनम् ।। १ ।। तुरगस्य तु रक्तेन रोचना भूर्जपत्रके । प्रणवं च ततो ह्लीं च साध्यनामाक्षरं पृथक् ।। २ ।। नामाक्षराणि ह्लींकारपुटितानि विचक्षणः । आद्यन्ते प्रणवं लेख्यमेकपंक्तौ विचक्षणैः ।। ३ ।। ततस्तद्वेष्टयेत्सम्यक् चतुष्कोणं तु रेखया । उपर्यधश्च संलेख्यं पूर्ववद्बीजसंपुटम् ।। ४ ।। तिर्यग्भागे द्विभागे तु पूर्ववन्नाम सम्पुटम् । कोणे दलाकृतिं कुर्यान्मदनाकृति मध्यतः ।। ५ ।।

स्त्रीवश्यकरं मदनमर्दनयन्त्रम्



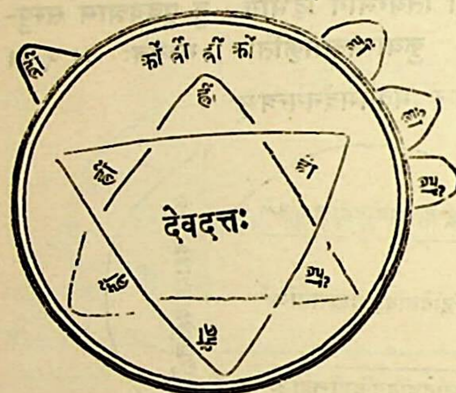
एवं यन्त्रं सुसंलेख्यं मदनप्रतिमां शुभाम् । मदनस्य तु काष्ठेन

श्री शिवजी बोले—हे देवि ! सुदुर्लभ लोकप्रसिद्ध मानिनी स्त्रियोंके मानमर्दन करनेवाले यन्त्रको कहता हूँ, सुनो । घोडेके रुधिरसे भोजपत्रके ऊपर मदनकाष्ठकी कलमसे एक अंगुलके अन्तरसे दो तिरछी रेखा खींचकर उनके आदि अन्तमें कमलदल आकार वनाकर उक्त रेखाओंके ऊपर नीचेके दोनों भागोंमें कुछ गोलाई युक्त दो रेखा खींचे । फिर "ओं ह्लीं देह्लीं वह्लीं दह्लीं त्तह्लीं ओं" इन ग्यारह बीजोंको प्रत्येक कोष्ठमें स्थापितकर यन्त्रको पूर्ण करे ।

कृत्वा हृदि विनिक्षिपेत् ।। ६ ।। सरन्ध्रं हृदयं कुर्याद्यथा यन्त्रं सुतिष्ठति । संवेष्ट्य प्रक्षिपेन्नूनं यन्त्रं यस्योपरि स्फुटम् ।। ७ ।। रक्तचन्दनमाल्याद्यैः पूजयेत्प्रत्यहं तु तत् । एकविंशद्दिनं यावत्सा तस्य वशतामियात् ।। ८ ।।

इति यं० चि० स्त्रीवशीकरं मदनमर्दनं नाम द्वाविंशं यन्त्रम् ।।२२।।

कामाक्षं यन्त्रम्



श्रीशिव उवाच ।। अतः परं प्रवक्ष्यामि राजस्त्रीवश्यकारकम् । यथा तद्दृष्टिपातेन कामबाणहता इव ।।१।। पतन्ति सहसा दृष्ट्वा मानिन्योमदविह्वलाः । रोचनाकुंकुमेनैव भूर्जपत्रे लिखेन्नरः ।। २ ।। कर्पूरेण

तत्पश्चात् मदनकाष्ठसे एक कामदेवकी प्रतिमाको निर्माण करे कि, जिसके हृदयमें एक ऐसा छिद्र हो कि, जिसमें उक्त यन्त्र, सुभीतेके साथ प्रविष्ट होसके, फिर लालचंदन माला आदि वस्तुओंसे पूजनकर यन्त्रेश्वरको उक्तप्रतिमाके हृदयमें स्थापितकर इक्कीस दिनतक पूजन करे तो साध्या वशमें हो जायगी ।। १–८ ।।

इति यन्त्रचिन्तामणिकी तीसरी पीठिकामें स्त्रीवशीकरण मदनमर्दन नामवाला बाईसवां यन्त्र ।। २२ ।।

श्रीशिवजी बोले–अब राजस्त्रीवश्यकारक यन्त्रको कहता हूँ–, जिसके दर्शनमात्रसे कामबाणसे आहत होकर मानिनी स्त्रियाँ

समायुक्तं जातीकाष्ठेनयत्नतः । षट्कोणस्य तु मध्ये तु साध्यनाम-प्रतिष्ठितम् ।। ३ ।। क्रोंकारं सर्वतो लेख्यं कोणोपरि प्रयत्नतः । पूर्वकोणान्तराले तु ह्लींकारद्वितयं लिखेत् ।।४।। कोणमध्ये लिखेच्चैकं ह्लींकारं पूर्वसंमितम् । तत्सर्वं वेष्टयेत्पश्चाद्वर्तुलं रेखया शुभम् ।।५ ।। दक्षिणे त्रिदलं कुर्यादीशान्येऽपि दलं तथा । ह्लींकारं दलमध्ये तु क्रमेण प्रविलेखयेत् ।। ६ ।। एवं विलिख्य तद्यन्त्रं पूजयेद् भक्तिभावतः । गन्धपुष्पैः सुनैवेद्यैः शुक्लाम्बरधरः स्वयम् ।। ७ ।। चिन्तयेत्तां स्त्रियं रात्रौ यन्त्रस्य पुरतः स्थितः । एवं सप्तदिनं कृत्वा तदन्ते ब्राह्मणाः स्त्रियः ।। ८ ।। संभोज्या विविधैर्भोज्यैः कामाक्षी प्रीयतामिति । शक्त्या च दक्षिणां दद्याद्भोजयेत्साधकः स्त्रियम् ।। ९ ।। त्रिलोहवेष्टितं कृत्वा बाहु-

---

मदसे व्याकुल हो पतित होंगी । विधान यथा—गोरोचन, कुंकुम, कपूर इन वस्तुओंको एकत्रित करके भोजपत्रके ऊपर चमेली की कलमसे एक षट्कोण यन्त्रको निर्माणकर उसके बहिर्भागमें एक गोलाकार चक्र खींच और दक्षिणभागमें तीन और ईशानभागमें एक दल लिखकर उक्त षट्कोणके भीतर साध्यव्यक्तिके नामके अक्षर लिख कर प्रत्येक कोणमें ह्लींबीजको लिखे । तत्पश्चात् पूर्वकोणमें क्रोंबीजको लिख, दो ह्लीं बीजोंको लिखे और पाँचों कोणोंमें सिर्फ एक क्रों बीजको लिख उक्त दलोंमें एक-एक ह्लीं बीज लिखे । पुनः भक्तिभावसे गंध पुष्प नैवेद्यादि पदार्थोंसे यन्त्रका पूजन कर श्वेतवस्त्रको धारणकर उक्त यन्त्रको सम्मुख रखकर रात्रिके समय साध्यस्त्रीका चिन्तन करे, इस प्रकार सात दिनतक पूजनादि क्रियाओंको करके शक्तिके अनुसार ब्राह्मणोंकी स्त्रियोंको विविधप्रकारके भोज्य पदार्थोंसे भोजन कराकर यथाशक्ति दक्षिणा देकर कहे कि "कामाक्षी प्रीयताम्" । फिर त्रिलोहके ताबीज में

मूले तु धारयेत्। तं दृष्टा राजपत्न्यश्च कन्दर्पज्वरपीडिताः। स्वयं संप्रार्थयेयुर्वै का कथेतरयोषिताम् ॥ १० ॥

इतिश्रीय० चि० राजस्त्रीवश्यकरं कामाक्षं नाम त्रयोविशं यन्त्रम्।२३

श्रीशिव उवाच ॥ अतः परं प्रवक्ष्यामि बीजमेकं महा-फलम्। सततं धारयेन्नित्यं स्त्रीणां प्रियतरो भवेत् ॥ १ ॥ स्त्री चेद्धारयते नित्यं सा सौभाग्यवती भवेत्। सौभाग्यजननं बीजं नृणां चैव विशेषतः ॥ १ ॥ एतद्बीजाक्षरं गोप्यं न देयं यस्य कस्यचित् ।सकारं च हकारं च ककारं च तथैव च ॥ ३ ॥ लकारं च डकारं च ईकारान्तं प्रतिष्ठितम्। एवं क्रमेण संयोज्य अक्षराणां च षट्ककम् ॥ ४ ॥ ईकारस्वरसंयुक्तं

वंदकरके भुजामें धारण करनेवाले साधकको देखकर कामज्वरसे पीड़ित हुई राजस्त्रियां स्वयं प्रार्थना करेंगी, अन्यस्त्रियोंकी तो वात ही क्या है ॥ १–१० ॥

इति यन्त्रचिन्तामणिकी तीसरी पीठिकामें राजस्त्रीवश्यकारक कामाक्षनामक तेईसवां यन्त्र ॥ २३ ॥

श्रीशिवजी बोले –हे प्रिये ! अत्यन्त फलदायक एक बीजको कहता हूँ कि, जिसके नित्य प्रति धारण करनेसे साधक स्त्रियोंको अत्यन्त प्यारा होगा। विधान यथा–जलमिश्रित गोरोचनसे भोज-पत्रके ऊपर तीन रेखा युक्त एक अर्द्ध चन्द्राकार लिखकर, सकार, हकार, ककार, लकार, डकार, ईकार, इन छः अक्षरोंको ईकारमें गर्भितकर उक्त अर्द्ध–चन्द्राकारके वीचमें स्थापित करे। तत्पश्चात् गन्ध पुष्पादिकोंसे पूजनकर सुवर्णमें लपेटकर पुरुष भुजामें और स्त्री गलेमें धारण करे। सौभाग्यका देनेवाला अत्यन्त पवित्र

बिन्दुना परिशोभितम् । रोचनानीरयुक्तेन विजययन्त्रम्,
भूर्जपत्रे लिखेन्नरः ॥ ५ ॥ त्रिदिनं पूजनं
कृत्वा हेम्ना वै वेष्टयेत्ततः । पुरुषो
बाहुमूले वा नारी चेद्गलके पुनः ॥ ६ ॥ धारये-
द्बीजराजं तु स्फुटं दौर्भाग्यनाशनम् । महा-
सौभाग्यजननं श्रीशिवेन प्रतिष्ठितम् ॥ ७ ॥

ह्लीं
क
ल
ड
ई

इति यन्त्रचि० ना० म० प्र० उ० तृ० व० दा० सौभाग्य-
जननविजयं नाम चतुर्विशं यन्त्रम् ॥ २४ ॥

श्रीशिव उवाच ॥ अतः परं प्रवक्ष्यामि यन्त्रं सौभाग्यदा-
यकम् । स्त्रीणामेव समुद्दिष्टं यन्त्रं कमलसंज्ञकम् ॥ १ ॥ तस्य
संधारणाद्देवि वन्ध्या गर्भवती भवेत् । मृतवत्सा तु या नारी

इस बीजराज को गुप्त भावसे रखना चाहिये, हरेकको नही देना चाहिये, क्योंकि, उक्त यन्त्रराज शिव प्रतिष्ठित होनेसे शीघ्र दौर्भाग्यनाशक और सौभाग्यजनक भावको धारण करनेवाला है ॥ १–७ ॥

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणिकी तीसरी पीठिकामें सौभाग्यजनन-
विजय नामवाला चौबीसवां यन्त्र ॥ २४ ॥

श्रीशिवजी बोले–अब सौभाग्यके देनेवाले यन्त्रको कहता हूँ–कमल संज्ञक यन्त्रका स्त्रियोंके लिये प्रयोग करना योग्य है। विधान यथा-गोरोचनसे भोजपत्रके ऊपर एक गोलाकार चक्र खींचकर वहिर्भाग अष्टदलोंसे सुशोभितकर उक्त गोलाकारके भीतर तीन रेखा कल्पनाकर ऊपर नीचेकी रेखाओंमें क्रों और मध्य की रेखामें ओं ह्लीं इन दो बीजोंको आदिमें मिश्रितकर

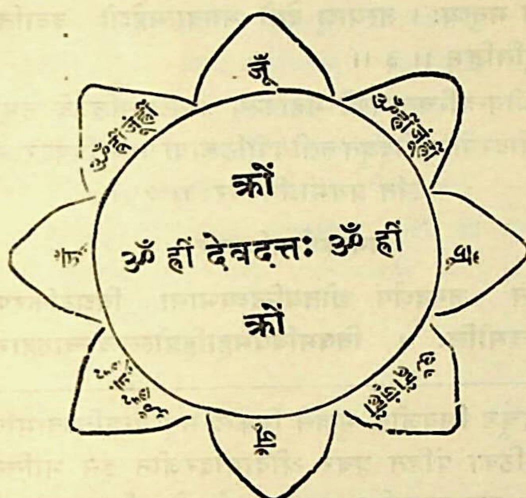
सा लभेत्पुत्रमुत्तमम् ।। २ ।। धृत्वा तु जायते देवि जीवत्पुत्रा न संशयः । रोचनाकुंकुमेनैव भूर्जपत्रे लिखेन्नरः ।। ३ ।। प्रणवं-तु लिखेत्पूर्वं ह्लींकारन्तदनन्तरम् । रमणस्य ततो नाम ह्लींकारान्तं प्रतिष्ठितम् ।। ४ ।। उपर्यधोऽपि विलिखेत्क्रोंकारमेककं तथा । ततस्तद्वेष्टयेत्सर्वं वर्तुलं रेखयैकया ।। ५ ।। तस्योपरि-दलान्यष्टौ बीजाक्षरयुतानि च । जूँकारंच चतुर्दिक्षु दलमध्ये तु विन्यसेत् ।। ६ ।। ॐकारं च तथा ह्लीं च जूँकारं च तथैव च । ह्रींकारं च पुनर्लेख्यमेवं बीजचतुष्टयम् ।। ७ ।। कोणे कोणे दले लेख्यं मध्यदेशे तु साधकः । एवं यन्त्रं सुसंलेख्यं पूजयेत्तु दिनत्रयम् ।। ८ ।। भोजयेन्मिथुनं चैकं लोकेशः प्रीयतामिति । पश्चात्तं तन्तुनाऽऽवेष्टच त्रिलोहेन विशेषतः ।। ९ ।। वर्तुलं मणि-वत्कृत्वा हारमध्ये तु धारयेत् । धारणाज्जायते देवि सौभाग्य-मतुलं महत् ।। १० ।। पुत्रं च लभते नूनं वन्ध्यात्वं च प्रशा-

---

साध्यव्यक्ति अर्थात् पतिके नामके अक्षर लिखकर फिर अन्तमें सिर्फ ह्लीं बीजको लिखे। पूर्वादि चारों दिशाओं में जूंबीजको लिखकर ओं, ह्लीं, जूं, ह्लीं इन चार बीजोंको ईशानादि चारों कोनोंमें स्थापित करे। तत्पश्चात् गन्ध, पुष्प, तांबूल, नैवेद्यादि पदार्थोंसे तीन दिनतक पूजनकर, 'हे लोकेश! प्रीयताम्' इस वाक्यको उच्चारणकर एक स्त्री-पुरुष को भोजन कराये। फिर कच्चेडोरेसे लपेटकर उक्त यन्त्रेश्वर को त्रिलोहमें बन्दकर धारण करे, तो हे देवि! अतुल अतिश्रेष्ठ सौभाग्य प्राप्त होगा। इसका और भी प्रताप है कि, इसके धारण करनेसे वन्ध्या स्त्री भी गर्भवती होकर उत्तम पुत्रको प्राप्तकर वंध्यात्व रहित हो जाय और मृतवत्सा उत्तम पुत्रको प्राप्त हो इसमें किंचित् भी सदेह नहीं। हारमें मिलाकर धारण करे तो भी उक्त फल प्राप्त होसकता है, इस कमलाख्य महा-

ष्यति । कमलाख्यं महायन्त्रं सृष्टं तु ब्रह्मणा पुरा । न देयं यस्य कस्यापि साधकेन वरानने ।। ११ ।।

कमलाख्ययन्त्रम्



इति श्रीयन्त्र० सौभाग्यजननं कमलाख्य नाम पञ्चविंशं यंत्रम् ।। २५।

स्वप्नेन संप्राप्य सदाशिवाच्च दामोदरोऽत्रारचयेच्च कल्पम् ।।
तस्मिन्महाकल्पवरे सुसत्ये गतः समाप्ति प्रथमोऽधिकारः ।। १ ।।

यन्त्रको श्रीब्रह्माजीने कल्पित किया है। अतः साधकको उचित है कि अधिकारी के सिवाय और किसीको न दे ।। १–११ ।।

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणिकी तीसरी पीठिकामें सौभाग्यजनन नामवालापच्चीसवाँ यन्त्र ।। २५ ।।

स्वप्नावस्थामें शिवजीसे प्राप्त कर दामोदर पण्डितके वनाये श्रेष्ठकल्प सत्य यन्त्रचिन्तामणिकल्पका प्रथम अधिकार समाप्त हुआ ।। १ ।।

सद्यन्त्रचिन्तामणिसर्वसिद्धिदे श्रीचन्द्रचूडस्य मुखाद्विनिर्गते । तस्मिंस्तृतीयां किल पीठिकामिमां चकार दामोदर पण्डितः सुधीः ।। २ ।। वश्याभिधानं प्रथमाधिकारं शृणोति यो भक्तियुतो मनुष्यः । तस्याशु देवो भगवान्महेशो ददाति लक्ष्मीं विपुलां सुसिद्धिम् ।। ३ ।।

इति श्रीयन्त्रन्चितामणौ महाकल्प प्रत्यक्षसिद्धिप्रदे उमामहेश्वरसंवादे दामोदरपण्डितोद्धृत तृतीयपीठिकायां वश्याधिकारः समाप्तः।।

इति प्रथमोऽधिकारः ।। १ ।।

अथाकर्षणाधिकारः

जयति जगदशेषं द्योतयन्दिव्यभासा विशदकिरणकान्तिः-प्रस्फुरच्चन्द्रमौलिः । विषमविषमहाहिप्रोल्ललच्चारुहारः सतत

श्रीचन्द्रचूड शिवजीके मुखसे निकले सत् यन्त्रचिन्तामणिकल्पकी तीसरी पीठिका पंडित प्रवर श्रीदामोदरजीने इस भाँतिसे रचना की ।। २ ।। इस वश्याधिकारनामक तीसरे अधिकारको जो मनुष्य भक्तिपूर्वक सुनते हैं उनको श्रीशिवजी महाराज प्रसन्न होकर अधिक लक्ष्मी और सुसिद्धि देते हैं ।। ३ ।।

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणौ महाकल्पे प्रत्यक्षसिद्धिप्रदे उमामहेश्वरसम्वादे दामोदरपंडितोद्धृत पं० बलदेवप्रसादजीमिश्रकृतभाषाटीकासहिततृतीयपीठिकायां

वश्याधिकारः समाप्तः ।।

समस्त संसारको अपनी दिव्य कान्तिसे प्रकाशित करनेवाले, विषम विषको पान करनेवाले, सर्पोंके प्रकाशमान मनोहर हारसे सुशोभित, मस्तकमें चन्द्रमाको धारण करनेवाले, निर्मल कांतिसे

मसिततेजा ज्ञानमूर्तिर्महेशः ।। १ ।। चिन्तामणौ कल्पवरे चतुर्थी प्रारभ्यते संप्रति पीठिकेयम् । आकृष्टियन्त्राणि परिस्फुटानि विचारयाम्यत्र तु पीठिकायाम् ।। २ ।।

श्रीशिव उवाच–संलिख्य नामानि च भूर्जमध्ये गोरोचना-कुङ्कुमचन्दनैश्च । सकारबीजास्तु विसर्गयुक्तास्तस्योपरि-ष्टाद्विलिखेत्तु पञ्च ।। १ ।। इकारमन्ते विनिवेश्य पश्चाद्विसर्ग-युक्तौ विलिखेत्सकारौ । क्रौं ह्रीं तथा क्रौं च विलिख्य पंक्तौ वर्णस्य पङ्क्तिर्महता क्रमेण ।। २ ।। एवं द्विपङ्क्तौ तु विलिख्य पश्चान्नाम्नस्तथाऽधो विलिखेत्तु पङ्क्तम् । ह्रीं क्रों तथा ह्रीं च तथैव च क्रों विलिख्य नाम्नस्तु अधोविभागे ।। ३ ।। ह्रीं क्रों

शोभायमान, तीक्ष्ण तेजको धारण करनेवाले और ज्ञानकी मूर्त्ति श्रीशिवजी महाराजकी जय हो ।। १।। अब चिन्तामणिकल्पकी चौथी पीठिकामें आकर्षणके यन्त्रोंका स्फुट विचार करता हूँ ।। २ ।।

शिवजी बोले, हे कान्ते ! तीन रेखाओं युक्त एक चतुष्कोण यंत्रको गोरोचन, कुंकुम, लालचंदनसे भोजपत्र पर लिखकर उक्त यंत्रके भीतर पाँच रेखा कल्पनाकर प्रथम रेखामें पाँच विसर्गयुक्त सकार बीजोंको लिखकर अन्तमें इकार बीज लिखे । फिर दूसरी रेखामें सः सःक्रों ह्रीं क्रों इन पाँच बीजोंको लिखे, तीसरी रेखामें साध्य व्यक्तिके नामके अक्षर लिखे, चौथी रेखामें ह्रीं क्रों ह्रीं क्रों लिखे और पाँचवीं रेखामें ह्रीं क्रों ह्रीं दर इन पाँचबीजोंको लिखकर यंत्रकी पूर्ति करे । फिर विधान पूर्वक गंधादिसे पूजन करके लालसूत्रसे बांधे और अपने शरीरके उद्वर्तनसे मनुष्याकार मूर्तिको बनाकर उसके हृदय भागमें यंत्रराजको रखकर उद्वर्तनसे आच्छादितकर संध्यासमय तीन दिनतक खदिरकी अग्निमें

माणिभद्रयंत्रम्

सः	सः	सः	सः	सः	ड
सः	सः	क्रौं	ह्रीं	क्रों	

देवदत्तः

ह्रीं	क्रों	ह्रीं	क्रों
ह्रीं	क्रों	ह्रीं	दर

तथा ह्रीं च विलिख्य पङ्क्तौ तस्याप्यधो वै विलिखेच्च बीजे । दकाररेफौ तु विलिख्य पश्चात्संवेष्टयेत्त्रिः परिवर्तनेन ॥ ४ ॥ संपूज्य यन्त्रं विधिवच्च पश्चात्सूत्रेण संवेष्टच सुपाण्डुरेण । उद्वर्तनेन स्वशरीरजेन विधाय मूर्ति मनुजस्य नूनम् ॥ ५ ॥ निधाय तस्या हृदि यन्त्रराजं पिधाय चोद्वर्तनकेन पश्चात् । संतापयेत्तं खदिरस्य वह्निना दिनत्रयं यन्त्रवरं त्रिसन्ध्यम् ॥ ६ ॥ ॐ देवदत्तं वेगेन आकर्षय २ माणिभद्रस्वाहा ॥ तापनमन्त्रोऽयम् ॥ एवं कृते कर्षति माणिभद्रो देशान्तरस्थं मनुजं च नूनम् । अत्यन्तदूरस्थमपि क्रमेण समानयेद्यन्त्रवरो हि नूनम् ॥७॥ संपूजयंस्तापनशोषणाच्च श्रीमाणिभद्रो भगवान् हि वीरः ॥ ८ ॥

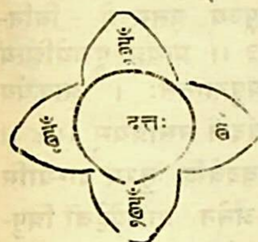
इति यंत्रचि० चतुर्थ० आंकर्षणाधिकार माणिभद्रं नाम प्रथमं यंत्रम् ॥ १ ॥

संतप्तकर इस मन्त्रको पढ़े । मंत्र-ओं देवदत्तं वेगेन आकर्षय २ माणिभद्र स्वाहा । यह तापन मन्त्र है । इस प्रकार करनेसे माणिभद्र दशांतरमें स्थित पुरुषोंको आकर्षित कर सकता है । वीर भगवान् श्रीमाणिभद्रजीने भी तापन-शोषणादि क्रियाओंसे श्रीयंत्रेश्वरका पूजन किया है ॥ १–८ ॥

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणिकी चौथी पीठिकाके आकर्षण अधिकारमें माणिभद्रनाम प्रथम यन्त्र ॥ १ ॥

श्रीशिव उवाच ।। अतः परं प्रवक्ष्यामि यन्त्रं मित्रस्यदर्शनम्
रक्तचन्दनसम्मिश्रेण स्वरक्तेन च भूर्जके ।। १ ।। मध्ये नाम
लिखित्वा तु वर्तुलं वेष्टयेत्ततः । चतुर्दलं ततः कुर्याद्बीजयुक्तं

मित्रदर्शनयंत्रम्



मनोहरम् ।। २ ।। हूँकारं दलमध्ये तु प्रत्येकं विलिखेत् क्रमात् । एवं यन्त्रं तु संलिख्य पूजयेद्गंधपुष्पकैः ।। ३ ।। बलिपुष्पोपहारैश्च सुगन्धद्रव्यसंयुतैः । प्रक्षिपेद्घृतमध्ये तु आकृष्टिस्त्रिदिनाद्भवेत् ।। ४ इदं यन्त्रं महागोप्यं रक्षणीयं प्रयत्नतः । कस्याप्यग्रे न वक्तव्यं यदीच्छेत् सिद्धिमात्मनः ।। ५ ।।

श्रीशिव उवाच ।। अथातःसंप्रवक्ष्यामि यन्त्रं त्रैपुरकं महत् ।

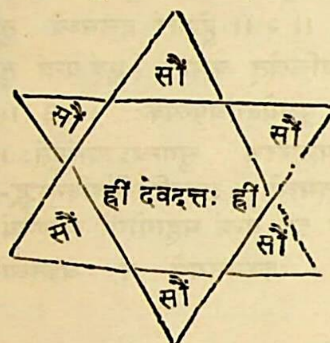
श्रीशिवजी बोले–अब मित्रदर्शननामक यन्त्रको कहता हूँ, विधान इस प्रकार है–लालचंदन, स्वरक्त इनको मिलाकर भोजपत्रके ऊपर एक गोलाकार चक्रको खींचकर चार दलोंमें युक्त बीचमें साध्यव्यक्तिके नामके अक्षर लिखकर उक्त दलोंमें हूँ बीजको लिखे । फिर गन्ध, पुष्प, इत्यादि पदार्थोंसे पूजनकर घृतमें स्थापित कर दे, तीन दिनमेंही आकर्षण हो जायगा । इस यन्त्रकी बड़े यत्नसे रक्षा करे । स्व सिद्धि चाहने वाला इस यन्त्रको किसीको न दे और न किसीसे कहे ।। १–५ ।।

इति यन्त्रन्चितामणिकी चौथी पीठिकाके आकर्षणाधिकारमें
मित्रदर्शन नामवाला दूसरा यन्त्र ।। २ ।।

श्रीशिवजी बोले–अब त्रैपुरक यन्त्रको कहता हूँ । जलमिश्रित गोरोचनसे भोजपत्रके ऊपर षट्कोण यन्त्रको लिख प्रतिकोणमें

रोचनानीरयुक्तेन भूर्जपत्रे लिखेन्नरः ।। १ ।। मध्ये नाम लिखित्वा तु ह्रींकारपुटितं शुभम् । षट्कोणं तु लिखेत्पश्चान्नामगर्भं मनो-

त्रैपुरकाख्ययन्त्रम्



हरम् ।। २ ।। सौंकारान् विलिखेत् कोणे मध्यतो बिन्दुभूषितान् । एतद्यन्त्रं सुसम्पूज्य वृतमध्ये विनिक्षिपेत् ।। ३ ।। प्रत्यहं पूजयेन्नित्यं प्रार्थयेत् त्रिपुरान्ततः । आकर्षय महादेवि देवदत्तं ममप्रियम् ।। ४ ।। ऐं त्रिपुरे देवदेवेशि तुभ्यं दास्यामि याचितम् । अनेन प्रार्थयेद्देवीं त्रिपुरांयन्त्रगां यजेत् ।। ५ ।। एवं कृते सप्तमेऽह्नि आकृष्टिर्जायतेशुभे।।६।।

इति यन्त्रचिन्ता० त्रैपुरकं नाम तृतीयं यन्त्रम् ।। ३ ।।

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि मानिन्याकर्षणं

सौं बीजको लिखकर मध्य भागमें 'ह्रीं देवदत्त ह्रीं' इस प्रकारके आदि अन्तमें ह्रीं बीज लगाकर साध्यव्यक्तिके नामाक्षर लिखे, उक्त यन्त्रका गन्धादिसे विधानपूर्वक पूजनकर घृतके मध्यमें स्थापित करे। प्रतिदिन त्रिपुरासे प्रार्थना करे। प्रार्थनामन्त्रः— आकर्षय महादेवि देवदत्तं मम प्रियम्। ऐं त्रिपुरे देवदेवेशि तुभ्यं दास्यामि याचितम् ।। हे शुभे ! इस विधानके करनेसे सातवें दिन आकर्षण होगा ।। १–६ ।।

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणिकी चौथी पीठिकाके आकर्षणाधि-
कारमें त्रैपुरक नामवाला तीसरा यन्त्र ।।३।।

श्रीशिवजी बोले——मानिनी स्त्रीके आकर्षणको कहता हूँ। यह सम्पूर्ण यन्त्रों का रहस्यभूत तत्क्षण सिद्धि देनेवाला है। यह

शुभम् । रहस्यं सर्वयन्त्राणां तत्क्षणात् सिद्धिदायकम् ।। १ ।।
न वाच्यं यस्य कस्यापि यन्त्रराजं सुदुष्करम् । दक्षिणानामिरक्तेन वामे करतले लिखेत् ।। २ ।। प्रणवं च तथा ह्रीं क्लीं एकपंक्तौ लिखेन्नरः । तिं हां स्वाहेति त्रितयं तस्याधो विलिखेत् क्रमात् ।।३।। तस्याप्यधो लिखेन्नाम रमण्याश्चैव सुव्रते । त्रिकोणं वेष्टयेत्पश्चाद्बीजानामुपरि प्रिये ।। ४ ।। एवं कृत्वा तु संपूज्य तत्रैव कुसुमैः शुभैः । याममात्रेण सा नारी समायाति न संशयः ।। ५ ।। यन्त्रं श्रीकामराजाख्यं देवानामपि दुर्लभम् ।। ६ ।।

ललनाकृति कामराजयन्त्रम्



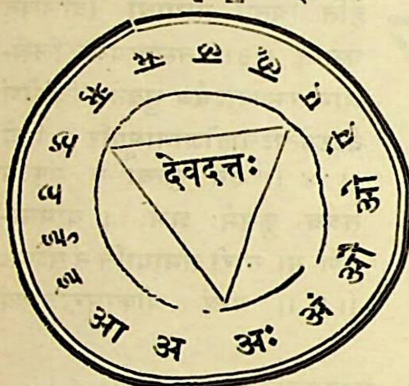
इति यन्त्रचि० ललनाकृति श्रीकामराजाख्यं यन्त्रम् ।। ४ ।।

यन्त्रराज बड़ा दुष्कर है विना अधिकारीके दूसरेसे कभी न कहे। दाहिने हाथ की अनामिकाके रुधिरसे वाम हाथकी हथेलीपर एक त्रिकोण यन्त्रको लिखे और उस यन्त्रके भीतर तीन लकीरें खींचे, प्रथम लकीरमें ओं, ह्रीं, क्लीं, इन तीन बीजोंको, दूसरी पंक्तिमें तिं, हां, स्वाहा इन चारवर्णोंको और तीसरी पंक्तिमें साध्यव्यक्तिके नामाक्षरोंको लिख गन्ध पुष्पादिसे पूजन करे, तो साध्यास्त्री एक पहरमात्रमें आकर्षित होगी अर्थात् स्वयं प्राप्त होगी। इसमें किसी प्रकारका सन्देह नहीं है। यह श्रीकामराज यन्त्र देवताओंको भी दुर्लभ है ।। १–६ ।।

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणिकी चौथी पीठिकाके आकर्षणाधिकारमें कामराज नामवाला चौथा यन्त्र ।। ४ ।।

श्रीशिव उवाच ॥ अथातः संप्रवक्ष्यामि यन्त्रं वै देवमातृकम् । कर्षणं नरनारीणां शृणु देवि महाफलम् । ११ ॥ लाक्षारसं हरिद्रां च मञ्जिष्ठं भूर्जपत्रके । लेखनीयं प्रयत्नेन एकान्ते

देवमातृकं चक्रम्



यन्त्रमुत्तमम् ॥ २ ॥ मध्ये नाम लिखित्वा तु त्रिकोणं वेष्टयेत्ततः । तच्चापि वेष्टयेत्पश्चात् वर्तुलं यत्नतः प्रिये ॥ ३ ॥ तस्योपरि स्वरा लेख्या अकाराद्यास्तु षोडश । ततस्तद्वेष्टयेत्सम्यग्रेखया नेत्रसंख्यया ॥ ४ ॥ तस्यैव पादधूल्याऽथ प्रकुर्याच्छालभञ्जिकाम् । तस्या योनौ तु संक्षिप्य यन्त्रराजं सुपूजितम् ॥ ५ ॥ एवं कृते

श्रीशिवजी बोले—हे देवि ! नर और नारियोंके आकर्षणकारक, महाफलदायक देवमातृक यन्त्रको कहता हूँ, सुनो—लाखका रस, हल्दी, मंजीठ इन वस्तुओंको एकत्रित करके भोजपत्रके ऊपर त्रिकोणयुक्त एक गोलाकार चक्र खींचकर फिर एक अंगुलके अन्तरसे एक और गोलाकार चक्र दो रेखाओंसे युक्त कर खींचे। फिर त्रिकोणके भीतर साध्यव्यक्तिके नामाक्षरोंको लिखकर अकारादि सोलह स्वरोंको दोनों गोलाकारोंके भीतर लिखे। पुनः उक्त साध्यव्यक्तिके चरणके नीचेकी धूलि लाकर एक पुत्तलिका बनाकर सुपूजित यन्त्रराजको योनि (भग) में स्थापित करे। ऐसे करने पर आकर्षित हो साध्य व्यक्तिको प्राप्त होगी। इसमें किसी

---

१. पादधूल्या सहान्यमृत्तिकया जलेन च मूर्ति विधायेत्यर्थः ॥

तु कृष्टा सा समायाति न संशयः। बहुनाऽत्र किमुक्तेन स्वपत्या सममानयेत् । यन्त्रराजो महागोप्यो देवमातृकसंज्ञकः ६

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणौ मानिन्याकर्षणं देवमातृकं पञ्चमं यन्त्रम्।।५।।

चिन्तामणौ कल्पवरे सुकल्पे श्रीचन्द्रचूडस्य मुखाद्विनिर्गते । तस्मिश्चतुर्थी किल पीठिकामिमां चकार दामोदरविप्रवर्यः ।। १ ।। आकर्षणं नाम महाधिकारं पूर्णं द्वितीयं हि महाप्रभावम् । पञ्चैव यन्त्राणि महाप्रभावे रहस्यभूतानि तु कीर्तितानि ।। २ ।।

अथ स्तम्भनाधिकारः

नारायणीति निगदन्ति सदैव लोका यां विश्वमातरमिति

प्रकारका संदेह नहीं । विशेष कहनेसे क्या, चाहिये पतिसहित प्राप्त होगी, इस देवमातृक संज्ञक यंत्रको अत्यन्त गुप्त रखना चाहिये ।। १–६ ।।

इति श्रीयंत्र० नरनारी आकर्षण० मातृसंज्ञक पांचवां यन्त्र।।५।।

———

श्रीशिवजी महाराजके मुखारविन्दसे निकले कल्पश्रेष्ठ चिन्तामणि नाम कल्पकी चौथी पीठिका इस प्रकार दामोदरजीने की है।। १ ।। महाधिकार और महाप्रभावशाली आकर्षण नाम चौथा अधिकार, इस अधिकारमें पांचही रहस्यभूत आकर्षणयंत्र वर्णित हैं। ।। २ ।।

इति यन्त्रचिन्तामणौ आकर्षणाधिकारः ।।

जिसको तीनों लोक नारायणी इस सम्बोधनसे उच्चारण करते हैं, अन्यजीव जिसको विश्वमाता कहकर पुकारते हैं ऐसी गंधर्व,

प्रवदन्ति केचित् । गन्धर्वयक्षसुरसिद्धगणैः स्तुतां तां विश्वेश्वरीमभयदां त्रिगुणां नमामि ।। १ ।। संस्तम्भनं नाम महाधिकारं विचारयामोऽत्र तु पीठिकायाम् । यन्त्राणि बीजानि शृणुष्व देवि संस्तम्भनानि क्षणसिद्धिदानि ।। २ ।।

श्रीशिव उवाच ।। शृणु देवि महायन्त्रं स्तम्भनं सर्ववैरिणाम् । विवादे व्यवहाराणां मुखस्तम्भो भवेद्ध्रुवम् ।। १ ।। यदा कालवशाद्देवि कलहः संप्रजायते । तदा कुर्यान्महायन्त्रं जिह्वावेधनकं परम् ।। २ ।। रोचना भूर्जपत्रेण संलेख्यं सुविचक्षणैः । षट्कोष्ठकं प्रकुर्वीत रेखाद्वितयकेन च ।। ३ ।। कोष्ठमध्ये लिखेद्बीजं प्रतिकोष्ठमिहैककम् । हकारं च मकारं च लकारं तदनन्तरम् ।। ४ ।। वकारं च रकारं च यकारं च प्रतिष्ठितम् । ऊकारस्वरसंयुक्तं मस्तके रेफसंयुतम्

यक्ष, सुर, सिद्ध गणोंसे स्तुति की हुई अभयदान करनेवाली रजोगुण, सत्तोगुण, तमोगुणरूपा विशेप विश्वेश्वरी भगवतीको नमस्कार करता हूँ ।। १ ।। इस पंचमपीठिकामें स्तम्भन नाम महाधिकारका विचार किया जाता है—हे देवि ! क्षणमात्रमें सिद्धिके देनेवाले स्तंभनयंत्र और बीजोंको श्रवण करो ।। २ ।।

श्रीशिवजी बोले—हे देवि ! व्यवहार विवादमें सम्पूर्ण शत्रुओंके मुखस्तम्भनकारक यंत्रको सुनो ।। १ ।। हे देवि ! यदि संयोगवश कलह हो जाय तो जिह्वावेधन नामक यंत्रका प्रयोग करे ।। २ ।। विधान यथा-गोरोचनसे भोजपत्रके ऊपर दो रेखा षट्कोणयंत्रको लिखकर प्रतिकोणकी रेखाको त्रिशूल युक्तकरके अन्तरालमें ठकार बीजोंको लिखे तत्पश्चात् प्रत्येक कोणके भीतर ह, म, ल, व, र, य, इन सब वर्णोंको ऊपर नीचे स्थापितकर योजनापूर्वक अन्तमें ऊकार स्वरको मिलाकर बिंदु तथा रेफको ऊपर के भागमें लिखकर

॥ ५ ॥ बिन्दुमात्रार्द्धसंयुक्तं संयोगे वर्णषट्ककम् । स्वर-द्वितय संयुक्तं बिन्दुना परिभूषितम् ॥ ६ ॥ एवं संजायते बीजं मुखस्तम्भनसंज्ञकम् । कोष्ठे कोष्ठे तु संलेख्यमेकैकं बीजमुत्त-मम् ॥ ७ ॥ एवं बीजानि संलेख्य रेखाद्वितयकेन च । रेखो-परिगताःकृत्वा कोणदेशाश्चतुर्दिशम् ॥ ८ ॥ बाह्यरेखोर्ध्वधो लेख्यास्त्रिशूला मस्तकोपरि । सर्वतो रेखयाचान्ते त्रिशूलान् विलिखेत्क्रमात् ॥ ९ ॥ एवमष्टादशसंख्यास्त्रिशूलाः संप्रति-ष्ठिताः । शूलान्तराले सर्वत्र तथोपरि लिखेत्क्रमात् ॥ १० ॥ ठकारबीजानि षडेव चोर्ध्वमधोऽपि तावन्ति विलिख्य नूनम् । दिग्दक्षिणस्यां च तथा त्रिबीजं तावन्ति संख्यानि तथोत्तरे च ॥ ११ ॥ एवं हि बीजानि ठकारसंज्ञः श्रीसूर्यसंख्यानि

शत्रुमुखगतिर्मतिस्तंभनयन्त्रम्

	ठं	ठं	ठं	ठं	ठं	ठं	
	ह्रैं	ह्रैं	ह्रैं	ह्रैं	ह्रैं	ह्रैं	
ठं	मैं	मैं	मैं	मैं	मैं	मैं	ठं
	लैं	लैं	लैं	लैं	लैं	लैं	
ठं	वैं	वैं	वैं	वैं	वैं	वैं	ठं
ठं	रैं	रैं	रैं	रैं	रैं	रैं	ठं
	यूँ	यूँ	यूँ	यूँ	यूँ	यूँ	
	ठं	ठं		ठं	ठं	ठं	

ईकार स्वरको मिलाकर गंध पुष्पादि से विधिपूर्वक पूजनकर निश्चिन्त मन हो वक्ष्यमाण मन्त्रका जप करे। मन्त्र-ओं ह्रदल्ल्यूँ

विलिख्य पश्चात् । संपूज्य यन्त्रं विधितप्रयत्नतो जपेत्तु मन्त्रं मनसा सुनिश्चलः ।। १२ ।। ॐ ह्लल्र्यूं ललल्ल अमुकस्य मुखं स्तम्भय स्तम्भय ठः ५ स्वाहा ।। अष्टोत्तरं चैव शतं जपित्वा मन्त्रं त्रिसंध्यं त्रिदिनं प्रयत्नात् । संपूजयेद्यन्त्रवरं त्रिसंध्यं पीतैश्च पुष्पैः कनकावदातैः ।। १३ ।। एवं कृते शत्रुगतिं मतिं च संस्तम्भयेद्यन्त्रवरो हि नूनम् । मूढो महामूक इव प्रजायते ग्रस्तो ग्रहेणैव रिपुर्महोग्रः ।। १४ ।।

इति य० स्तम्भनाधिकारे शत्रुमुखगतिमस्तिस्तम्भनं नाम
प्रथमं यन्त्रम् ।। १ ।।

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि यात्रास्तम्भनमुत्तमम् । शिलासंपुटके लेख्यं पीतद्रव्येण शोभनम् ।। १ ।। रोचनां हरितालं च हरिद्रां च मनःशिलाम् । कुङ्कुमेन समायुक्तं

ललल्ल अमुकस्य मुखं स्तम्भय२ठः ५ स्वाहा । सन्ध्याकालमें तीन दिनतक इस यन्त्रको अष्टोत्तरशत अथवा शत जपको यत्नपूर्वक करके त्रिसन्ध्या कालमें सुवर्णकी कांतिके समान पीले वर्णवाले फूलोंसे पूजन करे । ऐसा करनेसे शत्रुकी बुद्धि और गतिका स्तम्भन होता है और ग्रह ग्रसित समान होकर मूकभावको प्राप्त हो शान्त होता है । ।। १– १४ ।।

इति यन्त्र० पाँचवीं पी० स्तंभनाधि० शत्रुकी मुख
गतिस्तंभन प्रथम यन्त्र ।। १ ।।

श्रीमहादेवजी बोले–अब यात्रास्तम्भनकारक अति उत्तम यन्त्रको कहता हूँ । शिला संपुटके ऊपर पीले द्रव्यसे चतुष्कोण यन्त्रको लिखकर चारों कोनों तथा चारों दिशाओंमें एक एक त्रिशूल लिखकर मध्यमें दो रेखाकी कल्पना करे । प्रथम रेखामें, 'कुंभे

पीतद्रव्यं प्रचक्षते ॥ २ ॥ कुम्भे मोहे च बीजानि एक पंक्तौ लिखेन्नरः । तस्याप्यधो लिखेन्नाम मोहे चान्ते प्रतिष्ठितम् ॥ ३ ॥ ततस्तद्वेष्टयेत्सम्यक् चतुष्कोणंतु रेखया । कोणे कोणे त्रिशूलंतु मध्ये मध्ये तथैव च ॥ ४ ॥ कृत्वैवमष्टौ शूलानि यन्त्ररेखोपरि स्थितान् । संपूज्य पीतकुसुमैर्यन्त्रराजं मनोहरम् ॥ ५ ॥

यात्रास्तंभनयन्त्रम्

कुंभे मोहे

देवदत्तं मोहे

धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैर्नानाभक्ष्यसमन्वितैः । एवं संपूज्य तद्यन्त्रं भूमिमध्ये क्षिपेत्ततः ॥ ६ ॥ मृदापूर्य समे देशे यन्त्रस्योपरि यत्नतः । गमनं स्तम्भयत्येव नात्र कार्या विचारणा ॥ ७ ॥ यथारोपितभाण्डोऽपि न यात्येव प्रिये सदा ॥ ८ ॥

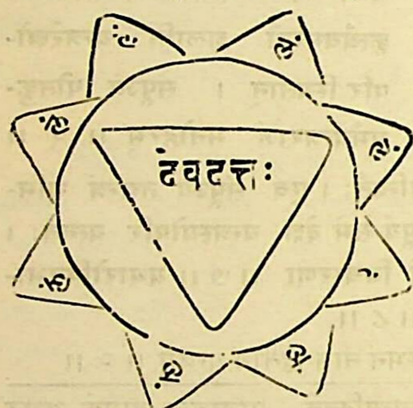
इति यं० यात्रास्तम्भनं नाम द्वितीयं यन्त्रम् ॥ २ ॥

मोहे' और दूसरी रेखामें साध्यव्यक्तिके सानुस्वार नामके अक्षर लिख अन्तमें मोहे इन दो वर्णोंको लिखे, अर्थात् 'देवदत्तं मोहे' इस प्रकार लिखे । गोरोचन, हरताल, हलदी, मैनशिल, कुंकुम, इनको पीले द्रव्य कहते हैं, फिर मनोहर यन्त्रराजका पीले फूलोंसे पूजनकर गन्धादि प्रदान करे और नानाप्रकारके भक्ष्य नैवेद्यादि को अर्पण करे । पृथ्वीके मध्यमें स्थापित कर यन्त्रके ऊपर मिट्टी डालकर बंदकर दे तो निश्चयही गमन रुक जायगा इसमें किसी प्रकारका सन्देह नहीं । हे प्रिये ! मार्गमें आरोपितभांडभी स्थितही रहेगा अन्यका तो कहना ही क्या है ॥ १–८ ॥

इति यन्त्रचि० पाँचवीं स्तम्भ० में यात्रास्तंभन कारकदूसरा यन्त्र।२।

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि वाचः स्तम्भं च सुन्दरी । प्रतिवादिमुखस्तम्भं यन्त्रं ख्यातं तु भूतले ।। १ ।। पीतद्रव्येण संलेख्यं शिलासंपुटमध्यतः । रोचनां हरितालं च हरिद्रां च मनःशिलाम् ।। २ ।। कुंकुमेन समायुक्तं पीतद्रव्यं प्रचक्षते । मध्ये नाम लिखित्वा तु त्रिकोणं वेष्टयेत्ततः ।। ३ ।।

प्रतिवादिमुखस्तम्भनयन्त्रम्



ततस्तद्वेष्टयेत्सम्यग्वर्तुलं रेखयैकया । तस्योपरि दलान्यष्टौ प्रकुर्वीत ततः-परम् ।। ४ ।। दलमध्ये लिखेद्बीजं लकारं बिन्दु भूषितम् । एवं चाष्ट दलेः लेख्यं पूजयेत्कुसुमैः शुभैः ।।५।। पीतवर्णैस्तथा धूपैर्दीपैर्नैवेद्यकैः शुभैः । ब्राह्मणं भोजयेच्चैकं पायसेन गुडेन च ।। ६ ।।

श्रीशिवजी बोले—हे सुन्दरि ! अब वाणिस्तम्भनको कहता हूँ और यह यन्त्र प्रतिवादिमुखस्तम्भननामसे भूतलमें प्रसिद्ध है । विधान इस प्रकारसे है, पीले द्रव्यसे शिलासंपुटके मध्यमें त्रिकोण यन्त्रको लिखकर गोलाकार चक्रसे वेष्टितकर आठ दलसे सुशोभितकर उक्त त्रिकोणके भीतर साध्यव्यक्तिके नामके अक्षर और दलोंमें लं बीजोंको स्थापित करे । फिर पीले वर्णयुक्त सुगन्धिवाले पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्यादिसे यन्त्रराजका पूजनकर पायस (खीर) तथा गुडमिश्रित पदार्थोंसे एक ब्राह्मणको भोजन

१—श्रीकर्णिकारं कुटजं चम्पकं स्वर्णकेतकीम्।धत्तूरं पीतकुसुमं नागकेशरमेवच।

ततो निखन्य भूमौ तु स्थापयेत् पूर्ववत्ततः । विवादे व्यवहारे च शास्त्रचर्चासु च प्रिये।। ७ ।। प्रतिवादि – मुखस्तम्भो जायते नात्र संशयः । एतद्यन्त्रं महादेवि सुगोप्यं कथितं तव ।। ८ ।।

इ० य० प्रतिवादिमुखस्तम्भनं नाम तृतीयं यन्त्रम् ।।३ ।।

श्रीशिव उवाच ।। अतः परं प्रवक्ष्यामि शत्रोर्वक्त्रस्य मुद्रणम् । यदा संजायते वादः शत्रुभिः सह सुव्रते ।। १ ।। तदा यन्त्रं प्रकुर्वीत सुगमं फलसिद्धिदम् । खट्टिकया तु संलेख्यं स्वभित्तौ वेगतः प्रिये ।। २ ।। मध्ये नाम लिखित्वा तु शत्रोस्तु विधि-

---

कराये। पृथ्वीको खोदकर विधानपूर्वक यन्त्रको स्थापित करके ऊपर मिट्टी डालकर वन्दकर दे तो व्यवहार, विवाद, शास्त्रचर्चा आदिमें प्रतिवादीके मुखका स्तंभन हो जायगा। हे देवि! यह परमगुप्त यन्त्र मैंने तुमसे कहा है। १– ८।।

इति यन्त्र० पाँचवीं० प्रतिवादिमुखस्तम्भन नामवाला तीसरा यन्त्र ।। ३ ।।

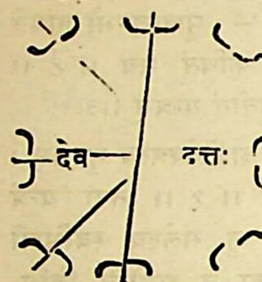
श्रीशिवजी बोले–हे सुव्रते ! शत्रुके साथ विवाद होनेमें शत्रुके मुखको वन्द करनेवाला यन्त्र कहता हूँ। हे प्रिये ! जिस समय शत्रुसे विवाद हो उसी समय शीघ्रसिद्धिके देनेवाले यन्त्रका प्रयोग करे। विधि–अपने स्थानकी दीवारके ऊपर खडिया मिट्टीसे गोलाकार चक्र खींचकर आठोंदिशाओंमें त्रिशूल लगाय यंत्रको निर्माणकर साध्यव्यक्तिके नामाक्षर लिखकर यंत्रका श्वेतपुष्प , फल, सुगन्ध,

---

ग्राह्याण्येतानि पुष्पाणि यथालाभं वरानने, अन्यानि पीतवर्णानि न ग्राह्याणि कदाचन ।

हे वरानने । कुटज, चम्पा, स्वर्णकेतकी, धत्तूरा, नागकेशर, पीतकुसुमके कथनमें इनके ही यथाशक्ति पीले फूल जितने मिलें उन्हें ग्रहण करना चाहिये अन्य नहीं ।।

शत्रुमुखस्तम्भनयन्त्रम्



वत्प्रिये । तस्योपरि स्थिता रेखा वसुसंख्याष्टदिक्क्रमात् ।। ३ ।। रेखान्ते च त्रिशूलानि तल्लिखेच्च दिगष्टके । तत्रैव तु सुसंपूज्य श्वेतपुष्पैः फलैः शुभैः ।। ४ ।। अन्यैश्च श्वेतगन्धैश्च श्वेतवस्त्रैर्मनोहरैः । ब्राह्मणं भोजयेच्चैकं श्रीशिवः प्रीयतामिति ।। ५ ।। वादे पिशुनतायां च मुखस्तम्भं करोत्ययम् ।। ६ ।।

इति श्रीयन्त्रचिं० ना० म० प्र० उ० पं० दा० स्तं० शत्रुमुखस्तम्भनं चतुर्थ यन्त्रम् ।। ४ ।।

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि वह्निस्तम्भं मनोहरम् । दिव्यकाले प्रकुर्वीत यन्त्रराजं सुशोभनम् ।। १ ।। पीतद्रव्येण संलेख्यं भूर्जपत्रे वरानने । साध्यनाम लिखेन्मध्ये क्रों

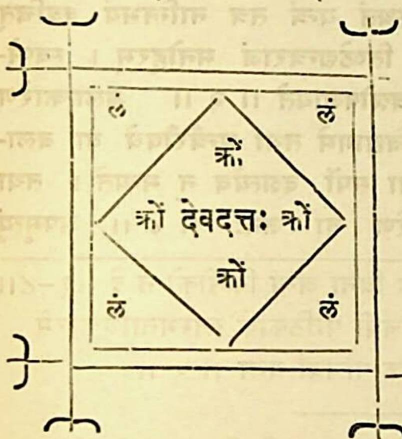
मनोहर श्वेतवस्त्रादिस पूजनकर एक ब्राह्मणको भोजन कराये और "श्रीशिवः प्रीयताम्" इसको पढ़ता रहे तो इस यंत्रके प्रतापसे वाद और पिशुनतामें शत्रुका मुखस्तम्भन होगा ।। १–६ ।।

इति यन्त्रचितामणिकी पाँचवीं पीठिकाके स्तम्भनाधिकारमें शत्रुमुखस्तम्भननामक चौथा यंत्र ।। ४ ।।

श्रीशिवजी बोले–अब मनोहर अग्निस्तंभन यंत्रको कहता हूँ– इस यंत्रराजका दिव्यकालमें प्रयोग करना योग्य है । विधान यथा– पीले द्रव्यसे भोजपत्रके ऊपर दो रेखायुक्त चतुष्कोणयंत्रको लिखकर पुनः उसके भीतर एक चतुष्कोण यंत्र और लिखकर बहिर्भागके चारों कोनोंमें दो दो त्रिशूल लगाकर भीतरके चतुष्कोणके उदरमें

नामाद्यन्तसंपुटम् ॥ २ ॥ उपर्यधोऽपि विलिखेत्क्रोंकारं सुमनोहरम् । ततस्तद्वेष्टयेद्देवि चतुष्कोणं तु रेखया ॥ ३ ॥ तस्योपरि चतुष्कोणं प्रकुर्वीत द्विरेखया । कोणान्तराले संलेख्यं लकारं बिन्दुभूषितम् ॥ ४ ॥ एवं चतुष्टयं लेख्यं लकाराणां तु बीजकम् । कोणान्ते तु पृथग्लेख्यौ त्रिशूलौ सर्वथा प्रिये ॥ ५ ॥ एवमष्टत्रिशूलानि विलिख्याथ प्रपूजयेत् । संपूज्य ब्राह्मणं भोज्य यन्त्रं भूमौ विनिक्षिपेत् ॥ ६॥ वह्न्युदकमार्गे च मध्ये यन्त्रं विधाय च । यावत्तस्योपरि याति सलिलं वरवर्णिनि ॥७॥ तावदग्नेर्महास्तम्भो जायते नात्र संशयः । दिव्यस्तम्भ-

वह्निस्तम्भनयन्त्रम्



पूर्वादि चारों दिशाओंमें क्रौं बीजको लिखकर साध्यव्यक्तिके नामाक्षरोंको लिख मध्यकोणके वहिर्भागमें लं बीजोंको लिखे । फिर गंधादिसे यन्त्रराजका पूजनकर यथाशक्ति ब्राह्मणको पूजित कर भोजनकराकर यन्त्रको पृथ्वीमें गाड़ दे और उस यन्त्रके ऊपर जलका व्यवहार करे । हे वरवर्णिनि ! जब तक उसके ऊपर जल व्यवहार होता रहेगा तब तक अग्निका महास्तंभन होगा । इसमें किसी प्रकारका संदेह नहीं है । हे देवि ! दिव्यस्तम्भनकारक इस यंत्रका देवताओंने भी पूजन किया है । अपनी सिद्धिकी इच्छा

करं नाम यन्त्रं देवैः सुपूजितम् । नदेयं यस्य कस्यापि यदीच्छेत्सि-द्धिमात्मनः ॥ ८ ॥

इति श्रीयन्त्र चिं० ना० म० प्र० उ० प० स्त० दा० वह्नि-स्तम्भनं नाम पञ्चमं यन्त्रम् ॥ ५ ॥

श्रीशिव उवाच ॥ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्त्रं वह्नि-निवारणम् । यस्मिन् गृहे स्थितं यन्त्रं तत्र नाग्निभयं क्वचित् ॥ १ ॥ यस्य हस्ते सदा तिष्ठेद्यन्त्रराजं मनोहरम् । स्वप्ने-ऽप्यग्निभयं तस्य कदाचिन्नोपजायते ॥ २ ॥ बलात्कारेण कर्तव्यमग्निनिग्रहकं प्रिये । विद्यागमे तथा मन्त्रैरौषधे वा बला-धिके ॥ ३ ॥ पादस्पृष्टो यथा सर्पो दशत्येव न मन्यते । तथा स्तम्भोपि देवेशि बलात्कारेण वा जनैः ॥ ४ ॥ अपमृत्युं

करनेवाला साधक अधिकारीके बिना अन्य किसीको न दे ॥१–८॥

इति यन्त्रचिन्तामणिकी पाँचवीं पीठिकाके स्तम्भनाधिकारमें अग्निस्तम्भनकारक पाँचवाँ यन्त्र ॥ ५ ॥

श्रीशंकरजी बोले–हे देवि! अब अग्निनिवारक यंत्रको कहता हूं सुनो। जिस गृहमें यह यन्त्र स्थित रहेगा उस गृहमें कदापि अग्निका भय नहीं होगा और जिस किसीके हाथमें यह मनोहर यन्त्रराज सदा वर्तमान रहेगा, स्वप्नमें भी उसको कदापि अग्निका भय न होगा। हे प्रिये! विद्यागमन, मन्त्र, औषध अथवा बल-अधिक होनेपर बलात्कारसे अग्निका ग्रहण करना योग्य है,हे देवेशि। जैसे कि पादसे स्पर्श किया हुआ सर्प काटताही है, ऐसेही मनुष्यों द्वारा प्रयोग किया हुआ स्तम्भनयन्त्र फलदायक होता ही है। देवि! जैसे कि वैद्यका रस अपमृत्युको हरण करता है वैसही यह यन्त्रराज अवान्तरभयको हरण करताहै। विधान यथा-लाल चन्दन, गोरोचन

यथा देवि हरेद्वै वैद्यको रसः। तथा यन्त्रोपि देवेशि अवान्तरभयं हरेत् ॥ ५ ॥ श्रीखंण्डरोचनहिमेन तु लेखनीयं यन्त्रं तु भूर्जे विधिवत्तु विस्तृते। नाम स्वकीयं तु विलिख्य मध्ये सुवेष्टयेद्वर्तुलरेखया तथा ॥ ६ ॥ तस्योपरि लिखेन्नूनं वकारं बिन्दुभूषितम्। पूर्वे च दक्षिणे चैव पश्चिमे चोत्तरेपुनः ॥ ७ ॥

अग्निस्तंभनयन्त्रम्



एतत्सर्वं तु संवेष्टय चतुष्कोणं तु रेखया। त्रिलोहवेष्टितं कृत्वा बाहुमूले गलेऽथवा ॥ ८ ॥ अथवा गृहमध्ये तु क्षीरमध्ये विनिक्षिपेत्। एवं संपूजयेन्नित्यं देववद्देवि यन्त्रकम् ॥९॥ अग्नेः सकाशाद्भीतिर्या साऽस्मात्क्वापि न जायते। ब्राह्मणं भोजयेदेकं यन्त्रराजस्य तुष्टये ॥ १० ॥

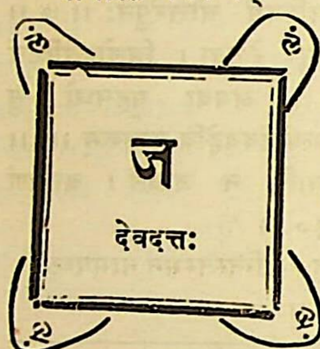
इति य० चि० नाम० प्र० उ० पं० स्त० अग्निस्तम्भनं नामषष्ठ यन्त्रम् ॥ ६ ॥

और हिमसे सुविस्तृत भोजपत्रपर विधानपूर्वक एक गोलाकार चक्रके मध्यमें साध्यव्यक्तिक नामको लिख वहिर्भागमें अर्थात् पूर्वादि चारों दिशाओंमें वं बीजको लिख गंधपुष्पादिकोंसे पूजनकर, त्रिलोहके ताबीजमें वंदकर गले अथवा वाहुमूलमें धारणकरे, अथवा दुग्धमें स्थापितकर घरक मध्यमें रखदे। ह दवि ! नित्यप्रति देववत् यन्त्रराजका पूजन करे तो किसी अवस्था में भी अग्निसे भय न होगा और यन्त्रराजकी प्रसन्नताके लिए एक ब्राह्मणको भोजन कराये ॥ १— १० ॥

इति यन्त्रचि० स्तंभनाधिकारमें अग्निभयनिवारणनामक छठा यन्त्र ॥ ६ ॥

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि प्रियसंस्तम्भनं परम् । यदा कोऽपि बलाद्याति वारितोऽपि वरानने ।। १ ।। तदा संस्तम्भनं कुर्याद्यन्त्रंराजं शुचिस्मिते । पीतद्रव्येण संमिश्रं फलके काष्ठसंभवे ।। २ ।। खट्टिकया लिखेद्यन्त्रं मूलके काष्ठ-संभवे । जकारगर्भमध्ये तु साध्यनाम प्रतिष्ठितम् ।। ३ ।।

यात्रास्तम्भनयन्त्रम्



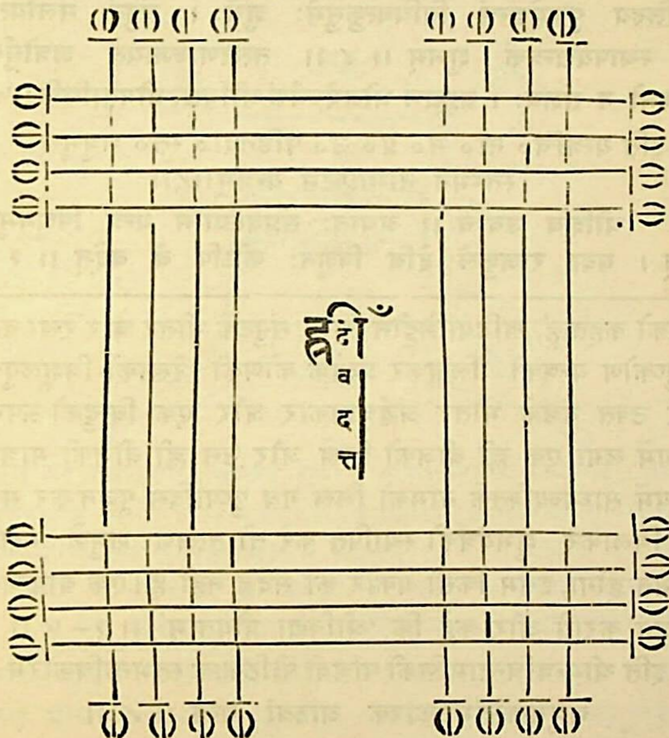
ततस्तद्वेष्टयेत्सम्यक् चतुष्कोणं तु रेखया । तस्योपरि चतुष्कोणं द्वितीयं विलिखेद्बुधः ।। ४ ।। कोणे दलाकृतिं कुर्यान्मध्यदेशे क्वचिन्नरः । दलमध्ये लकारं तु बिन्दुयुक्तं लिखेत् प्रिये ।। ५ ।। एवं विलिख्य संपूज्य विधिवद्यन्त्रमुत्तमम् । अधोमुखं निबध्नीयात् फलकं गृहमध्यतः ।। ६ ।। यात्रास्तम्भो भवेद्देवि नात्र कार्या-

---

श्रीशिवजी बोले –हे वरानने ! अब प्रियस्तम्भन यन्त्रको कहता हूँ, जब कि निवारण करनेपर भी कोई मनुष्य बलपूर्वक जाये तो, हे शुचिस्मिते ! उस समनुष्यके निवारण करनेके लिए स्तम्भन-यन्त्रका प्रयोग करे। विधान यथा–पीले द्रव्यसे लिप्त काष्ठके टुकड़ेके ऊपर खड़ियामिट्टीसे दो रेखावाले चतुष्कोणयंत्रको खींच कर चारों कोनोंमें एक एक कमलदल स्थापित कर प्रतिकोण में लं बीजको लिखकर चक्रके भीतर जकाराक्षरको मध्यमें और उसके नीचे साध्यव्यक्तिके नामको लिखे । तत्पश्चात् विधिपूर्वक यन्त्र-राजका पूजनकर गृहके और उसके नीचे मध्यमें अधोमुख करके बाँध दे । हे देवि ! यात्राका स्तम्भन होगा, इसमें किसी

विचारणा ।। तथापि गच्छते यस्तु गत्वाऽपि च समेत्यसौ ।। ७ ।।
इ०य०चि०ना०प्र०उ०पं० यात्रास्तम्भनं नाम सप्तमं यन्त्रम् ।।७।।
श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि वैरिवाक्स्तम्भनं

शत्रुमुखस्तंभनयन्त्रम्



प्रकार संदेह नहीं है, अथवा चला गया हो तो लौट आयेगा ।।१–७।।
इति श्रीयन्त्रचिन्ता० यात्रास्तंभनकारक सातवाँ यन्त्र।।७।।

श्रीशिवजी बोले—अब शत्रुकी वाणीके स्तम्भनकारक परम-

परम् । खट्टिकया तु संलेख्यं शिलासंपुटमध्यगम् ॥ १ ॥ ह्रीं कार-गर्भमध्ये तु साध्यनाम प्रतिष्ठितम् । ततस्तद्वेष्टयेत्सम्यक् चतुष्कोणं तु रेखया ॥ २ ॥ एवं चतुश्चतुःकोणं लिखित्वा यन्त्रकं परम् । अन्त्यकोणे त्रिशूलानि चतुर्दिक्षु चतुश्चतुः ॥ ३ ॥ विलिख्य पूजयेद्यन्त्रं विधिवत्कुसुमैः शुभैः । संपुटं मेलयित्वा तु स्थापयेद्यन्त्रकं शुभम् ॥ ४ ॥ तत्क्षणाज्जायते शत्रोर्मुख-स्तम्भो न संशयः । ब्राह्मणं भोजयेच्चैकं श्रीविद्या प्रीयतामिति॥५॥

इति यन्त्रचि० ना० म० प्र० उ० पंडितदा० स्तं० शत्रुमुख-स्तम्भनं नामाऽष्टमं यन्त्रम्॥८॥

श्रीशिव उवाच ॥ अथातः संप्रवक्ष्यामि यन्त्रं पिशुनमुद्रणम् । यदा राजकुले देवि पिशुनः कोऽपि वै वदेत् ॥ १ ॥

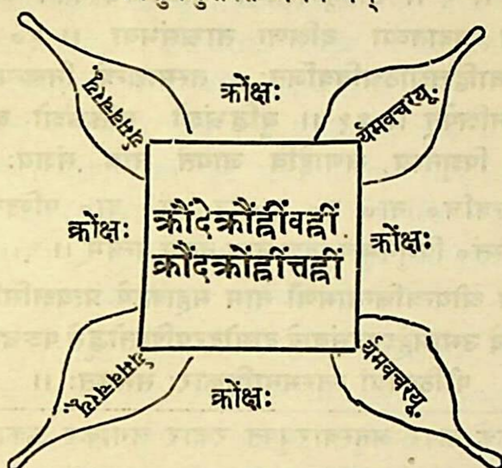
यंत्रको कहताहूँ, खड़ियामिट्टीसे शिला संपुटके भीतर चार रेखा वाले चतुष्कोण यन्त्रको लिखकर प्रत्येक कोणकी रेखाको त्रिशूलयुक्त कर उक्त यंत्रके भीतर अर्द्धचंद्राकार और एक बिन्दुको ऊपरके भागमें लगा एक ह्रीं बीजको लिखे और उस ह्रीं बीजकी मात्राके मध्यमें साध्यव्यक्तिके नामको लिख गंध पुष्पादिसे पूजन कर संपुट को मिलाकर शुभयंत्रको स्थापित करे तो तत्क्षण शत्रुके मुखका स्तंभन होगा, इसमें किसी प्रकार का संदेह नहीं है। एक ब्राह्मणको भोजन कराये और कहे कि 'श्रीविद्या प्रीयताम्' ॥ १–५ ॥

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणिकी पाँचवीं पीठिकाके स्तंभनाधिकारमें शत्रुमुखस्तंभनकारक आठवां यन्त्र ॥ ८ ॥

श्रीशिवजी बोले–हे देवि ! अब पिशुन मुद्रणनामक यन्त्रको कहता हूँ । राजकुलमें यदि कोई पिशुनता (चुगली) करे तो उसके मुखस्तंभन के लिये पिशुनमुद्रण नाम यंत्रका प्रयोग करे । इसके

तदा यन्त्रं प्रकुर्वीत नाम्ना पिशुनमुद्रणम् । शत्रोः स्तम्भयते वाचं गतिं बुद्धि वरानने ।। २ ।। रोचनाभूर्जपत्रेण लिखेद्यन्त्रं सुशोभनम् । क्रोंकारपुटितं कार्यमक्षरं नामसंभवम् ।। ३ ।। ह्लीङ्कार-

पिशुनमुखस्तम्भनयन्त्रम्



पुटितं पश्चाद्द्वितीयं चाक्षरं पुनः । नामाक्षराणि यावन्ति तावत् संपुटितानि च ।। ४ ।। ततस्तद्वेष्टयेत्सम्यक् चतुष्कोणं तु रेखया । कोणे कोणे दलं कुर्याद्दीर्घबीजेन संयुतम् ।। ५ ।। यकारं च मकारं च वकारं च तथैव च ।। चकारं च रकारं च यकारं तदनन्तरम् ।। ६ ।। एवं क्रमेणसंयोज्यमक्षराणांतुषट्ककम् । ऊकारस्वरसंयुक्तं

प्रतापसे शत्रुकी वाणीगति, बुद्धि इनका स्तम्भन हो जायगा । गोरोचनसे भोजपत्रके ऊपर चतुष्कोण यंत्रको लिखकर प्रत्येक कोणमें एक-एक दल लगाकर उक्त यन्त्रके वहिर्भाग पूर्व-पश्चिम और उत्तर-दक्षिण में क्रों क्षः इन बीजोंको लिखकर मध्यभागमें कों ह्रीं बीजोंसे संपुटित साध्यव्यक्ति के नामाक्षरों को लिखे । तत्पश्चात् प्रत्येक कोणमें दीर्घ बीज य, म, व, च, र य इन छः वर्णोंको मिश्रित-

मस्तके रेफभूषितम् ।। ७ ।। बिन्दुना तु समायुक्तं विलिखेद्दल-मध्यतः। एवं चतुर्दलं लेख्यं बीजं वै स्वरपूजितम् ।।८।। दलान्तरं सुसंलेख्यं क्रोंक्षश्चैव चतुर्दिशम् । एवं संलिख्य यन्त्रं तत्पूजयेद्र-क्तचन्दनैः ।। ९ ।। रक्तपुष्पैस्तथा वस्त्रैः स्वरक्तेन च सुन्दरि । यथाशक्त्या प्रदातव्या दक्षिणा ताम्रसंभवा ।। १० ।। ब्राह्मणं भोजयेत्पश्चाद्वित्तशाठ्यविवर्जितः । तस्माद्यन्त्रं निखन्याशु भूमि-मध्ये विनिक्षिपेत् ।। ११ ।। बुद्धिभ्रंशो गतिभ्रंशो वाग्भ्रंशश्च वरानने । पिशुनस्य क्षणाद्देवि जायते नात्र संशयः ।। १२ ।।

इति यन्त्रचि० ना० म० प्र० उ० सं० दा० पण्डितोद्धृत स्तं० पिशुनमुखमुद्रणं नाम नवमं यन्त्रम् ।। ९।।

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणौ नाम महाकल्पे प्रत्यक्षसिद्धि-प्रदे उमामहेश्वरसंवादे दामोदरपण्डितोद्धृते पञ्चम-पीठिकायां स्तम्भनाधिकारः समाप्तः ।।

कर मस्तकके ऊपर अनुस्वारयुक्त रकार लगाकर ऊकार स्वर में मिलादे। पुनः लाल चन्दन, लाल पुष्प, लालवस्त्र स्वरक्तसे यंत्र-राजका पूजनकर यथाशक्ति दक्षिणा देकर एक ब्राह्मणको भोजन कराये। परन्तु वित्तशाठ्य विवर्जित होकर करे, फिर भूमिमें गड्ढा करके यंत्रको दाव दे तो हे सुन्दरि ! पिशुन शत्रुकी बुद्धि, वाणी गति इत्यादिका नाश होगा ।। १-१२ ।।

इति यंत्रचिन्ता० पिशुनमुखस्तम्भन नामक नववाँ यंत्र।।९।।

इति श्रीयंत्रचिन्तामणौ नाम महाकल्पे प्रत्यक्षसिद्धिप्रदे उमा-महेश्वरसम्वादे दामोदर पंडितोद्धृत पंडितवलदेव-प्रसादमिश्रकृतभाषाटीकासहितपंचमपीठिकाया स्तंभनाधिकारः समाप्तः ।।

अथ विद्वेषणाधिकारः

त्वरितं जानकीं द्रष्टुं निहन्तुं रावणं युधि । पूजितां रामचन्द्रेण त्वरितां तां नमाम्यहम् ।। १ ।। यन्त्राणि बीजानि परिस्फुटानि विचारयामोऽत्र सुपीठिकायाम् ।। २ ।। दौर्भाग्य वैराणि परस्परं तदा विवर्धते द्वेषयतीव बन्धुषु । यन्त्रप्रभावाद्भुवि मानवानां प्रचक्ष्महे तानि परिस्फुटानि ।। ३ ।।

श्रीशिव उवाच ।। शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्त्रं दौर्भाग्यवर्धनम् । विवादो नरनारीणां येन संजायते सदा ।। १ ।। रोचनाकुंकुमेनैव भूर्जपत्रे वरानने । लिखेद्यन्त्रं महादेवि यन्त्रं सौभाग्यनाशनम् ।। २ ।। कुर्यात्तिर्यग्गता रेखाः पूर्व पश्चिमसंस्थिताः । दीर्घकोष्ठाकृतिं कुर्यादष्टसंख्याः शुचिस्मिते ।। ३ ।। तन्मध्योप-

---

शीघ्रही श्रीमहारानी जानकीजीके अन्वेषणके लिये और संग्राममें रावणके मारनेके लिये श्रीरामचंद्रजीसे पूजित त्वरिता देवीको नमस्कार करता हूँ ।अब विद्वेषण नामक छठा महा अधिकार आरम्भ किया जाता है । इस सुपीठिकामें उन यंत्र बीजोंका विचार करते हैं जिनके प्रयोग से दौर्भाग्य, आपसमें वैर, बन्धुओंमें वैर अति वृद्धिको प्राप्त हो, अब उन यंत्रोंको स्फुटतापूर्वक कहता हूं ।।

श्रीशिवजी बोले–हे देवि ! जिन यन्त्रोंके प्रयोग करनेसे विवादमें नर और नारीके दौर्भाग्यकी सदा वृद्धि हो अब उन यन्त्रोंको कहता हूँ, श्रवण करो, हे शुचिस्मिते ! गोरोचनसे भोजपत्रके ऊपर चतुष्कोण यन्त्रको खींचकर मध्यभागमें पूर्व पश्चिमकी ओर खड़ी ९ रेखा (कि, जिनके अष्ट कोष्ठक होते हैं) लिखकर प्रतिरेखाको मिश्रितकर उनके ऊपर भागमें "ओं अजिते स्वाहा" नीचेके भागमें "ओं अपराजिते स्वाहा" इन पदोंको लिखकर कोष्ठोंके भीतर दो वार ऊपर भागमें साध्यव्यक्तिके

रिभागे च एकैकं विलिखेत्क्रमात् । मध्ये नामाक्षरं देविद्विवारं तु पुनः पुनः ॥ ४ ॥ तस्याधोधः क्रमेणैव तेनैव विलिखेत्पुनः । दुर्भगा चेति स्त्रीलिङ्गे विधिवच्च पुनःपुनः ॥ ५ ॥ पुनस्तान्येवाक्षराणि कोष्ठा यावत्समापिता: । कोष्ठवाह्योऽपि विलिखेदधोपरि विशेषतः ॥ ६ ॥ अजितेत्युपरि संलेख्यं स्वाहान्तं प्रणवादिकम् ।

नरनारीविद्वेषणयन्त्रम्

ॐ अजितेस्वाहा

दे	व	द	त्त	दे	व	द	त्त
दु	र्भ	गा	भ	व	दु	र्भ	गा
						भ	व

ॐ अपराजितेस्वाहा

अपराजिते अधोभागे स्वाहान्तं प्रणवादिकम् ॥ ७ ॥ एवं संलिख्य यन्त्रं तु गच्छेच्चैव सरित्तटे । उभयोः कूलयोर्ग्राह्या

नामाक्षरोंको लिख 'दुर्भगा' भव इन वर्णोंको नीचेके भागमें लिखे। यदि साध्यव्यक्तिके नामके अक्षर कोष्ठसंख्यासे अधिक हों तो वहिर्भागमें लिख देना चाहिये। परन्तु स्त्रीलिङ्गमें अर्थात् स्त्रीके प्रसंगमें 'दुर्भगा भव' इस प्रकार लिखना योग्य है ! हे सुन्दरि ! इस प्रकार यन्त्र निर्माणकर नदीके तटपर जाकर आरपारकी मृत्तिका लाकर मौन हो उक्त मृत्तिकासे गणेशजीकी प्रतिमा वनाकर यन्त्रको उसके ऊपर रखकर गन्ध पुष्प मोदकआदि द्रव्योंसे स्तुति र्वक पूजनकर 'गणेशः प्रीयताम्' इस वाक्यको उच्चारणकर

मृत्तिका मौनिना शुभा ॥ ८ ॥ तथा गणपतिं कृत्वा यन्त्रं तस्योपरि क्षिपेत् । गोदुग्धस्तपनं कुर्याद्गणनाथस्य सुन्दरि ॥ ९ ॥ अर्चयेद्विविधैः पुष्पैर्मोदकैर्बहुभिस्तु तम् । संपूज्य बालकान् भक्ष्यैर्गणेशः प्रीयतामिति ॥ १० ॥ एवं संपूज्य देवेशं गणराजं शुचिस्मिते । शरावसंपुटे क्षिप्त्वा संपुटोपरि विन्यसेत् ॥ ११ ॥ अघोरेति अघोरेति विलिखेत्संपुटोपरि । भूमिष्ठं सम्पुटं कुर्यान्निखन्यादथ पूजयेत् ॥ १२ ॥ दौर्भाग्यमतुलं प्राप्य नारी सीदत्यहर्निशम् । पुरुषो न सहेत्तां तु सुरूपामपि सुव्रते ॥१३॥ पुंल्लिगे योजितं यन्त्रं नारी न सहते तु तम् । दंपत्योर्द्वेषणं देवि रहस्यं परमं सदा ॥१४॥ नान्यत्र संप्रयोक्तव्यं यन्त्रमेतन्मम प्रियम् । न देयं यस्य कस्यापि विपरीतं प्रजायते ॥१५॥

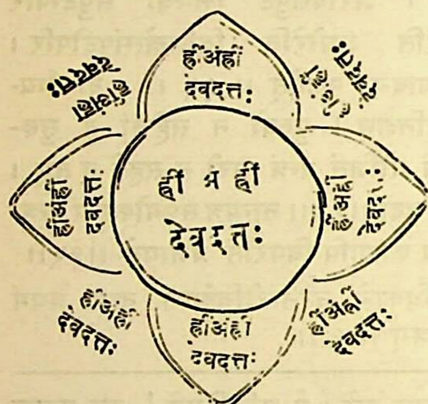
इति श्रीयन्त्रचिं० विद्वेषणाधिकारे नरनारीविद्वेषणं नाम प्रथमं यन्त्रम् ॥ १ ॥

भक्ष्यपदार्थोंसे बालकोंका पूजन करे। हे शुचिस्मिते! इस प्रकार गणेशजीका पूजनकर शरावसंपुटमें स्थापित करे, भूमि खोदकर अघोरेति अघोरेति, इस मन्त्रको पढ़ता हुआ प्रतिमा को स्थापितकर पूजन करे। हे सुव्रते! अति दौर्भाग्यको प्राप्त होकर नारी रातदिन दुखी होगी, तथा पुरुषभी उसे सहन करनेमें समर्थ न होगा, चाहे वह नारी सुरूपा भी क्यों न हो? यदि इस यन्त्रका पुंलिग विषयमें प्रयोग किया जाय तो नारी नरको नहीं सह सकेगी, हे देवि! यह रहस्य स्त्रीपुरुषोंका विद्रोहकारक है। मेरे प्यारे इस यन्त्रका अन्यविषयमें प्रयोग करना उचित नहीं है, और न किसीको देना योग्य है, क्योंकि देनेसे विपरीत फलदायक होगा ॥ १-१५ ॥

इति यन्त्रचिंता० नरनारीविद्वेषण नाम प्रथम यंत्र ॥ १॥

श्रीशिव उवाच ।। अतः परं प्रवक्ष्यामि शत्रुविद्वेषणं परम्। परस्परं महाद्वेष्यं शत्रूणां जायते परम् ।। १ ।। विद्वेषिरक्तयुक्तेन लेखन्या काकपिच्छया । श्मशानकर्पटे लेख्यं चतुर्द्दश्यां वरानने ।। २ ।। ह्लींकारं च अकारं च बिन्दुयुक्तं ततः परम् । ह्लींकारं च तृतीयं वै एकपंक्तौ लिखेद्बुधः ।।३।। अधःपंक्तौ ततो नाम वर्तुलं वेष्टयेत्ततः । चतुर्दलं ततः कुर्याद्रेखाद्वितयभूषितम् ।४। दलमध्ये तथा लेख्यं मध्यदेशे तथैव च । अजारक्तेन संमिश्रं भक्तं नैवेद्यकं भवेत् ।। ५ ।। बलिपुष्पैः प्रपूज्याथयन्त्रं रात्रौ वरानने । योगिनीं भोजयेच्चैकां गुरुं संपूज्य

शत्रुविद्वेषणयंत्रम्



श्रीशिवजी बोले—अब शत्रुविद्वेषण नामक-यंत्रको कहता हूँ, इस प्रयोगके करनेसे शत्रुओंका परस्पर विद्वेप होगा । विधान यथा-श्मशानके वस्त्रपर अपने विद्वेषीके रक्तसे काकके पंखकी कलमसे एक गोलाकार चक्र खींचकर दो रेखावाले कमलदलों को पूर्वादि चारों भागोंमें स्थापितकरे । इसके पीछे उस गोलाकार चक्रके भीतर तथा चारों दल और प्रतिदलके संधिभागके समीप ह्लीं, अ, ह्लीं, इन तीन बीजोंको ऊपरके भागमें और साध्य मनुष्यके नामके अक्षरोंको नीचेक भागम लिखे अर्थात् ऊपर-नीच लिखे । हे वरानन ! इस प्रकार यंत्रराजका निर्माण करक अजारक्त मिश्रित भात और नैवेद्य इनकी बलि तथा गंध पुष्पादिसे रात्रिके

यत्नतः ।। ६ ।। उद्वासे शिवगेहे तु स्थाप्यं यन्त्रं न संशयः । श्मशानेऽप्यथवा स्थाप्यं गृहे नैव कदाचन ।। ७ ।। शत्रूणां जायते द्वेषः क्रमेणैव न संशयः । स्वशत्रूद्वेषणं नाम यन्त्रराजं महाफलम् ।। ८ ।। एकान्ते स्मरणीयं च लोकान्ते न कदाचन ।। ९ ।।

इति श्रीय० ना० उ० वि० दा० शत्रुविद्वेषणं नाम द्वितीयं यन्त्र ।।२।।

श्रीशिव उवाच ।। अतः परं प्रवक्ष्यामि बन्धुविद्वेषणं परम् । श्मशानकर्पटे लेख्यं लेखन्या काकपिच्छया ।। १ ।। मेषस्य रुधिरेणैव घृष्ट्वाऽङ्गारं श्मशानकम् । साध्यनाम लिखित्वा तु त्रिकोणं वेष्टयेत्ततः ।। २ ।। अधोपरि च रेफौ च संलेख्यौ भूतरात्रिषु । ततस्तद्वेष्टयेत्सम्यक् चतुष्कोणं तु रेखया ।। ३ ।।

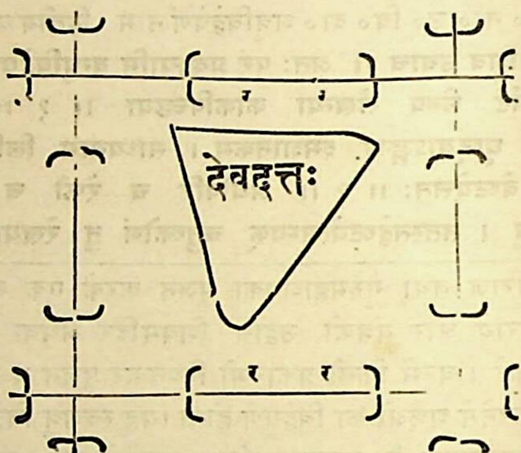
समय यंत्रराज तथा गुरुमहाशयका पूजन करके एक योगिनीको भोजन करावे और यंत्रको उद्वास शिवमंदिर अथवा श्मशानमें स्थापित करे । घरमें किसी प्रकारभी स्थितकर पूजन न करे । इस प्रयोगके करनेसे शत्रुओं का विद्वेषण होगा । यह स्वशत्रु विद्वेषण नाम यंत्र महाफलदायक है, इसका प्रयोग एकान्तमें करे, हर किसीके सामने न करे ।। १–९ ।।

इति यंत्रचि० वि० स्वशत्रु विद्वेषण नामक दूसरा यंत्र ।। २ ।।

श्रीशिवजी बोले–अब बंन्धुविद्वेषण नाम यंत्रको कहता हूँ-श्मशान वस्त्रके ऊपर काकपक्षकी लेखनीसे एक चतुष्कोण यंत्रको खींचकर उसके भीतर त्रिकोण यंत्रको खींच प्रत्येक कोणमें डार २ त्रिशूल लिख पूर्वादि चारों दिशाओंकी रेखाओंमें दोहरे रकार स्थापित करे । तत्पश्चात् भूतरात्रिमें श्मशानके अंगारको मेष (भेड़) के रुधिरमें घिसकर उससे उक्त त्रिकोणके भीतर साध्यव्यक्तिके नामाक्षरोंको लिखकर त्रिकोणके ऊपर-नीचे दो-दो रकार वर्ण लिखे । इस प्रकार यन्त्रको लिखकर पूर्ववत् पूजनकर

कोणे कोणे त्रिशूलानां संलेख्यं च चतुष्टयम् । चर्तुदिक्सं-मुखं लेख्यं चतूरेफोपरि स्थितम् ।। ४ ।। एवं संलिख्य यन्त्रं तु संपूज्यं पूर्ववत्पुनः । सप्ताङ्गुलं निखन्यात्तु पूरयेद्भूमिमध्यतः

वन्धुविद्वेषणयंत्रम्



।। ५ ।। यत्रास्ति तेषां मार्गश्च तत्रैव प्रक्षिपेत्ततः । परस्परं महा-द्वेषोबन्धूनां संप्रजायते ।। ६ ।।यस्य पादः पतत्यत्र सोऽपि दौर्भाग्य-भाग्जनः । जायते नात्र संदेहो यन्त्रराजप्रसादतः ।। ७ ।।

इति श्रीयन्त्रचिं० वन्धुविद्वेषणं नाम तृतीयं यन्त्रम् ।। ३ ।।

सात अंगुल भूमि खोद यन्त्रको दाव दे । तव परस्परमें वन्धुओंका निश्चयही विद्वेष होगा, अथवा अन्य किसीका भी भूमिमध्यमें स्थित यन्त्रके ऊपर पैर पड़ेगा तो वह भी दौर्भाग्यका भागी होगा। इस यन्त्रराजका ऐसा प्रभाव है। परन्तु उस स्थान में दावे जहां कि शत्रुके आने-जानेका मार्ग हो ।। १–७ ।।

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणिकी छठी पीठिकाके विद्वेषणाधिकारमें वन्धुविद्वेषण नामक तीसरा यन्त्र ।। ३ ।।

श्रीशिव उवाच ।। अतः परं प्रवक्ष्यामि विद्वेषं स्वामिभृत्ययोः । विषेण रक्तमिश्रेण लेखन्या काकपिच्छया ।। १ ।। श्मशानकर्पटे लेख्यं चतुर्दश्यां महानिशि । साध्यनामाख्यगर्भं तु वर्तुलं वेष्टयेत्ततः ।। २ ।। तस्योपरि अधोभागे रकारत्रितयं पुनः । यकारं संपुटे लेख्यं तिर्यग्भागे द्विबीजकम् ।।३।। यकारं च सकारं च विसर्गान्तं प्रतिष्ठितम् । एवं संलिख्य यन्त्रं तु वर्तुलं वेष्टयेत्ततः ।। ४ ।। एवं संलिख्य यन्त्रं तु तेषां मार्गे निखन्य तु । संजायते महाद्वेषः स्वामिसेवकयोः सदा ।। ५ ।। यावद्यन्त्रं तु भूमिष्ठं तावद्द्वेषः प्रजायते।।६।।

स्मामिभृत्यविद्वेषणयन्त्रम्



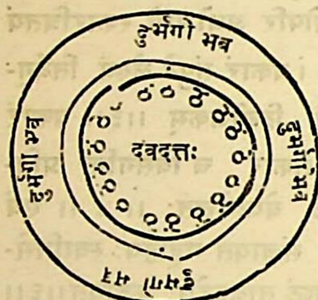
इति श्रीयन्त्रचिं० स्वामिभृत्ययोर्विद्वेषणं नाम चतुर्थं यन्त्रम्।।४।।

श्रीशिवजी बोले—अब स्वामी और सेवकके विद्वेषकारक यन्त्रको कहता हूं। विधान यथा-रुधिर मिले विषसे काकपक्षकी लेखनीके द्वारा श्मशान कर्पटके ऊपर एक गोलाकार यन्त्रको खींच एक अंगुलके अन्तरसे उक्त यन्त्रके बहिर्भागमें एक यन्त्र और खींचकर प्रथम चक्रके भीतर साध्य व्यक्ति के नामको लिख पुनः दूसरे यन्त्रके मध्य पूर्वपश्चिम भागमें यकारपुटित ३ रकार वर्णोंको और उत्तर दक्षिण भागोंमें विसर्गान्त यकार सकारोंको लिखे। तत्पश्चात् गन्धपुष्पादिसे यन्त्रका पूजनकर स्वामी-सेवकके मार्गमें भूमि खोदकर दबादे तो स्वामी सेवकका प्रतिदिन विद्वेष रहेगा।। १–६।।

इति यन्त्रचिन्तामणिकी० स्वामीसेवकविद्वेषणनामक चौथा यन्त्र।४।

श्रीशिव उवाच ।। शृणु देवि प्रवक्ष्यामि जगद्द्वेषणकं परम् । यन्त्रं भयानकं नाम दौर्भाग्यस्य विवर्धनम् ।। १ ।। काकोलूकस्य रक्तेन ऋतुरक्तेन वा पुनः । दौर्भाग्यललनायाश्च लेखन्या काकपिच्छया ।। २ ।। विलिखेद्भूर्जपत्रे तु साध्यनाम निशि प्रिये । कृष्णाष्टम्यां चतुर्दश्यां लिखेद्यन्त्रं मनोहरम् ।।३।। साध्यनाम लिखेन्मध्ये ठकार परिवेष्टितम् । ठकाराणां न संख्याऽस्ति विषमैर्वेष्टयेत्सदा ।।४।। ततस्तु वर्तुलं वेष्टचं दुर्भगो भव वेष्टयेत् । एतद्यन्त्रं तु संस्थाप्यं तद्गृहे तृणमध्यतः ।।५।। यावद्गृहस्थं तद्यन्त्रं सोऽपि तद्गृहतः सदा । तावद्विश्वस्य शत्रुः स्यान्नात्र

विश्वविद्वेषणयन्त्रम्



श्रीमहादेवजी बोले—हे देवि ! अब जगत् विद्वेषक नामक यन्त्रको कहता हूं सुनो, इस यन्त्रका भयानक नाम है और दौर्भाग्य-वृद्धि इसका प्रभाव है । विधान यथा--काक, उलूक इनके रक्तसे काकपंखकी लेखनीसे एक गोलाकार चक्र दूसरा उसके अंगुलमात्रके अन्तरसे लिखे तथा चक्रके मध्यमें साध्यव्यक्तिके नामको लिखे। उसके पूर्व भागमें चार ठं बीज और पश्चिम भागमें तीन ठं बीज तथा दक्षिण उत्तरभागमें दो दो ठं बीज लिख बहिर्भाग के पूर्वादि चारों भागोंमें 'दुर्भगोभव' इस वाक्यको लिखे । इसके पीछे गन्ध पुष्पादि से पूजनकर घरके मध्यमें तृणमें स्थापित कर दे अर्थात् घास इत्यादिकमें दबाकर रख दे । उक्त यंत्र जब तक गृहमें स्थित रहेगा तब तक घरमें विद्वेष शांत न होगा और विश्व मात्रका शत्रु

कार्या विचारणा ।। ६ ।। पूजाक्रमस्तु पूर्वोक्तो यन्त्रे देवि नृणां सदा ।। ७ ।।

इति श्रीयंत्र० विश्वविद्वेषणं नाम पञ्चमं यन्त्रम् ।। ५ ।।

चिन्तामणौ यन्त्रवरे सुकल्पे श्रीचन्द्रचूडस्य मुखाद्विनिर्गते । तस्मिश्चतुर्थे तु महाधिकारे पूर्णा तु पीठी कथिताऽत्र षष्ठी ।। १ ।। पञ्चैव यन्त्राणि महाधिकारे चकार दामोदरविप्रवर्यः । रहस्यभूतानि विचार्य लोके शृण्वन्ति ये ते सुखिनः सदा नराः ।। २ ।।

इति श्रीयन्त्रचिं० महाकल्पे प्र० सि० उ० सं० दा० पंडितोद्धृते षष्ठपीठिकायां विद्वेषणाऽधिकारः समाप्तः ।।

होगा । इसमें किसी प्रकारका संदेह नहीं करना चाहिये । हे देवि ! पूजाका क्रम उक्त यंत्रके समान है ।। १–७ ।।

इति यंत्र० ष० पी० में विश्वविद्वेषणनामक पाँचवां यंत्र ।।५ ।।

श्रीशिवजी महाराजके मुखकमलसे निकले हुए सुकल्प चिन्तामणि नाम सुयंत्रकी छठी पीठिका समाप्त हुई । इस महाअधिकारमें विप्रवर्य्य दामोदरजीने पाँच ही यन्त्र वर्णन किये हैं । जो मनुष्य रहस्यभूत समझकर इन यन्त्रोंका श्रवण करेंगे वे सदैव सुखी रहेंगे ।। १–२ ।।

इति श्रीयंत्रचिन्तामणौ महाकल्पे प्रत्यक्षसिद्धिप्रदे उमामहेश्वरसम्वादे षष्ठपीठिकायां बलदेवप्रसादमिश्रकृतभाषाटीकासहितो विद्वेषणाधिकारः समाप्तः ।।

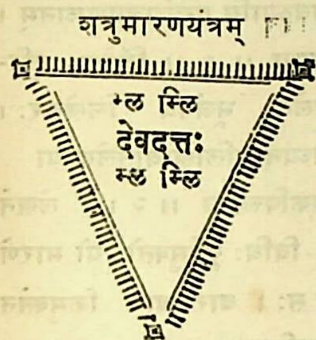
अथ मारणाधिकारः

ब्रह्माण्डं सर्वमेतत्पचति बहुविधं यः सदा भूतजातं संस्तुत्यः सर्वदेवैः करकलितमहाकालदण्डोऽतिरौद्रः । नत्वा तं कालसंज्ञं विरचयति महापञ्चमं चाधिकारं मृत्योः संदर्शनाख्यं प्रकटयति महो गङ्गदत्तस्य सूनुः ।। १ ।। संमारणो नाम महाधिकारः प्रारभ्यते संप्रति सप्तमो मया। सा सप्तमी स्यात्किल कल्पवल्ली चिन्तामणौ श्रीशिवभाषितेऽस्मिन् ।। २ ।।

श्री शिव उवाच ।। अतः परं प्रवक्ष्यामि यन्त्रं शत्रोस्तु मारणम् । एतद्यन्त्रं तु संलेख्यं कपाले तु नरस्य च ।। १ ।। श्मशानाङ्गारकं घृष्य धत्तूरकरसेन तु । श्मशाने चैव संलेख्य चतुर्दश्यां महानिशि ।। २।। निशंकेन विवस्त्रेण एकाकी यन्त्रमुत्तमम् । मध्ये नाम

जो अनिर्वाच्य शिवस्वरूप परमात्मारौद्ररूपको धारण कर सम्पूर्ण देवताओंसे स्तूयमान निज दण्डसे नानारूप इस भूतजात ब्रह्माण्डको पका रहे हैं उन रौद्रस्वरूप यममार्गदर्शी श्रीशिवजी महाराजको प्रणामकर मृत्युस्थान प्रकाश पंचम महाअधिकारकी गंगादत्तजीके पुत्र श्रीदामोदरजी रचना करते हैं ।। १।। मैं अब पंचम मारण नाम महाअधिकारका वर्णन करता हूं । इस शिवोक्त चिंतामणि नामक महायन्त्रमें सप्तमी पीठिकाको सप्तमी कल्पवल्ली कहते हैं।। २ ।।

श्रीशिवजी बोले । अब शत्रुमारण यन्त्रको कहता हूं – प्रयोग करनके समय इस यन्त्रको मनुष्यके कपालपर लिखना चाहिये । श्मशानके अंगारको धतूरक रसमें घिसकर कृष्णपक्षकी चतुर्दशीकी रात्रिमें श्मशानमें ही यन्त्र लिखना योग्य है । निशंक हो वस्त्रोंको त्याग अकेला उक्त कपालके बीचमें साध्य व्यक्तिके नामको लिख ऊपर नीचे म्ल-म्लि इन अक्षरोंको लिखे। फिर त्रिकोण



लिखित्वा तु लिखेन्म्ल-म्लि तथोपरि ॥ ३ ॥ अधोऽपि म्लम्लि बीजौ द्वौ विलिख्यौ साधकेन तु । त्रिकोणं वेष्टयेत्पश्चाद्रेखाद्वितयशोभितम् ॥ ४ ॥ ऊर्ध्वरेखास्तु कर्तव्याः सर्वत्रापि वरानने । शरावसम्पुटे क्षिप्त्वा यन्त्रं तत् सम्प्रपूजयेत् ॥ ५ ॥ बलिमांसोपहारैस्तु स्वरक्तेन विशेषतः । एतद्यन्त्रं तु तत्रैव निखन्यादथ पूरयेत् ॥ ६ ॥ उपरि ज्वालयेन्नूनं रात्रौ रात्रौ शुचिस्मिते । एवं कृते तृतीयेऽह्नि शत्रोः संजायते ज्वरः ॥ ७ ॥ क्रमेणैव महाव्याधिस्ततो वै मरणं भवेत् । एक जीवं बलिंदत्त्वा उद्धृते जीवते हि सः ॥ ८ ॥ नो चेद्यमपुरं याति नाऽत्र कार्या विचारणा ॥ ९ ॥

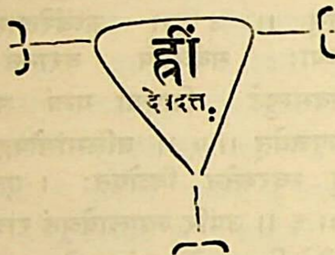
इति श्रीयन्त्रचिन्ता० ना० उ० म० दा० सप्तमे मारणाधिकारे शत्रुमारणं नाम प्रथमं यन्त्रम् ॥ १ ॥

दो रेखाओंसे वेष्टितकर ऊपरकी मात्रा लगा शरावसंपुटमें रख बलि, मांस, पूजा सामग्री स्वरक्तआदि से पूजनकर वहीं गाड़ दे और हे सुचिस्मिते ! प्रत्येक रात्रिमें उसके ऊपर अग्निको प्रज्वलित करता रहे । इस प्रकार करनेसे तीसरे दिन शत्रुको ज्वर आ जायेगा और धीरे-धीरे रोग के प्रवल होनेसे उसकी मृत्यु हो जायगी । यदि एक जीवको बलि देगा तो प्राणोंसे रक्षित होगा, नहीं तो यमपुरीको जायगा ॥ १–९ ॥

इति यंत्रचि० सातवीं पीठिका मारणाधिकारमें शत्रुमारण नाम पहला यंत्र ॥ १ ॥

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि यन्त्रंशत्रुप्रणाशनम् । मारणं प्रबलस्यापि शत्रोर्मृत्युर्न चान्यथा ।। १ ।। विषेण हरितालेन भूर्जपत्रे लिखेन्नरः । साध्यनामलिखित्वातुलेखन्या काकपिच्छया ।। २ ।। लेखने तु विधिः पूर्वमुक्तो यो मारणे हि सः । वारं वारं किमुक्तेन ग्रन्थविस्तरकारणम् ।। ३ ।। ह्रींकारगर्भमध्ये तु साध्यनाम

शत्रुमारणयंत्रम्



प्रतिष्ठितम् । ततस्तद्वेष्टयेत्सम्यक् त्रिकोणं पूर्ववत्पुनः ।। ४ ।। कोणे कोणे त्रिशूलं च विलिख्याऽथ प्रपूजयेत् । पूजने विधिराद्योक्तः सर्वत्राऽपि च मारणे ।। ५ ।। नराङ्घ्रिनलिकामध्ये क्षिपेद्यन्त्रं सुपूजितम् । खात्वाश्मशान भूमिष्ठा नलिका तु सुयं-

---

श्रीशिवजी बोले–अब शत्रुप्रणाशक यन्त्र कहा जाता है। मारणसे ही प्रबल शत्रुकी मृत्यु होती है अन्यथा नहीं । विधान यथा-विष, हरताल इनको एकत्रितकर काकपक्षकी लेखनीसे भोजपत्रके ऊपर त्रिशूलयुक्त एक त्रिकोण यंत्रको खींचकर ह्रीं बीजके मध्यमें साध्यव्यक्तिके नामाक्षरोंको लिखे । लेखनका प्रकार मारणयंत्रमें कह चुके हैं । वारम्वार कहनेसे ग्रंथका विस्तार होगा । परंतु लेखनी काकपक्षहीकी होनी चाहिये । इस प्रकार यंत्रको निर्माणकर उक्त विधानपूर्वक ही सव जगह पूजन करना चाहिये ।

त्रिका ॥ ६ ॥ अकस्मान्मरणं तस्य जायते नाऽत्र संशयः । अनुग्रहस्तु पूर्वोक्तः सर्वत्राऽपि च मारणे ॥ ७ ॥

इति यंत्रचि० मारणाधिकारे शत्रुमारणं नाम द्वितीयं यंत्रम्॥२॥

देशान्तरस्थशत्रुमारणयन्त्रम्

श्रीशिव उवाच ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि मारणं दूरदेशजम् । श्मशानाङ्गारकं घृष्य अजारक्तं तथैव च ॥१॥ विषं चैव तु संघृष्य लिखेन्नरकपालके । सम्पुटं चैव संलेख्यं लेखन्या काकपिच्छया ॥ २॥ साध्यनाम लिखेन्मध्ये हुंकारपुटितं शुभम् । ततश्चाष्टदलं कृत्वा ग्रहसंस्थापने यथा ॥ ३ ॥ चतुर्दलं तु संलिख्य

पुनः यंत्रका पूजनकर नरनालिकामें रखकर श्मशान भूमिमें खोदकर गाड़ दे तो अचानक शत्रुकी मृत्यु हो जायगी ॥ १– ७॥

इति यंत्र० सातवीं पीठिकाके मा० में शत्रुमारणनामक
दूसरा यंत्र ॥ २ ॥

श्रीशिवजी बोले–अब दूरदेशमें स्थित पुरुषोंका मारण यन्त्र कहता हूँ, श्मशानके अंगारको विष और अजाके रुधिरमें मिलाकर मनुष्यके कपालके मध्यमें काकपक्षकी लेखनीसे दो रेखायुक्त गोलाकार यंत्रको खींच कर उसके मध्यमें एक आठ दल खींचे कि, जैसा ग्रहकांडीमें खींचा जाता है । फिर प्रत्येक दलमें हुं फट् इस बीज

हुं फट्तु दलमध्यतः । ततस्तु वेष्टयेत्सम्यग्वर्तुलं तु द्विरेखया ।। ४ ।। हुंकारैर्वेष्टयेत्सम्यग्विषमैः सर्वतः प्रिये । ततस्तत्सम्पुटं मेल्य भस्मना पूरयेच्छुभे ।। ५ ।। अग्नेरुपरि संस्थाप्य पूरयित्वा यथोदितम् । देशान्तरगतस्यापि शत्रोः संजायते ज्वरः ।। ६ ।। प्रत्यहं ज्वालनीयं तु स्तोकं स्तोकं तु सुन्दरि । दिने एकाधिके विंशे सर्वं तज्ज्वलयेन्निशि ।। ७ ।। तस्मिन्नेव क्षणे शत्रोर्मरणं जायते प्रिये । अनुग्रहे तु पूर्वोक्तं विधानमिति निश्चितम् ।। ८ ।।

इति य० स० पी० देशान्तरस्थशत्रुमारणं नाम तृतीयं यन्त्रम् ।। ३।।

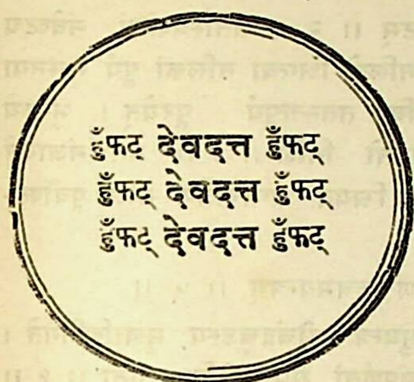
श्रीशिव उवाच ।। अतः परं प्रवक्ष्यामि मारणं सर्वदेहिनाम् । रुधिरेण मनुष्यस्य श्मशानाङ्गारघर्षणैः ।। १ ।। विषेण च तथा लेख्यं कर्पटे वै श्मशानके । साध्यनाम लिखित्वा

मन्त्रको लिखकर बीचके भागमें दो हुंकारके बीच साध्यका नाम लिखे। तत्पश्चात् संपुटमें लेकर भस्मसे पूरितकर अग्निके ऊपर स्थापित करे । यदि शत्रु विदेशमें होगा तो भी उसको ज्वर आ जायगा। हे सुन्दरि! प्रतिदिन थोड़ा थोड़ाही प्रज्वालनीय है। क्योंकि, २१ वें दिन रात्रिके समयमें ही सब जलेगा। हे प्रिये! उसी समय शत्रुका मरण हो जायगा। पूजनके वृत्तान्तको प्रथम यंत्रमें कह चुके हैं।। १–८ ।।

इति यंत्र० मारणमें विदेशस्थशत्रुमारण नामक तीसरा यंत्र ।।३।।

श्रीशिवजी बोले—अब सम्पूर्ण मनुष्योंका मारण कहा जाता है। विधि-मनुष्यके रुधिरमें श्मशानके अंगारको घिसकर विष-मिलाकर काकपक्षकी लेखनीसे श्मशान वस्त्रके ऊपर वर्तुल तीन रेखावाले चक्रको खींचकर उसके भीतरभी तीन रेखाकी कल्पना

सर्वजनमारणयन्त्रम्



तु हुँफट् संपुटितं तथा ।। २ ।। एवं त्रिवारं संलिख्य त्रिपंक्तौ तु वरानने । ततस्तद्वेष्टयेत्सम्यग्वर्तुलं तु त्रिरेखया ।। ३ ।। राजिकाप्रतिमां कुर्याच्छत्रोश्चरणपांसुना । हृन्मध्ये यन्त्रकं क्षिप्त्वा शत्रोस्ताप्या तु पुत्तली ।।४।। शत्रोः क्रमक्रमेणैव दाहशोषस्तु जायते । शिरोव्यथा च महती तृतीयेऽह्नि प्रजायते ।। ५ ।। हस्तपादाङ्गदाहःस्यान्मरणं सप्तमे दिने । जायते नात्र संदेहो विधावपि न संशयः ।। ६ ।।

इति श्रीयन्त्र० सर्वजनमारणं नाम चतुर्थं यन्त्रम् ।। ४ ।।

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि यन्त्रं स्त्रीपुंसमारणम् । विभीतकस्य पत्रे तु श्मशानभस्मना लिखेत् ।। १ ।। ऋतु-

---

करे । पुनः प्रत्येक रेखामें हुंफट् इन बीज मंत्रोंसे पुटित साध्यव्यक्तिके नामको लिखे । इसके बाद शत्रुके चरणके नीचेकी धूलिकी राजिका मिश्रितकर एक प्रतिमा बनाये । उसके हृदयमें शत्रुमारणयंत्रको स्थापित करे तो क्रमपूर्वक दाह और व्याधि उत्पन्न होगी और तीसरे दिन सिरमें बड़ी पीड़ा होगी । फिर हाथ पैरमें दाह हो, निस्सन्देह सातवें दिन मृत्यु हो जायगी ।। १-६ ।।

इति यंत्र० सर्वजन मारण नामक चौथा यंत्र ।। ४ ।।

श्रीशिवजी बोले—अब स्त्री और पुरुषके मारणयंत्रको कहता हूँ । विधि-स्त्रीके मासिक रुधिरमें श्मशानकी भस्मको मिलाकर विभीतकके पत्रपर काकपक्षकी लेखनीसे त्रिकोण यंत्रको खींच

रक्तेन सम्मिश्रं लेखन्या काकपिच्छया । साध्यनाम लिखेन्मध्ये स्तम्भस्तम्भेति सम्पुटम् ।। २ ।। ततस्त्रिकोणं संवेष्टच पञ्चकोणं तथोपरि । मनुष्यनलिके क्षिप्त्वा नलिकां पूर्य मृत्स्नया ।। ३ ।। तन्मूत्रसिक्तया देवि ततस्तत्पूर्यं पूरयेत् । भूमध्ये तु खनित्वाऽथ श्मशाने प्रयतो निशि ।। ४ ।। ततः संजायते रोधो रिपोर्मूत्रस्य वै क्षणात् । म्रियते सप्तरात्रेण मोक्षः पूर्वोक्तमार्गतः ।। ५ ।।

इति नरनारीमारणं पञ्चमंयन्त्रम् ।। ५ ।।

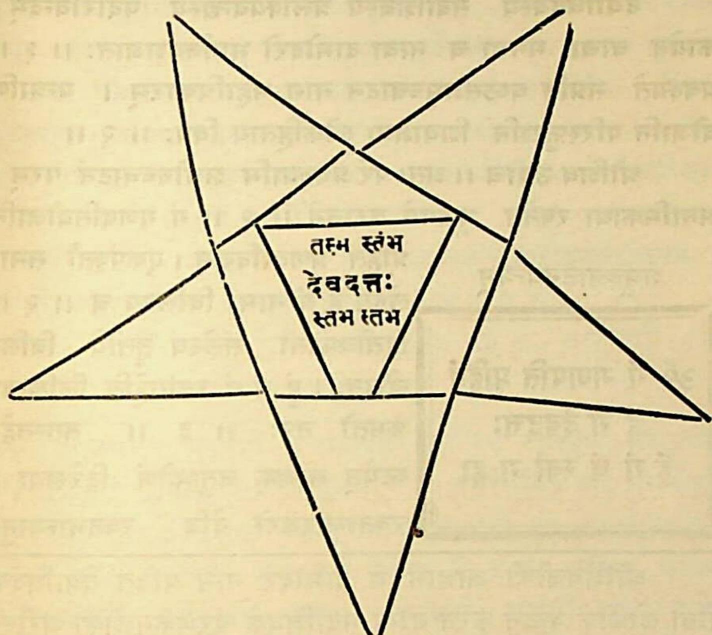
**चिन्तामणौ कल्पवरे सुयन्त्रे श्रीचंद्रचूडस्य मुखाद्विनिर्गते ।
नाम्ना महामारणसंज्ञके तु संपूर्णतां सप्तमपीठिका गता ।। १ ।।**

पंचकोणयंत्रको उसके बहिर्भागमें खींचे । इसके पीछे त्रिकोणके भीतर स्तम्भ, स्तम्भ इन बीजोंसे पुटित साध्यव्यक्तिके नामको लिख यंत्रको नर नलिकामें बंदकर तथा साध्य व्यक्तिके मूत्रसे सींची हुई मिट्टीसे पूर्णकर नियमपूर्वक रात्रिके समय श्मशानकी भूमिको खोदकर दाव दे तो उसी समय शत्रु मूत्र रोग से पीड़ित होगा और सात रात्रिमें उसकी मृत्यु हो जायगी । मोक्ष पूर्व कथनके अनुसार जान लेना चाहिये ।। १–५ ।।

इति यंत्रचिन्तामणिकी० नर नारी-मारण नामक पांचवाँ
यंत्र ।। ५ ।।

श्रीचन्द्रचूड शिवजी महाराजके मुखकमलसे निकले चिन्तामणिनाम मारण यन्त्रकी पंचयन्त्रसहित सप्तम पीठिका समाप्त हुई ।। १ ।। हे देवि ! अति रौद्र संमारण नाम इस पाँचवें अधि-

नरनारीमारणयन्त्रम्



पञ्चैव यंत्राणि महाधिकारे सम्मारणे पञ्चमकेऽतिरौद्रे । संहार-भूतानि सुकीर्तितानि मयैव देवि (वी) पुरतः स्फुटानि ॥ २ ॥

इति श्रीयंत्र० चि० ना० प्र० सि० दामोदर पंडितोद्धृत सप्तमपीठिकायां मारणाधिकारः समाप्तः ॥

कारमें संहाररूप पाँच ही यन्त्र मैंने विस्तार से तुम्हारे सम्मुख वर्णन किये हैं ॥ १ ॥ २ ॥ इति मारणाधिकार समाप्त ॥

अथोच्चाटनाधिकारः

देवाधिदेवस्य सदाशिवस्य त्रैलोक्यवन्द्यस्य पदारविन्दम्। कायेन वाचा मनसा च नत्वा दामोदरो भार्गववंशजातः ॥ १ ॥ प्रवक्ष्यते संप्रति षष्ठसंज्ञमुच्चाटन नाम महाधिकारम्। यन्त्राणि बीजानि परिस्फुटानि शिवाज्ञया लोकहिताय विप्रः ॥ २ ॥

श्रीशिव उवाच ॥ अतः परं प्रवक्ष्यामि शत्रोरुच्चाटनं परम्। अनामिकाया रक्तेन भूर्जपत्रे वरानने ॥ १ ॥ गं गणपतिबीजानि प्रहितं प्रणवादिकम्। एकपंक्तौ समालेख्यं हुं गं नाम विलिख्य च ॥ २ ॥ द्वितीयपंक्तौ संलेख्यं तृतीये विलिखेत्ततः। हुं गं धं स्वांगहेति लिखित्वा क्रमतो नरः ॥ ३ ॥ ततस्तद्वेष्टयेत् सम्यक् चतुष्कोणं द्विरेखया। रक्ताम्बरधरो देवि रक्तमाल्यानु-

शत्रूच्चाटनयन्त्रम्

ॐ गं गणपति प्रहितं
हुं गं देवदत्तः
हुं गं धं स्वां ग हा

श्रीशिवजीकी आज्ञासे मैं दामोदर नाम पंडित देवाधिदेव तीनों लोकोंके वन्दन करने योग्य सदाशिवके चरणकमलोंको शरीर, वाणी, मनसे नमस्कार कर उच्चाटन नाम महाधिकारको लोगोंके हित के लिये वर्णन करता हूं जिसमें यन्त्र और बीज विस्तारसे वर्त्तमान हैं ॥ १ ॥ २ ॥

श्रीशिवजी बोले-अब शत्रुका उच्चाटन कहता हूँ। विधि-अपनी अनामिका अंगुलिके रुधिरसे भोजपत्रके ऊपर दो रेखा, मिलाकर एक चतुष्कोण यन्त्रको खींच उसके भीतर तीन रेखा खींचे। प्रथम रेखामें 'ओं' गणपतिप्रहितम् दूसरीमें हुं गं आदिमें लगा साध्यव्यक्तिके नामको, तीसरीमें हुँ गं धं स्वांग हा इनको लिखे। तत्पश्चात् साधक लालवस्त्र धारणकर रक्तमाला और

लेपनः ।। ४ ।। चतुर्दश्यां साधकस्तु महारात्रौ लिखेत्क्रमात् । पूजनं रक्तकुसुमै रक्तगन्धैः फलैः शुभैः ।। ५ ।। कुमारभोजनं रात्रौ यथाशक्त्या तु दक्षिणाम् । ध्यानं तु देवदेवस्य गणनाथस्य सुन्दरि ।। ६ ।। नीलाञ्जनाभं गजवक्त्रवर्यं शत्रुं गृहीत्वा निज-पुष्करेण । उच्चालयन्तं गगनं गणेशं ध्यात्वा तु नित्यं विधि-वन्मनुष्यः ।। ७ ।। उच्चाटयेदत्र न संशयोऽस्ति दिनैस्तथैका-धिकविंशसंख्यैः । अयं क्रमो लेखनपूजने च सर्वत्र उच्चाटकृता-धिकारे ।। ८ ।। खण्डं कृत्वा तु तद्यन्त्रमुच्छिष्टौदनमिश्रितम् । दीयते भक्षणार्थं च वायसेभ्योऽन्तिमे दिने ।। ९ ।।

इ०श्री० यं० चि० ना० म० क० प्र० सि० उ० सं० अष्टमपीठिका-यामुच्चाटनाधिकारे शत्रूच्चाटनं नाम प्रथमं यन्त्रम् ।। १ ।।

रक्त अनुलेपनसे युक्तहो कृष्णपक्षकी रात्रिमें रक्तपुष्प, रक्तगंध, स्वच्छ फल, इनसे यन्त्रका पूजन करे। यथाशक्ति दक्षिणा देकर कुमारको भोजन कराकरगणोंके नाथ देव देवेश्वर श्रीगणेशजीका ध्यान करे। ध्यानका क्रम इस प्रकार है—अंजन पर्वतके समान नीलवर्णवाले, गजमुखके धारण करनेवाले, शत्रुको अपने शुंडा दंडसे ग्रहणकर आकाश मंडलमें उछालनेवाले श्रीगणनाथका विधि-पूर्वक ध्यानकर उच्चाटन प्रयोग करना योग्य है। इस विधानके करनेसे २१ दिनमें निश्चयही शत्रुका उच्चाटन हो जायगा। इस प्रकारसे सम्पूर्ण उच्चाटन प्रयोगों का लेखन-पूजन करना चाहिये। इसके बाद उक्त यन्त्रके टुकड़े करके जूंठे चावलमें मिलाकर अंतिम दिन कौवोंको खिला दे।। १–९ ।।

इति यन्त्रन्चितामणिकी आठवीं पीठिकाके उच्चाटनाधि-कारमें शत्रु उच्चाटननाम पहला यन्त्र ।। १।।

श्रीशिव उवाच।। अथातः संप्रवक्ष्यामि सद्य उच्चाटनं परम्। विषेण तालकेनैव गोदन्तहरितालके ।।१।। चित्रकस्य रसेनैव लिखेत् काकं तु कर्पटे। श्मशानजे तु लेखन्या काकपिच्छसमुत्थया ।। २ ।। साध्यनाम लिखेत्पश्चाद्वायसोदरमध्यतः। पूजने लेखने चैव पूर्वोक्त-स्तु विधिः स्मृतः ।।३।। अधोमुखं तु तत्काकं लम्बमानं तु दक्षिणे।

सद्यउच्चाटनकरं यन्त्रम्



विभीतकस्य वृक्षे तु बन्धयेत्प्रयतो निशि ।।४।। एवं कृते तृतीयेऽह्नि स्थानादुच्चाटनं भवेत्। यावद्यन्त्रं तु तत्रस्थमुद्विग्नस्तावदेव हि ।। ५ ।। न रोचते गृहं तस्य सुखं न लभते क्वचित् । विदेशगमनं तस्य संशयेन च जीवितम् ।। ६ ।।

इति यन्त्रचि० अ० पी० सद्यउच्चाटनकरं नाम द्वितीयं यन्त्रम्।।२।

श्रीशिवजी बोले—अब शीघ्र उच्चाटनकारक यन्त्रको कहता हूँ। विधि-विष, तालक, गोदन्ती-हरताल, चीता इन सब वस्तुओंके रसको एकत्रितकर काकपक्षकी लेखनीसे श्मशान वस्त्रके ऊपर एक काककी मूर्ति निर्माणकर उसके उदरमें साध्यव्यक्तिके नामको लिख पहली विधिके अनुसार पूजन करे। इसके बाद विभीतक वृक्षके दक्षिणभागमें रात्रिके समय नियममें तत्पर हो साधक उस काककी प्रतिमाको अधोमुखकर टाँगदे। ऐसा करनेसे तीसरे दिन स्थानसे उच्चाटन होगा और तबतक उद्विग्न रहेगा जबतक वह प्रतिमा टंगी रहेगी न तो घर उसको प्यारा होगा और न कहीं उसको सुख प्राप्त होगा। विदेश जाने परभी उसको सुख न होगा। किन्तु संशय पूर्वक ही जीवित रहेगा ।। १ –६।।

इति यन्त्रचिन्तामणिकी आठवीं पीठिकाके उच्चाटनाधि-कारमें शीघ्र उच्चाटनकारक दूसरा यंत्र ।। २ ।।



सर्वजनोच्चाटनयन्त्रम्

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि उच्चाटं सर्वदेहिनाम् । काकोलूकस्य रक्तेन भूर्जपत्रे लिखेन्नरः ।।१।। मध्ये नाम लिखित्वा तु वर्तुलं वेष्टयेत्ततः । चतुर्दलं ततः कुर्याद्रेखाद्वितयशोभितम् ।।२।। यकारं दलमध्ये तु विसर्गान्तं प्रतिष्ठितम् । पूजाक्रमस्तु पूर्वोक्तो ध्यानं देवविसर्जनम् ।। ३ ।। खण्डं कृत्वा तु तद्यन्त्रमुच्छिष्टौदनमिश्रितम् । दीयते भक्षणार्थं च वायसेभ्योऽन्तिमे दिने ।। ४ ।। दिशं संत्यज्य यात्येव ग्रामस्यैव तु का कथा ।। ५ ।।

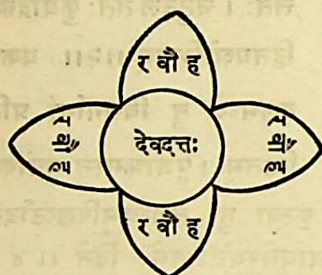
इति यं० चिं० दा० सर्वजनोच्चाटनं नाम तृतीयं यन्त्रम् ।। ३ ।।

श्रीशिवजी बोले–अब सम्पूर्ण मनुष्यों का उच्चाटन विषय कहता हूं । काक और उल्लूक रुधिरसें भोजपत्रके ऊपर गोलाकार यंत्रको खींचकर पूर्वादि चारों दिशाओंमें दो रखायुक्त चार कमल दल खींच प्रत्येक दलमें विसर्गयुक्त यकारवर्ण को स्थापितकर मध्यभागमें साध्यव्यक्तिक नामको लिखकर उक्त विधिसे पूजनकर ध्यानसे विसर्जनकर यन्त्रके टुकड़े २ करके जूठे भातमें मिलाकर अंतिम दिन कौवोंको खिला दे तो, साध्यव्यक्ति दिशाको छोड़कर चला जायगा, ग्रामकी तो बातही क्या है ।। १–५।।

इति श्रीयन्त्र० उ० सर्वजनोच्चाटननामक तीसरा यन्त्र ।।३।।

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि शत्रोरुच्चाटनं परम् । निम्बपत्ररसैर्लेख्यं लेखन्या काकपिच्छया ।। १ ।। भूर्जपत्रोपरि क्षिप्तं विधिः पूर्वोक्त एव हि । मध्ये नाम लिखित्वा तु वर्तुलं वेष्टयेत्ततः ।। २ ।। चतुर्दलं ततः कुर्याद्बीजयुक्तं मनोहरम्

शत्रोरुच्चाटनयन्त्रम्



रवौ ह इति बीजानि दलमध्ये पृथक् पृथक् ।।३।। संपूज्य पूर्ववत् पश्चान्निखन्यादथ पूरयेत् । अधोमुखं तु तद्यन्त्रं पूर्वोक्तविधिना ततः ।। ४ ।। एवं कृते सप्तमेऽह्नि उच्चाटयति नान्यथा । भ्रमेद्देशे विदेशे च तृणवत्परिभूयते ।। ५ ।।

इति श्रीयन्त्रचि० शत्रोरुच्चाटनं नाम चतुर्थं यन्त्रम् ।। ४ ।।

श्रीशिवजी बोले–अब शत्रुका परम उच्चाटन कहता हूँ । नीमके पत्तोंके रससे भोजपत्रके ऊपर काकपंखकी लेखनीसे गोलाकार चक्र खींचकर दो रेखायुक्त दल लगा र वौ ह इन वर्णोंको प्रत्येक दलमें लिख साध्यव्यक्तिके नामको लिखे । उपरोक्त यन्त्रके समान इसका भी विधान है । इसके पश्चात् उक्त विधानसे पूजनकर भूमि खोदकर अधोमुख दाब दे । यदि देश अथवा विदेशमें भ्रमण करता भी होगा तो भी तृणवत् त्यागकर सातवें दिन उच्चाटनको प्राप्त होगा इसमें किसी प्रकारका संदेह नहीं ।। १–५ ।।

इति यन्त्रचिन्तामणिमें शत्रूच्चाटन नामक चौथा यन्त्र ।। ४ ।।

श्रीशिव उवाच ॥ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्त्रमुच्चाटनं स्त्रियः। गर्दभस्य तु रक्तेन लेखन्या काकपिच्छया।१॥ फलके च लिखित्वा तु वर्तुलं वेष्टयेत्ततः। ततश्चाष्टदलं कुर्याद्बीजयुक्तं मनोहरम् ॥ २ ॥ खकारं सविसर्गान्तं ह्रींकारं तदनन्तरम्। एवं यन्त्रं तु संलिख्य पूजयित्वा विधानतः ॥ ३ ॥ निखन्य भूमौ संपूर्य पूर्ववच्चाप्यधोमुखम्। कृते ह्येवं तृतीयेऽह्नि शत्रोरुच्चाटनं भवेत् ॥ ४ ॥ उच्चाटयति स्थानात्तु चलते वायुपर्णवत् ॥ ५ ॥

स्त्रियाउच्चाटनयंत्रम्



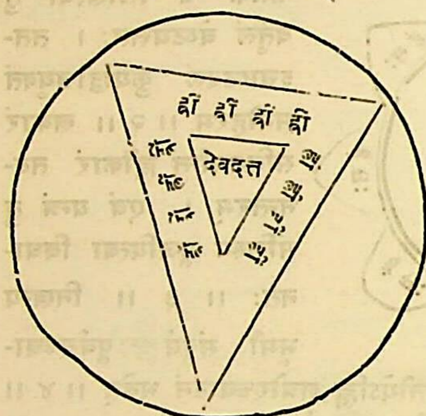
इ० य० चि० ना० म० प्र० उ० हं० अ० पी० स्त्रीणां सद्य-उच्चाटनं नाम पञ्चमं यन्त्रम् ॥ ५ ॥

श्रीशिवजी बोले–हे देवि! अब स्त्रीके उच्चाटनका यन्त्र कहता हूं। विधि-गधेके रुधिरसे काठके टुकड़ेके ऊपर काकपक्षकी लेखनीसे गोलाकार चक्र खींचकर आठ दलसे सुशोभितकर विसर्गान्त खकार और ह्रीं बीजको प्रत्येक दलमें लिखकर चक्रके मध्यमें साध्यव्यक्तिके नामको लिखे इसके बाद विधिपूर्वक पूजनकर भूमि खोद अधोमुख दाव दे, तो तीसरे दिन शत्रुका उच्चाटन होगा और उससे पूर्ण, वायुसे उड़ाया हुआ पत्तल केसमान गमन करेगा।।१–५।।

इति यन्त्रचिन्तामणिकी आठवीं पीठिकाके उच्चाटनाधिकारमें स्त्रीउच्चाटन नामक पाँचवाँ यन्त्र ॥ ५ ॥

श्रीशिव उवाच ।। शृणु देवि प्रवक्ष्यामि त्रैलोक्योच्चाटनं परम् । कृष्णकुक्कुटरक्तेन भूर्जपत्रे लिखेन्नरः ।। १ ।। साध्यनाम लिखित्वा तु त्रिकोणं वेष्टयेत्ततः । पुनस्त्रिकोणं संलिख्य द्वितीयं तु वरानने ।।२।। तस्योपरि विभागे च ह्रींकाराणां चतुष्टयम् । एतस्त्रिभागे संलिख्यबीजानि रविसंख्यया ।।३।। परितोवर्तुलं कृत्वा पूजयेत् पूर्ववत्पुनः । एवं कृत्वा तु तद्यन्त्रं बध्नीयाच्च शुनो गले ।। ४ ।। यथायथा श्वा व्रजति तथा सोऽपि क्षणेन हि । उच्चाटयेन्न संदेहस्तत्क्षणात्सुरसुंदरि ।५।

त्रैलोक्योच्चाटनयंत्रम्



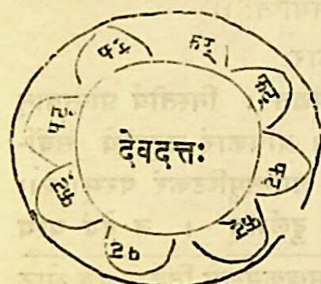
इति यं० चिं० ना० म० प्र० अ० उ० दा० त्रैलोक्योच्चाट नामक षष्ठंयन्त्रम् ।। ६ ।।

श्रीशिवजी बोले—हे देवि ! अब त्रिलोकीका उच्चाटन कहता हूँ, श्रवण करो । विधि काले मुर्गेके रुधिरसे भोजपत्रके ऊपर एक बड़ा त्रिकोणयंत्र खींचकर उसके भीतर एक ह्रस्व त्रिकोण और खींचकर गोलाकार चक्रसे गर्भितकर ह्रस्व त्रिकोण के भीतर साध्य व्यक्तिके नाम और दीर्घत्रिकोणकी प्रतिरेखाके नीचे चार चार ह्रीं बीजोंको लिखे । पुनः उक्त विधानपूर्वक पूजनकर कुत्तेके गलेमें बाँध दे तो जहाँ २ वह कुत्ता जायगा वहीं २ उच्चाटनको प्राप्त होकर उसी समय शत्रुभी जायगा । हे सुन्दरि ! इसमें किसी प्रकारका सन्देह नहीं है ।। १-५ ।।

इति यन्त्रचिन्तामणिकी आठवीं पीठिकामें उच्चाटनाधिकारमें त्रैलोक्योच्चाटन नामक छठा यन्त्र ।। ६ ।।

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि यन्त्रमुच्चाटनं परम् । निशाचररसैर्लेख्यं भूर्जपत्रे न संशयः ।। १ ।। साध्यनाम लिखित्वा तु वर्तुलं वेष्टयेत्ततः । उपर्यष्टदलं कृत्वा बीजयुक्तं मनोहरम् ।। २ ।। ततश्च लेख्यं फडिति प्रत्येकं दलमध्यतः । ततस्तद्वेष्टयेत्सम्यग्वर्तुलं रेखयैकया ।। ३ ।। संपूज्य विधिवत्पश्चाद्यन्त्रं संचूर्णयेत्ततः । खाद्ये पाने च दातव्यमुच्चाटो जायते ध्रुवम् ।।४।। हरिद्रातरुविख्यातो गुप्तनामा निशाचरः ।। ५ ।।

परमोच्चाटनयन्त्रम्



इति यन्त्रचिं० परमोच्चाटनं नाम सप्तमं यन्त्रम् ।। ७ ।।

श्रीशिवजी बोले–अब परम उच्चाटन यन्त्रको कहता हूँ। निशाचर (हलदी वृक्ष) के रससे भोजपत्रके ऊपर एक ह्रस्व गोलाकार चक्रको खींचकर उसके बाहिरी भागमें अष्टदल बनाकर एक ह्रस्व गोलाकार चक्र खींचे, जिसके खींचनेसे दलादिक गर्भगत होजायँ। पुनः प्रतिदलमें फट् इस बीजको लिख ह्रस्व गोलाकार चक्रके भीतर साध्यव्यक्तिके नामको लिख उक्त विधानपूर्वक पूजन कर यन्त्रका चूरणकर खाने पीनेमें देनेसे उच्चाटन हो जाता है। हलदीके वृक्षको निशाचर कहते हैं ।।१–५ ।।

इति यंत्रचिंतामणिकी आठवीं पीठिकाके उच्चाटन अधिकारमें परमोच्चाटन नामक सातवाँ यंत्र ।। ७ ।।

चिन्तामणौ यन्त्रवरे सुकल्पे श्रीचन्द्रचूडस्य मुखाद्विनिर्गते । उच्चाटने नाम महाधिकारे प्रकाशिता ह्यष्टमपीठिकेयम् ।। १ ।। सप्तैव यन्त्राणि महाधिकारे उच्चाटने श्रीशिवभाषितेऽस्मिन् । रहस्यभूतानि तु कीर्तितानि विप्रेण दामोदरसंज्ञकेन ।। २ ।।

इति यन्त्र० ना० म० प्र० उ० अ० दा० अष्टमपीठिकायुतो-
च्चाटनाधिकारः समाप्तः ।।

अथ शान्त्यधिकारः

यः पूर्वं जनकादेशादरण्यं समपद्यत । निस्तीर्य प्राप्तवान् सीतां तं रामं प्रणतोऽस्म्यहम् ।। १ ।। अधिकारं महद्वक्ष्ये सर्वोपद्रवनाशनम् । नवम्यां पीठिकायां तु शान्तिपुष्टिकरं परम् ।।२।। शान्तरक्षाकरं नाम ख्यातं सर्वत्र दुर्लभम् । न देयं यस्य

श्री चन्द्रचूड शिवजी महाराजके मुखकमलसे निकले यंत्र श्रेष्ठ चिंतामणि नामक सुकल्पका उच्चाटन नाम महाधिकारमें अष्टम पीठिका समाप्त हुई। इस शिवोक्त महाधिकारमें दामोदरजीने रहस्यभूत सातही उच्चाटन यन्त्रोंका वर्णन किया है। १–२ ।।

इति श्रीयंत्रचिंतामणौ नाम महाकल्पे प्रत्यक्षसिद्धिपदे उमा-
महेश्वरः संवादे दामोदरपण्डितोद्धृते बलदेवप्रसादकृतभा-
षाटीकायुते अष्टमपीठिकायाम् उच्चाटनाधिकारः समाप्तः।।

जो श्रीरामजी महाराज पिता की आज्ञाको पूर्णकर श्रीसीताजीको प्राप्त किये, मैं उन श्रीरामचन्द्रजीको नमस्कार करता हूं ।। १।। अब नववीं पीठिका कही जाती है, जिसमें शांति पुष्टिकारक सम्पूर्ण उपद्रवोंका नाशक महाधिकार कहा जायगा ।। २ ।। सिद्धिकी इच्छा करनेवाला साधक सर्वत्र दुर्लभ इस शांतरक्षाकरनामक यंत्रको विना अधिकारीके दूसरेको न दे ।। ३ ।। अब स्त्री पुरुष

कस्यापि यदीच्छेत्सिद्धिमात्मनः ।। ३ ।। नारीणांमनुजेषुशांतिककरान्रक्षाकरान्सर्वदा बालानां च तथैव सर्वसुखदान्मंत्राणि यन्त्राणिते । तांश्चोद्धृत्य महागमाच्च विविधात् गङ्गाधरस्यात्मजोनित्यं क्लृप्तमतिःप्रवक्ष्यति महादामोदरः साम्प्रतम् ।। ४ ।।

श्रीशिव उवाच ।। शृणु देवि परं गुह्यं यन्त्रं रक्षाकरं परम् । बालस्त्रीपुरुषाणां च महारक्षाकरं स्मृतम् ।। १ ।। कांस्यपात्रे तु संलेख्यं सुतिथौ शोभने दिने । रोचनाकुंकुमेनैव कर्पूरेण विशेषतः ।। २ ।। मृगनाभिसमायुक्तं जातीकाष्ठेन संलिखेत् । ऊर्ध्वमष्टाभी रेखाभिस्तिर्यग्रेखास्तथैव च ।। ३ ।। एवमेकोनपञ्चाशत् कोष्ठाश्च प्रभवन्ति हि । ईशानादिक्रमेणैव स्वरान् कोष्ठेषु संलिखेत् ।। ४ ।। तेनैव क्रमतो लेख्याः शेषकोष्ठेषु व्यञ्जनाः । एवं संलिख्य बीजानि त्रिशूलानि लिखेत्ततः ।। ५ ।।

वालक इनकी शांति रक्षा और वल इत्यादिके देनेवाले मन्त्र तथा यन्त्रोंको उद्धृतकर अतिनिर्मलवुद्धिवाले गंगाधरजीके पुत्र दामोदरजी वर्णन करते हैं ।। ४ ।।

शिवजी बोले–हे देवि ! वाल, वृद्ध, स्त्री, पुरुष इनके महारक्षाकारक यन्त्रको कहता हूँ, सुनो । विधान–शुभदिन और शुभ तिथिमें गोरोचन, कुंकुम, कर्पूर, कस्तूरी इन सव वस्तुओंको एकत्रितकर चमेलीकी कलमसे कांसीके पात्रके ऊपर आठ लम्बी और आठ चौड़ी रेखा खींचकर ४९ कोठेके यन्त्रको निर्माण कर प्रत्येक रेखाके मुखको त्रिशूलसे युक्तकरके पूर्व पश्चिमभागमें सात २ क्रौं बीज लिखकर ईशानकोणसे लेकर प्रतिरेखामें अकारादि स्वरयुक्त व्यञ्जनवर्णोंको क्रमानुसार भर दे । इसके पीछे श्वेत तथा लाल कमल, मालती, जुही, केतकी, चमेली, वकुल, (यहाँ विना गन्धका और लाल रंगका फूल निषिद्ध है) फिर यथा–प्राप्त ऋतुफल,

प्रतिरेखापरि नूनं चतुर्दिक्षु क्रमाल्लिखेत् । क्रौंकाराः सप्त संलेख्याः पूर्वपङ्क्तौ तु पश्चिमे ॥ ६ ॥ एवं संलिख्य तद्यन्त्रं

शान्तिपौष्टिकयन्त्रम्

क्रौं	क्रौं	क्रौं	क्रौं	क्रौं	क्रौं	क्रौं
अं	आं	इं	ईं	उं	ऊं	ऋं
जं	झ	ञ	टं	ठं	डं	ॠं
छं	भ	म	यं	र	ढं	लृं
चं	बं	सं	हं	ळं	णं	ॡं
ङं	फं	षं	शं	वं	तं	एं
घं	पं	नं	धं	दं	थं	ऐं
गं	खं	कं	अः	अं	औं	ओं
क्रौं	क्रौं	क्रौं	क्रौं	क्रौं	क्रौं	क्रौं

पूजयेद्भक्तिभावतः । पुण्डरीकैः सिताम्भोजैः शतपत्रैर्मनोहरैः ॥ ७ ॥ मालतीयूथिकाभिश्च केतकैर्मल्लिकैस्तथा । बकुलैश्च यथालाभं फलैः कालोद्भवैः शुभैः ॥ ८ ॥ निर्गन्धं रक्तवर्णं च पुष्पं यत्नेन वर्जयेत् । सकर्पूरैश्च ताम्बूलैर्धूपैर्दीपैः सिताम्बरैः ॥ ९ ॥ दिनत्रयं तु सम्पूज्य नैवेद्यैर्विविधैः प्रिये । जपेत्सप्त-

---

कर्पूरयुक्त तांबूल, धूप, दीप, गंध, श्वेतवस्त्र, नैवेद्य इत्यादिसे यन्त्रेश्वरका पूजन कर ब्राह्मणद्वारा सप्तशतीका जप करता हुआ

शतीं नित्यं ब्राह्मणांस्तु दिनत्रयम् ।। १० ।। संभोज्य पायसेनैव यथेष्टेन घृतेन तु । त्रिदिनं भूमिशायी स्याद्भोजनाद्गन्धरोचनाम् ।। ११ ।। उद्धृत्य गुटिकां कुर्यात्त्रिलोहैर्वेष्टयेत्ततः । तच्छेषं चैव पातव्यं पानीयेन वरानने ।। १२ ।। परस्य जायते क्षोभो विद्यया वै नियोजितः । गुटिकां धारयेद्देवि बाहुमूले गलेऽथवा ।। १३ ।। धारणात्तस्य यन्त्रस्य उपसर्गः प्रशाम्यति । अलक्ष्मीःकलहश्चैव दौर्भाग्यं च विशेषतः ।। १४ ।। यत्परेण कृतं किंचित्तत्सर्वं च प्रणश्यति । शान्तिकं पौष्टिकं नाम देवानामपि दुर्लभम् । प्रथमं यन्त्रराजाख्यं सद्यः प्रत्ययकारकम् ।। १५ ।।

इति यंत्र० शान्त्यधिकारे शान्तिकं पौष्टिकं नाम प्रथमं यन्त्रम् ।। १ ।।

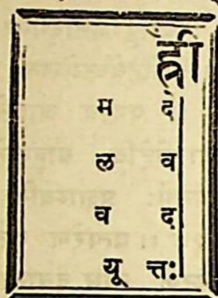
श्रीशिव उवाच ।। शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्त्रं चारिनिवारणम् । सर्पव्याघ्रभयं नास्ति यन्त्रे करतले स्थिते ।। १ ।।

यथेष्ट पायस घृत इनसे ब्राह्मणोंको तीन दिनतक भोजनकराकर भूमिमें शयन करे। फिर भोजनमेंसे गध रोचनको निकालकर गुटिका बना त्रिलोहके ताबीजमें बंदकर गले अथवा बाहुमूलमें धारण करे। हे वरानने! शेषभागको पानीमें मिलाकर पिये, इस यन्त्रके धारण करनेसे शत्रुको क्षोभ होगा और उपद्रव, दारिद्र्य, क्लेश, दौर्भाग्य अथवा अन्यकृत अभिचारादिका सम्पूर्ण दोष शांत हो जायगा। शांतिक पौष्टिक नाम देवताओंको भी दुर्लभ आदिभूत यह यन्त्रराज शीघ्र विश्वासदायक है।। १–२५ ।।

इति यन्त्र० शांतिकपौष्टिक नामक पहला यन्त्र ।। १ ।।

श्रीशिवजी बोले—हे देवि ! अब अरिनिवारण यन्त्रको कहता हूँ, श्रवण करो। इस यन्त्रको पास रखनेसे सर्प, व्याघ्र आदिकोंका

सर्पादिभयनाशनयंत्रम् । पूर्वोक्तो लेखनविधिर्द्रव्यं पूर्वोक्तमेव च। सर्वत्र शान्तिके देवि विधिरन्यो न विद्यते ॥ २ ॥ पूजनं चापि पूर्वोक्तं नियमश्चापि तादृशः । भूर्जपत्रे तु संलेख्यं द्वितीयं यन्त्रमुत्तमम् ॥३॥ ह्रींकारगर्भमध्ये तु साध्यनाम लिखेन्नरः । तत्तत्पादे तु संयोज्यं मकारं तदनन्तरम् ॥ ४ ॥ लकारं च वकारं च यकारान्तं प्रतिष्ठितम् । ऊकारस्वरसंयुक्तं शान्तिबीजं मनोहरम् ॥ ५ ॥ ततस्तद्वेष्टयेत्सम्यक् चतुष्कोणं द्विरेखया । त्रिलोहवेष्टितं कृत्वा बाहुमूले गलेऽथवा ॥ ६ ॥ सर्पव्याघ्रभयं हन्ति हन्ति चौरभयं तथा । विविधोपद्रवं हन्ति नात्र कार्या विचारणा ॥ ७ ॥



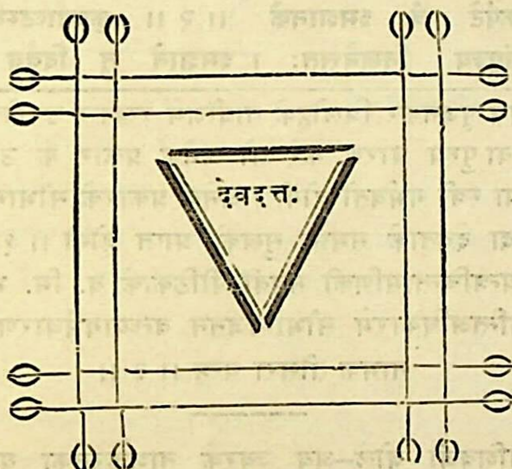
इति यन्त्रचि० ना० म० प्र० उ० न० शा० दा० सर्पव्याघ्र चौरभयनाशनं नाम द्वितीयं यन्त्रम् ॥२॥

भय न होगा । इसका लेखन द्रव्यभी पूर्वोक्त है । हे देवि ! सम्पूर्ण शांतिक विषयोंकी एकही विधि है दूसरी नहीं, पूर्वोक्त कथनके अनुसारही पूजन तथा नियम की क्रिया है । भोजपत्रके ऊपर चतुष्कोण यन्त्रको लिखकर ह्रींबीजकी मात्राके भीतर साध्यव्यक्तिके नामको लिखे और ह्रीं बीजके पादमें मकार, लकार, वकार, यकार ऊकारको भी मिलाकर त्रिलोहमें वेष्टितकर बाहुमूल अथवा गलेमें धारण करे, तो सर्प, व्याघ्र, चोर आदिका भय न होगा । अधिक क्या ? अनेक प्रकारके उपद्रव शान्त हो जायँगे ॥ १ ॥

इति यन्त्रचितामः नववीं पीठिकाके व० मि० भा० शांतिअधिकारमें सर्प-व्याघ्र-चौर भयनिवारण नामक दूसरा यन्त्र ॥२॥

श्रीशिव उवाच ।। शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्त्रं दौर्भाग्यनाशनम् । नारीणां च विशेषेण नराणां चैव सर्वदा ।। १ ।। लेखने तु विधिः प्रोक्तो द्रव्यं पूर्वोक्तमेव च । लेखनी पूर्वनिर्दिष्टा भूर्जपत्रे लिखेन्नरः ।। २ ।। साध्यनाम लिखित्वा तु त्रिकोणं तु द्विरेखया । तस्योपरि चतुष्कोणं रेखाद्वितयशोभितम् ।। ३ ।। कोणे कोणे त्रिशूले तु पूर्वोक्तविधिना ततः ।

वन्ध्यागर्भधारणयन्त्रम्



श्रीशिवजी बोले—हे देवि ! नारी तथा नरोंकी विशेषहितके लिए दौर्भाग्यके नाश करनेवाले यंत्रको कहता हूँ। लेखनविधि पूर्वोक्तही होने योग्य है। यथा-चमेलीकी लेखनीसे भोजपत्रके ऊपर दो रेखावाले त्रिकोणयन्त्रको खींचकर उसके बहिर्भागमें दो रेखायुक्त चतुष्कोणयन्त्र खींचकर प्रतिरेखाको त्रिशूलमें मिश्रित करे, तत्पश्चात् त्रिकोणके भीतर साध्यव्यक्तिके नामको लिख

त्रिलोहवेष्टितं कृत्वा बाहुमूले गलेऽथवा ।। ४ ।। धारयेद्विधिवत्पूर्वं नारी वा पुरुषोऽथवा । विविधोपद्रवं हन्ति वन्ध्या गर्भवती भवेत् ।। ५ ।। सौभाग्यमतुलं प्राप्य देववन्मोदते सदा ।। ६ ।।

इति श्रीयन्त्रचि० ना० म० प्र० उ० नवमपी० शान्त्य० सौभाग्य जननं वन्ध्यागर्भधारणं नाम तृतीयं यन्त्रम् ।।३।।

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि ज्वरनिर्नाशनं परम् । भूतजं तु ज्वरं हन्ति विद्यते वैद्यकोदितम् ।। १ ।। बालानां तु सदा कार्यं यन्त्रं वै ज्वरशान्तये । उन्मत्तस्य रसैर्लेख्यं कर्पटे वै श्मशानके ।। २ ।। कृष्णाष्टम्यां चतुर्दश्यां संपूज्य निखनेत्ततः । श्मशाने तु दिवैव स्यान्नि-

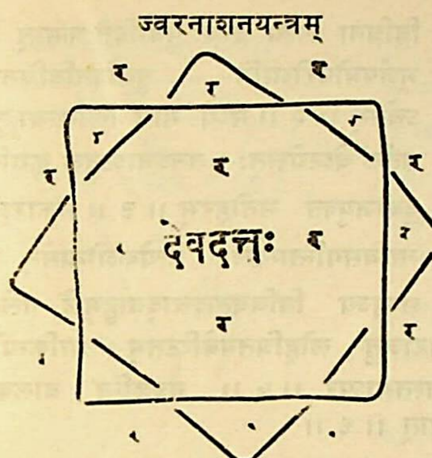
---

उक्तविधिसे पूजनकर त्रिलोहके ताबीजमें रखकर उपरोक्त विधिसे नारी अथवा पुरुष धारण करे तो अनेक प्रकार के उपद्रव शांत होंगे, वंध्या स्त्री गर्भवती होगी । अनेक प्रकारके सौभाग्यको प्राप्त होकर सदा देवताके समान सुखको प्राप्त होगी ।। १– ६ ।।

इति यन्त्रचिन्तामणिकी नववीं पीठिकाके व. मि. भा. टी. शान्तिअधिकारमें सौभाग्यजनन वन्ध्यागर्भधारण नामक तीसरा यन्त्र ।। ३ ।।

श्रीशिवजी बोले–अब ज्वरके नाशकरनेका यन्त्र कहता हूँ, यह वैद्यकशास्त्रमें कहा हुआ यन्त्रराज भूतमात्रके ज्वरको नाश करता है। इस यन्त्रराजका बालकों के ज्वरशांतिके लिए अवश्य प्रयोग करना चाहिये। विधान-धतूरेके रससे श्मशानके वस्त्रके ऊपर चतुष्कोणचक्र खींचकर कोण निकाल दूसरा चतुष्कोण उसके ऊपर और लिख कर भीतर साध्यव्यक्तिके नामको चार रकार वर्णोंसे वेष्टित कर लिखे और प्रतिकोणके भीतर

ज्वरनाशनयन्त्रम्



राहारेण मानवः ।। ३ ।। चतुष्कोणोपरि चतुर्भवेदष्टदलं तथा । मध्ये नाम लिखित्वा तु रकारस्य तु संपुटे ।। ४ ।। दलमध्येऽन्तराले तु रकारं संप्रतिष्ठितम्। एवं विंशतिरेफाः स्युः सर्वं तत्र क्रमेण तु ।। ५ ।। संपूर्य भूमौ संपूज्य बलिपुष्पैर्मनोहरैः। तत्क्षणाद्याति भूतं तु ज्वररूपं तु दारुणम् ।। ६ ।।

इति यन्त्रचिन्तामणौ ज्वरनाशनं नाम चतुर्थं यन्त्रम् ।।४।।

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि बालानां शान्तिकारकम् । यन्त्रं रक्षाकरं श्रेष्ठं सर्वोपद्रवनाशनम् ।। १ ।। पूर्वोक्त

तथा बाहर एक-एक रकार वर्ण लिखे इस प्रकार सब २० रकार होने चाहिये । फिर मनोहर बलि, पुष्प इत्यादिसे पूजनकर उपवासयुक्त हो कृष्णपक्षकी अष्टमी तथा चतुर्दशीके दिनके समय पूजनकर गाड़ दे तो उसी समय बालकोंका ज्वर दूर हो जायगा ।। १–६ ।।

इति यंत्रचिन्तामणिकी नववीं पीठिकाके व. मि. भा. टी. शान्ति अधिकारमें ज्वरनाशक नामक चौथा यन्त्र ।। ४ ।।

श्रीशिवजी बोले–अब बालकोंकी शांति करनेवाले तथा रक्षा करनेवाले और अनेकों रोगोंको शान्त करनेवाले यन्त्रोंको कहता हूँ । उक्त द्रव्योंसे उक्त विधानके साथ भोजपत्र के ऊपर एक

बालरक्षाकरयन्त्रम्



विधिना लेख्यं द्रव्यैः पूर्वोदितैःक्रमात् । भूर्जपत्रोपरीशानि पूर्वोक्तविधिना ऽर्चनम् ।। २ ।। मध्ये नाम लिखित्वा,तु वर्तुलं वेष्टयेत्ततः । ततश्चाष्टदलं कुर्याद्बीजयुक्तं मनोहरम् ।। ३ ।। सकारान्सविसर्गान्तान्दले प्रत्येकशोन्यसेत् । सम्पूज्य विधिवत्पश्चाद्बाहुमूले गलेऽथवा ।। ४ ।। धारयेद्यन्त्रराजंतु लोहत्रितयवेष्टितम् । शाकिन्यो वाऽथ डाकिन्यो बालग्रहास्तथाऽपरे ।। ५ ।। गच्छन्ति बालकं मुक्त्वा यन्त्रराजस्य धारणात् ।। ६ ।।

इति श्रीयन्त्रचि० ना० म० प्र० उ० न० शा० दा० बालररक्षाकरं नाम पञ्चमंयन्त्रम् ।। ५ ।।

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि तृतीयज्वरनाशनम् । पूर्वोक्तविधिना लेख्यं भूर्जपत्रे सुशोभने ।। १ ।। साध्य-

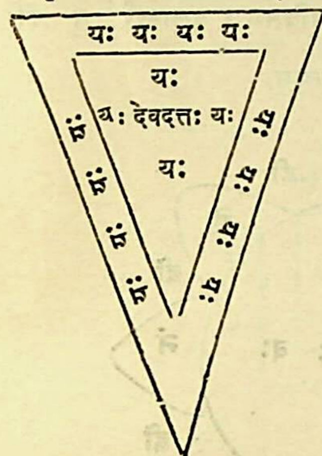
---

गोलाकार चक्र खींचकर अष्टदल बनाकर प्रत्येक दलमें विसर्गान्त सकारको लिख बीचमें बालकके नामको लिखे, तत्पश्चात् त्रिलोहके तावीजमें रखकर विधानपूर्वक पूजनकर भुजा अथवा गलेमें बाँध दे, तो डाकिनी, शाकिनी, बालग्रह इत्यादि बालकोंको छोड़कर चले जायँगे ।। १– ६ ।।

इति यंत्रचिन्तामणि० बलदेवप्रसादमिश्रकृतभाषाटीकासहित बालरक्षाकारक पाँचवाँ यन्त्र ।। ५ ।।

श्रीशिवजी बोले–अब तीसरा ज्वरनाशक यन्त्र कहता हूँ । विधान-उक्तविधानपूर्वक भोजपत्रके ऊपर त्रिकोणगर्भित त्रिकोणयन्त्रको खींचकर मध्यभागमें यकार पुटित बालकके नामको लिख कर प्रतिरेखाके नीचे चार चार विसर्गान्त यकार वर्ण लिखकर

तृतीयज्वरनाशनयन्त्रम्



नाम लिखित्वा तु यकारस्य तु सम्पुटे । त्रिकोणं वेष्टयित्वा तु न्यसेद्बीजानि चोपरि ॥ २ ॥ एवं संलिख्य संपूज्य बध्नीयाद्दक्षिणे करे । यकाराः सविसर्गान्ताश्चत्वारश्च पृथक् पृथक् ॥ ३ ॥ त्रिषु भागेषु संलेख्यास्त्रिकोणे तु तथोपरि । ज्वरवेलासु तत्कार्यं बल्यर्थं दधिभक्तकम् ॥ ४ ॥ बालो वाप्यथवा वृद्धो ज्वरान्मुच्येत तत्क्षणात् ॥ ५ ॥

इति श्रीयन्त्रचिं० तृतीयज्वरनाशनं नाम षष्ठं यन्त्रम् ॥ ६ ॥

श्रीशिव उवाच ॥ अथातः संप्रवक्ष्यामि वेलाज्वरविनाशनम् । पूर्वोक्तविधिना लेख्यं द्रव्यैः पूर्वोदितैः क्रमात् ॥ १ ॥ भूर्जपत्रे तु संलेख्यं पूजयित्वा विधानतः । मध्ये नाम लिखित्वा तु वर्तुलं वेष्टयेत्ततः ॥ २ ॥ ऊर्ध्वाधौ ह्यग्रतः पृष्ठे वकारस्य

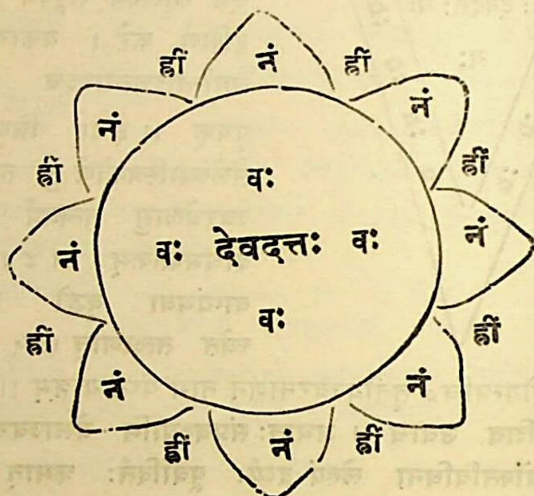
दही भातकी बलि दे । बालक अथवा वृद्ध अपने दाहिने हाथमें बाँधेंगे तो निश्चय ही उसी समय ज्वरसे छूट जायेंगे ॥ १–५ ॥

इति यंत्रचिन्तामणीकीनववीं पीठिकाके व० मि० भाषाटीका शान्ति अधिकारमें तीसरा ज्वरनाशक नामक छठा यन्त्र॥६॥

श्रीशिवजी बोले–अब समय बाँधकर आनेवाले ज्वरको शांत करनेवाले यन्त्रको कहता हूं । उक्त द्रव्योंसे उक्त विधिपूर्वक भोजपत्रके ऊपर गोलाकार चक्र खींच आठ दल बनाकर साध्यव्यक्तिके

तु संपुटम् । ततश्चाष्टदलं कुर्याद्बीजयुक्तं तु सर्वतः ॥ ३ ॥ प्रत्येकं दलमध्ये तु नकारं बिन्दुभूषितम् । दलान्तरे तु ह्रीं-

ज्वरशमनयन्त्रम्



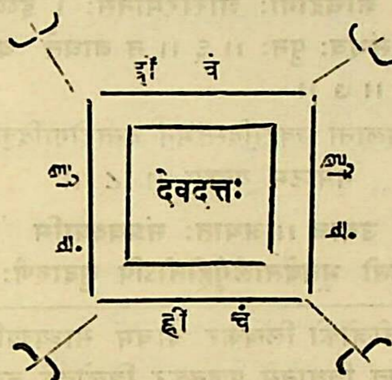
कारानष्टौ सर्वत्र विन्यसेत् ॥ ४ ॥ एवं संलिख्य संपूज्य शीततोये विनिक्षिपेत् । मुच्यते त्रिदिनाद्रोगी ज्वरद्वन्द्वान्न संशयः ॥ ५ ॥ उष्णोदके तु संक्षिप्तं ज्वरं शीतं विनाशयेत् । हस्तमूले तु तद्बद्धं ज्वरं वेलासमुद्भवम् ॥ ६ ॥ नाशयेन्नात्र संदेहो भूतजं सुरसुन्दरि ॥ ७ ॥

इति यन्त्रचि० ज्वरशमनं नाम सप्तमं यन्त्रम् ॥ ७ ॥

नामको लिखकर चारों ओर विसर्गान्त चार वकारोंको लिख प्रतिदलके भीतर नं बीजोंको और बाहर ह्रींबीजोंकी लिखे, फिर विधानपूर्वक पूजनकर ठंडे पानीमें डाल दे तो रोगी द्वन्द्वज ज्वरसे तीन दिनमें मुक्त हो जायगा । इसमें किसी प्रकारका भी संदेह

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि बालानां रक्षणं सदा । यन्त्रं ज्वलनरक्षाख्यमायुर्वृद्धिकरं परम् ।। १ ।। पूर्वोक्त

बालानां ज्वरादिस्तम्भनयंत्रम्



विधिना लेख्यं द्रव्यैः पूर्वोदितैः शुभैः । भूर्जपत्रे तु संलेख्यं साध्यनाम तु मध्यतः ।। २ ।। ततस्तद्वेष्टयेत्सम्यक् चतुष्कोणं तु रेखया । तस्योपरि चतुष्कोणं त्रिशूलं कोणतो लिखेत् ।। ३ ।।

नहीं है । हे सुन्दरि ! यदि हाथमें बाँध लिया जाय तो भूतसे पैदा हुआ ज्वर तत्क्षण दूर हो जायगा ।। १ - ७ ।।

इति यन्त्रचिन्तामणिकी नववीं पीठिकाके व० मि० भा० शांति-अधिकारमें ज्वरशमन नामक सातवाँ यन्त्र ।। ७ ।।

श्रीशिवजी बोले–अब सदा बालकोंकी रक्षा तथा आयु वृद्धि करनेवाले ज्वलन रक्षा नामवाले यन्त्रको कहता हूं । विधानपूर्वक कहे हुए द्रव्योंसे भोजपत्रके ऊपर दो रेखावाले चतुष्कोणयन्त्रको खींचकर प्रत्येक कोणमें त्रिशूल लिखकर पूर्वादि चारों दिशाओं

कोणान्तरे लिखेद्बीजं चकारं बिन्दुभूषितम् । उपर्यधोऽन्तराले तु ह्रींकारं विलिखेद्बुधः ।। ४ ।। एवं संलिख्य तद्यन्त्रं पूजयित्वा विधानतः । त्रिलोहवेष्टितं कृत्वा बध्नीयात्कण्ठमध्यतः ।। ५ ।। यश्चोपसर्गजाः केचिद्रोगाः शारीरमानसः । ईर्ष्या कोपस्तथा दोषो दन्तानां संभवः पुनः ।। ६ ।। न बाधते बालकस्य स्तन्य-दोषः कदाचन ।। ७ ।।

इति श्रीयं० बालानां ज्वरादिस्तंभनं दन्तरोगादिकृत्रिमोपद्रवनाश-नमष्टमं यन्त्रम् ।। ८ ।।

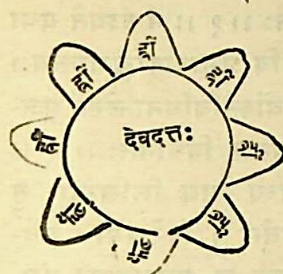
श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि भूतापस्मारनाशनम् । शाकिनी भूतवेतालैर्गृहीतोऽपि सुदारुणैः ।। १ ।। तदा

में ह्रीं चं इन बीजोंको लिखकर बीचमें साध्यव्यक्तिके नामको लिखे, फिर उक्त विधानसे पूजनकर त्रिलोहके तावीजमें बन्दकर गलेंमें बांध दे, तो उपसर्गजरोग, शारीरिक रोग, मानसिकरोग, ईर्ष्या, क्रोध, दांतोंका रोग, स्तनरोग इत्यादि कभी बालकको बाधा न देंगे ।। १-७ ।।

इति यन्त्रचि० नववीं पीठि० व० भि० भा० टी० शांति अधि. में ज्वरादिस्तंभनदंतरोगादिकृत्रिमोप-द्रवनाशननामक आठवां यन्त्र ।। ८ ।।

श्रीशिवजी बोले—अब भूत तथा मृगीरोगके नाश करनेवाले यन्त्रको कहता हूं । इस यन्त्रका प्रयोग उस समय करना चाहिये जिस समय बालक शाकिनी, भूत, बेताल इत्यादिसे पीड़ित हो । यदि स्वस्थबालकके ऊपर इस यन्त्रराजका प्रथम ही प्रयोग कर दिया जाय तो कदापि दोषग्रसित न हो । पूर्वोक्त पूजादि विधानसे भोज-

वालदोषनाशनयन्त्रम्



तन्मोहनार्थाय कुर्याद्यन्त्रं मनोहरम् । स्वस्थ्यस्य तु प्रकुर्वीत स तु दोषैर्न बाध्यते ।। २ ।। द्रव्यैः पूर्वोदितैर्लेख्यं पूर्वोक्तविधिना ततः । मध्ये नाम लिखित्वा तु भूर्जपत्रे वरानने ।। ३ ।। वर्तुलं वेष्टच संलेख्यं तस्योपरि दलाष्टकम् । ह्लींकारं दलमध्ये तु प्रत्येकं विलिखेत्पुनः ।। ४ ।। एवं संलिख्य संपूज्य लोहत्रितयवेष्टितम् । सुवर्णं रजतं ताम्रं त्रिलोहं परिचक्षते ।। ५।। बालानां गलके धार्यं यन्त्रं त्रैपुरभैरवम् । मुच्यते बालको रोगादपस्माराद्वरानने ।। ६ ।।

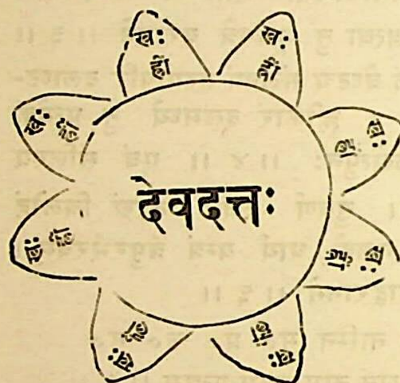
इति श्रीयन्त्रचिन्तामणौ नाम्नि म० प्र० उ० न० शा० वालानां दोषनाशनं नाम नवमं यन्त्रम् ।। ९ ।।

पत्रके ऊपर एक गोलाकार चक्र खींचकर उसके बाहर आठ दल वनाकर प्रत्येक दलमें ह्लीं बीज और मध्यभागमें साध्यव्यक्तिके नामको लिखे । फिर पूजनकर त्रिलोहके तावीजमें वन्द करके वालकके गलेमें वाँध दे तो वालक अपस्मारादिरोगोंसे मुक्त होकर सुख पाये । सोना, चांदी, तांवा इनको त्रिलोह कहते हैं, इस यन्त्रका त्रिपूरभैरव नाम है ।। १-६ ।।

इति यन्त्रचिन्तामणिकी नववीं पीठिकाके व० मि० भा० टी० शान्ति अधिकारमें वालदोषनाशक त्रिपुरभैरव-नामक नौवाँ यन्त्र ।। ९ ।।

श्रीशिव उवाच । अथातः संप्रवक्ष्यामि सर्पात्संरक्षणं परम् । सर्पादिभिर्यथा बालःप्रौढो वाऽपि विशेषतः ।। १ ।। न दश्यते यथा देवि प्रमादाद्वह्निशान्तयः। पूर्वोक्तविधिना लेख्यं पूजयित्वा विधानतः ।। २ ।। मध्ये नाम लिखित्वा तु वर्तुलं तु द्विरेखया । संवेष्टच च दलान्यष्टौ हंसबीजान् पृथक् पृथक्।।३।। त्रिलोहवेष्टितं कृत्वा बाहुमूले तु धारयेत् । नश्यन्ति दर्शनात्तस्य दन्दशूकाश्चतुर्दिशम् ।। ४ ।। प्रमादात्पतिते पादे तिष्ठन्ति स्तम्भिता ध्रुवम् । अथ दष्टः प्रमादेन विषं नैवाऽधिरोहति ।।५।। सर्पाणां स्तम्भनार्थाय यन्त्रं गरुडभाषितम् ।। ६ ।।

सर्पस्तंभनमन्त्रम्



इति श्रीयन्त्र० सर्पस्तम्भनं नाम दशमं यन्त्रम् ।।१०।।

श्रीशिवजी बोले-अब सर्पसे रक्षा करनेवाले यन्त्रको कहता हूं, जैसे सर्पादि हिंसक जीव बाल अथवा तरुणादिका कुछ विचार नहीं करते हैं, इसी प्रकार अग्निशांतिमें भी कुछ विचार नहीं है । विधानपूर्वोक्त विधानपूर्वक भोजपत्रके ऊपर दो रेखावाले गोलाकार चक्रको खींचकर अष्टदल मिश्रित कर हं सः इन बीजोंको प्रतिदलमें लिखकर मध्यभागमें साध्यव्यक्तिके नामको लिख, पूजनादि क्रियाकर त्रिलोहके ताबीजमें बन्दकर धारण करें तो दर्शनमात्रहेसी सर्पादिकोंका चारों दिशाओंमें नाश हो जायगा । यदि उनके

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि डाकिनीत्रासनं परम् । भूतप्रेतपिशाचाद्यैर्डाकिनीब्रह्मराक्षसैः ।। १ ।। यदा ग्रस्तो नरः कोऽपि नारी वा बालकोऽपि वा । तदा यन्त्रं प्रकुर्वीत त्रासार्थं भूतरक्षसाम् ।। २ ।। खडिकया लिखित्वा तु खर्परे नूतने शुभे । चतस्रस्तिर्यग्गा रेखा उर्ध्वास्ताः पञ्च रेखिकाः ।। ३ । एवं भवन्ति कोष्ठानां द्वादशैव वरानने । ह्रींकारं प्रतिकोष्ठे तु विलिख्याथ प्रपूजयेत् ।।४।। बलि-पुष्पोपहारैश्च ततो धूल्या प्रपूर-येत् । संस्थाप्य चाग्नेरुपरि

भूतत्रासनयन्त्रम्

ह्रीं	ह्रीं	ह्रीं	ह्रीं
ह्रीं	ह्रीं	ह्रीं	ह्रीं
ह्रीं	ह्रीं	ह्रीं	ह्रीं

ऊपर प्रमादसे पैर पड़ भी जाय तो भी वे स्तम्भित रहेंगे किन्तु दंश-नादिक्रिया कुछ भी न कर सकेंगे अथवा काट भी लेंगे तो उनका विष न चढ़ेगा । इस यन्त्रको सर्पोंके स्तम्भनके लिये श्रीगरुड़जीने प्रकाश किया है ।। १-६ ।।

इति यन्त्रचिन्तामणिकी नववीं पीठिकाके व० मि० भा० टी० शान्तिअधिकारमें सर्पस्तंभन नामक दसवां यन्त्र ।।१०।।

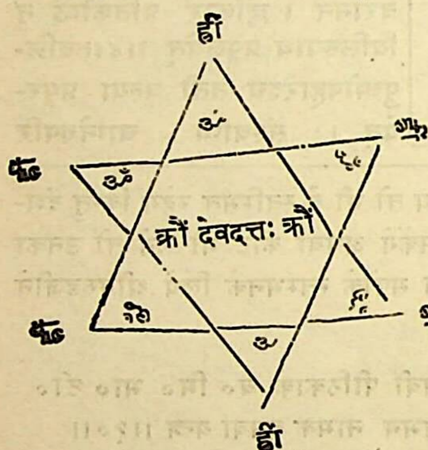
श्रीशिवजी बोले—अब डाकिनियोंको त्रास देनेवाले यन्त्रको कहता हूं । जिस समय बालक, वृद्ध, स्त्री, भूत, प्रेत, पिशाचादिसे ग्रसित हो, उस समय उनके त्रासके लिये इस यन्त्रका प्रयोग करे ।। विधान—नये खप्पड़के ऊपर खड़िया मिट्टीसे द्वादश कोष्ठक यन्त्रको लिखकर प्रत्येक कोष्ठमें ह्रीं बीजोंको लिखे। फिर बलि पुष्प इत्यादि से यन्त्रका पूजनकर धूलिसे पूर्णकर अग्निमें रखकर खैरकी आगसे प्रज्वलित करे तो भूतादिक रोते और काँपते हुए बाल-

ज्वालयेत् खदिरानलैः ।। ५ ।।प्ररुदँश्च महाभूतो वेपमानः पलायते । तत्क्षणाद्बालकं त्यक्त्वा देशत्यागेन गच्छति ।। ६ ।।

इति श्रीयन्त्रचि ० ना० म० प्र० उ० न० पी० दा०
भूतत्रासनं नामैकादशं यन्त्रम् ।। ११ ।।

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि ज्वरनिर्नाशनं परम् । निशाचररसेनैव लिखितं यन्त्रमुत्तमम् ।। १ ।। ताम्बूलपत्रे संलेख्यं बर्बुरस्य तु कण्टकैः । साध्यनाम लिखित्वा तु क्रौंकारपुटितं शुभम् ।। २ ।। षट्कोणमण्डलं मध्ये प्रत्येकं प्रणवं लिखेत् । कोणोपरि तु ह्रींकारं सर्वतो विलिखेत्क्रमात् ।। ३ ।। ताम्बूलं भक्षणार्थं च पूजयित्वा प्रदीयते । यन्त्रस्य भक्षणाद्देवि ज्वरो याति न संशयः ।४।

एकान्तरज्वरनाशनयन्त्रम्



कादिकों को छोड़कर भाग जायंगे और उस देशमें भी वास नहीं करेंगे, विशेष तो कहना ही क्या है ।। १-६ ।।

इति यन्त्रचिन्तामणिकी नववीं पीठिकाके बलदेवप्रसाद-
कृतभाषा युत शान्ति अधिकारमें भूतवासन नामक
ग्यारहवां यंत्र ।। ११ ।।

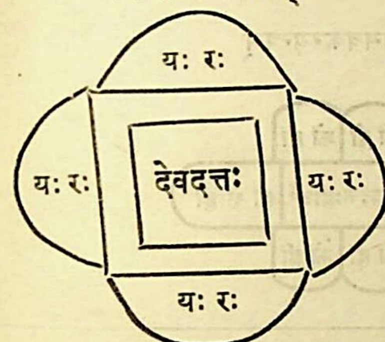
श्रीशिवजी बोले—अब ज्वरनाशक यंत्रको कहता हूँ । हल्दीके रससे पानके ऊपर बबूलके काँटेसे षट्कोण यंत्रको लिखकर प्रत्येक

एकान्तरं क्षणेनैव नात्र कार्या विचारणा ।। ५ ।।

इति यन्त्रचिं० ना० म० प्र० उ० न० पी० शा० दा० एकातन्त रज्वरनाशनं नाम द्वादशं यन्त्रम् ।। १२ ।।

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि गर्भरक्षाकरं परम्। हस्तिमदेन संलेख्यं भूर्जपत्रे सुशोभने ।। १ ।। मध्ये नाम लिखित्वा तु चतुष्कोणं द्विरेखया । संवेष्टच कर्णिका कार्या वर्तुला तु चतुर्दिशम् ।। २ ।। यकारं च रकारं च विसर्गान्तं पृथक् पृथक् । कर्णिकामध्यतो लेख्याः पूर्ववत्पूजयेत् क्रमात् ।। ३ ।। लोहैकेन तु संवेष्टच गर्भिण्याः कण्ठतो न्यसेत् । सुखात्प्रसूतिर्भवति छलच्छिद्रं च नश्यति ।। ४ ।।

गर्भरक्षाकरयन्त्रम्



इति यन्त्रचिं० ना० म० प्र० उ० न ० शा० दा० गर्भरक्षाकरं नाम त्रयोदशं यन्त्रम् ।। १३ ।।

कोणके भीतर ओंकारको लिख ऊपरके तीनों कोनोंमें ह्रीं बीजको लिख बीचमें क्रौं बीजसे पुटित साध्यव्यक्तिके नामको लिखे । फिर ताम्बूलका पूजनकर रोगीको खिला दे, तो हे देवि! एकांतर ज्वर क्षणमात्रमें नष्ट हो जायगा, इसमें कुछ विचार नहीं है ।। १-५ ।।

इति यंत्रचिंतामणिकी नववीं पीठिकाके शांति अधिकारमें एकांतर-ज्वरनाशन नामक बारहवां यंत्र ।। १२ ।।

श्रीशिवजी बोले–अब गर्भरक्षाकारक यंत्रको कहता हूँ । हे सुशोभने ! हाथीके मदसे भोजपत्रके ऊपर चतुष्कोणयन्त्र खींच-

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि अन्तर्वत्नीसुरक्षणम् । यन्त्रं योनिव्यथा याति दारुणं भूतनाशनम् ।। १ ।। पूर्वोक्तविधिना लेख्यं द्रव्यैः पूर्वोदितैः क्रमात् । भूर्जपत्रे विधानेन मध्यदेशे विचक्षणः ।। २ ।। प्रणवं च तथा ह्रीं च आद्यन्तं नामतो लिखेत् । पटवच्च चतुष्कोणं दीर्घं संवेष्टच्च रेखया ।। ३ ।। उपर्यधोऽपि त्रिदलान्कोणैकैकं प्रतिष्ठितम् ।

सुखप्रसवकरयन्त्रम्



कर चारों दिशाओंमें कर्णिका लगाकर सुशोभितकर प्रत्येक कर्णिकामें यः रः इन वीजोंको लिखकर मध्यभागमें साध्यव्यक्तिके नामको लिखे । फिर उक्त विधानसे पूजनकर चांदीके तावीजमें बंदकर स्त्रीके कण्ठमें बाँध दे तो सम्पूर्ण दोष नष्ट हो जायंगे और सुखपूर्वक संतान पैदा होगी ।। १-४ ।।

इति यन्त्रचिंतामणिकी नववीं पीठिकाके शांति अधिकारमें गर्भरक्षाकारक नामवाला तेरहवाँ यन्त्र ।। १३ ।।

श्रीशिवजी बोले–अब गर्भिणी स्त्रीकी रक्षा और सुखपूर्वक प्रसूतिकारक यन्त्रको कहता हूँ । यह यन्त्र गर्भव्यथा तथा भूतादिकों की व्यथाको दूर करता है । विधान यथा-उक्त द्रव्योंसे भोज-

ह्लीं च क्षं च तथा ह्लीं च कोणे दलगतं लिखेत् ।। ४ ।। क्रोंकारं च तथा ह्लीं च दलशेषेषु वै लिखेत् । एवं संलिख्य संपूज्य लोहत्रितयवेष्टितम् ।। ५ ।। गर्भिण्याः कण्ठदेशे तु धार्यं यन्त्रं न संशयः । योनिशूलं शिरःशूलं भूतदोषः प्रणश्यति ।। ६ ।। सुखं प्रसूतिर्भवति व्यथानाशो न संशयः । रहस्योऽयं समाख्यातो यन्त्रराजो महाद्भुतः ।। ७ ।।

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणौ नाम्नि महाकल्पे प्रत्यक्षसि०उ०न० शान्त्यधिकारे दा० गर्भिणीरक्षणं सुखप्रसूतिकरणं नाम चतुर्दशं यन्त्रम् ।। १४ ।।

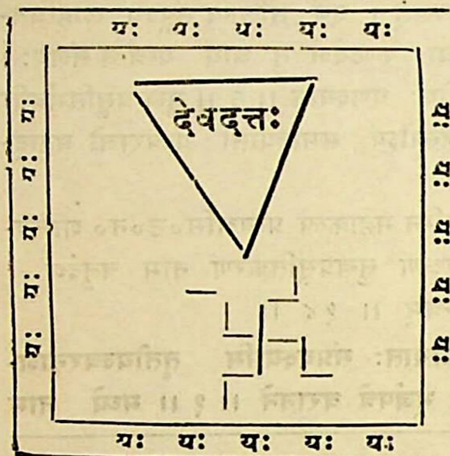
श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि तृतीयज्वरनाशनम् । द्रव्यैः पूर्वेदितैर्लेख्यं भूर्जपत्रे वरानने ।। १ ।। मध्ये नाम

पत्रके ऊपर पटवत् चतुष्कोण यंत्रको खींचकर दीर्घरेखासे युक्तकर प्रतिकोष्ठकमें क्रों ह्लीं इन बीजोंको लिखकर ओं ह्लीं दो बीजोंसे पुटित साधकके नामको बीचमें लिखे । फिर पूजनकर त्रिलोहके तावीजमें वंदकर गर्भिणीके गलेमें बाँध दे, तो गर्भशूल और शिरशूल भूतदोषादि संपूर्ण उपद्रव शांत हों, सुखपूर्वक प्रसूति होगी । हे देवि ! इस यंत्रराजके अद्भुत रहस्यको मैंने कहा है ।। १-७ ।।

इति यंत्रचिंतामणिकी नववीं पीठिकाके शांति-अधिकारमें गर्भिणीरक्षण सुखप्रसूतिकारक चौदहवां यंत्र ।।१४।।

श्रीशिवजी बोले—अव तृतीय ज्वरनाशक यन्त्र कहता हूँ । हे वरानने ! पूर्वकथित द्रव्योंसे भोजपत्रके ऊपर एक चतुष्कोण यन्त्र खींचकर उक्त त्रिकोणके नीचे स्वस्तिक बनाकर पुनः इन सबको चतुष्कोणयन्त्रसे वेष्टित करे । फिर त्रिकोणके भीतर साध्यव्यक्तिके नामको और द्वितीय चतुष्कोणके भीतर विसर्गान्त

भूततृतीयज्वरनाशनयन्त्रम्



लिखित्वा तु त्रिकोणं वेष्टयेत्ततः । तस्याधः स्वस्तिकं कार्यं तत्सर्वं वेष्टयेत्ततः ॥२॥ चतुष्कोणं शिलाकारं तस्योपरि लिखेद्बुधः। यकारैः सविसर्गान्तैर्विषमैर्वेष्टयेत्ततः ॥३॥ संपूज्य तस्य वेलायां बध्नीयाद्दक्षिणे करे । ज्वरो याति न संदेहो भूतजस्तु तृतीयकः ॥४॥ रोगजं नैव यात्येष नयोज्यं तत्र वै कदा ।

इति श्रीयन्त्रचिं० ना० म० प्र० उ० न० शा० दा० भूततृतीयज्वरनाशनं नाम पञ्चदशं यन्त्रम् ॥१५॥

श्रीशिव उवाच ॥ अथातः संप्रवक्ष्यामि सर्वरक्षाकरं परम् ।

तीन या पाँच आदि विषम यकार वर्णोंको पूर्वादि चारों दिशाओं में लिखकर पूजन करे । ज्वरके समय दाहिने हाथमें बांधे तो तीसरे दिन आनेवाला ज्वर दूर होगा । यदि भूतादिकोंके उपद्रवसे होगा तो अवश्य दूर हो जायगा । रोगजज्वर में इसका प्रयोग न करे । क्योंकि, इस यन्त्रसे रोगजज्वर दूर नहीं होता, किन्तु भूतज ही दूर होता है ॥ १-५ ॥

इति यन्त्रचिंतामणिकी नववीं पीठिकाके शांतिअधिकारमें तृतीयक भूतज्वरशमन नामक पन्द्रहवां यन्त्र ॥ १५ ॥

श्रीशिवजी बोले, अब सब प्रकारके छलछिद्रोंका नाश करनेवाला और सब प्रकारकी रक्षा करनेवाला सर्वतोभद्र नामक यन्त्र

छलच्छिद्रहरं नाम सर्वतोभद्रसंज्ञकम् ।। १ ।। ऊर्ध्वरेखाः पञ्च पञ्च तिर्यग्रेखास्तु संलिखेत् । एवं कृते भवन्त्येते कोष्ठाः षोडशसंख्यकाः ।। २ ।। अकार पूर्वाः क्रमशो विलिख्याःसर्वत्र कोष्ठे निशि भूतजेऽह्नि । भूर्जस्य पत्रे मृगनाभिचन्दने हिमेन संमेल्य लिखेत्क्रमेण तु ।। ३ ।। संपूज्यपुष्पै र्विविधैश्च गन्धैर्धूपैर्मनोज्ञैर्विविधोपचारैः । संपूज्य विप्रान्वसनैर्धनैश्च यन्त्रं च तद्भक्तियुतः समर्चयेत् ।। ४ ।। संवेष्टच लोहत्रितयेन पश्चात्संहृष्टचेता विधिवन्मनुष्यः । तं धारयेद्दक्षिणबाहुमूले नारी गले यन्त्रवरं प्रयत्नात् ।। ५ ।। तद्धारणात् प्राप्तमनःप्रसादः सर्वप्रियो भाग्ययुतः स तूर्णम् । संजायते सर्वभयेन हीनो लोके यथा प्राप्तमहाष्ट सिद्धिः ।। ६ ।।

सर्वतोभद्रयन्त्रम्

अ	आ	इ	ई
उ	ऊ	ऋ	ॠ
ऌ	ॡ	ए	ऐ
ओ	औ	अं	अः

इति श्रीय० चि० ना० म० प्रत्यक्षसि० उ० न० शा० दा०
सर्वसौभाग्यवर्धनं सर्वतोभद्राख्यं षोडशं यन्त्रम् ।।१६।।

कहता हूँ । विधान यथा—भोजपत्रके ऊपर कस्तूरी, लालचन्दन, हिम इन सब वस्तुओंको एकत्रितकर सोलह कोष्ठवाले यन्त्रको खींचे । फिर प्रतिष्कोठकमें अकारादि सोलह स्वरोंको लिखकर गन्ध, धूप, दीप इत्यादिसे यन्त्रराजका पूजन करे । धन वस्त्रादिसे ब्राह्मणोंको सन्तुष्टकर भोजन कराये । फिर यत्नपूर्वक त्रिलोह निर्मित तावीजमें बन्दकर पुरुष दक्षिण हाथमें और स्त्री गलेमें बाँध ले तो प्रसन्नचित्त और भाग्ययुक्त हो, सबका प्रिय हो और सब प्रकारके भयोंसे रहित हो। अष्टसिद्धिके प्राप्त होने केसमान ही सुख प्राप्त करे। १-६।

इति यन्त्रचितामणिकी नववीं पीठिकाके शांति अधिकारमें
सौभाग्यवर्द्धक सर्वतोभद्र नामक सोलहवाँ यन्त्र ।।१६।।

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि यन्त्रं द्यूतजयावहम् । सर्वद्यूते हि परमं जयं स्याद्यन्त्रधारणात् ।। १ ।। वाजिनः क्रममाख्यातं चतुष्षष्टिस्तु कोष्ठकम्। तद्धारणाज्जयं देवि द्यूते सर्वत्र निश्चितः ।।२।। एरण्डपत्रे संलेख्यं लेखन्या काकपिच्छया । कज्जलस्य मसीं कृत्वा लिखेद्रात्रौ शुचिस्मिते ।।३।।तिर्यगूर्ध्वास्तु संलेख्या नव रेखास्तु विस्तृताः । एवं भवन्ति कोष्ठाश्च चतुःषष्टिर्वरानने ।। ४ ।। मध्ये बीजाः सुसंलेख्याऽनुलोमप्रतिलोमतः । त एव हि पुनर्लेख्याः शेषकोष्ठेषु चक्रमात् ।। ५ ।। मेखैरक्तंदयेरुपाकजिजतंदनीचनः ।। छदावींय मंत्रंतेषहेष्टिवामोक्षिणपात्रम् ।। ६ ।। एतान्येव तु बीजानि द्वात्रिंश-

द्यूतविजयकरयन्त्रम्

मे	खै	र	क्तं	द	ये	रु	पा
क	जि	ज	तं	द	नी	च	नः
छ	दा	वीं	य	मं	त्रं	ते	ष
हे	ष्टि	वा	मो	क्षि	ण	पा	त्रं
त्रं	प	ण	क्षि	मो	वा	ष्टि	हे
ष	ते	त्रं	मं	य	वीं	दा	छ
नः	च	नी	द	त	ज	जि	क
पा	रु	ये	द	क्तं	र	खै	मे

श्रीशिवजी बोले—अब जुए में विजयके देनेवाले यन्त्रको कहता हूँ । इस श्रेष्ठ यन्त्रके धारण करनेसे जुएमें विजय होती है । इस चौंसठ कोष्ठवाले यन्त्रमें वाजिक्रम कहा है, हे देवि ! इस यंत्रके धारण करनेसे सब प्रकारके जुएमें विजय होती है । हे शुचिस्मिते ! रात्रिके समय एरंडपत्रके ऊपर काकपक्षकी लेखनीसे काली स्याहीसे ६४ कोष्ठ बनाकर प्रतिकोष्ठमें अनुलोम तथा विलोमसे इन ३२ बीजोंको लिखे । बीज यथा—मे, खै, र, क्तं, द, ये, रु, पा, क, जि, ज, तं, द, नी, च, नः, छ, दा, वीं, य, मं, त्रं, ते, ष, हे, ष्टि, वा, मो,

द्विलिखेत् क्रमात् । दामोदर कवीन्द्रेण चित्रो वाजिक्रमः कृतः ।। ७ ।। स्वेच्छया नीयते येन चतुःषष्टिपदं जनैः । प्रसन्नं तु मया प्रोक्तं यन्त्रं चित्रं मनोहरम् ।। ८ ।। सर्वद्यूते जयं प्रोक्तं धारणाज्जायते प्रिये ।। ९ ।।

इति यन्त्रचि० ना० म० उ० न० शा० दा० द्यूत-
विजयकरं सप्तदशं यन्त्रम् ।। १७ ।।

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि बन्धमोक्षं मनोहरम् । बद्धो रुद्धःक्षणेनैव मुच्यते यत्प्रसादतः ।। १ ।। यदा केनापि संरुद्धो न विन्दन्मुक्तिमात्मनः । तदा यन्त्रं प्रकुर्वीत तत्क्षणान्मुक्तिदायकम् ।। ३ ।। कर्पूरं कुंकुमेनैव भूर्जपत्रे सुविस्तृते । लेखनीयं प्रयत्नेन एकान्ते यन्त्रमुत्तमम् ।। ३ ।। मध्ये नाम लिखित्वा तु हृल्लेखां तदनन्तरम् । ततस्तद्वेष्टयेत्सम्यग्वर्तुलं तु द्विरेखया ।। ४ ।। मां मोचयेति सर्वत्र चतुर्दिक्षु प्रवे-

---

क्षि, ण, पा, त्रं । यह वाजिक्रम चित्र दामोदर पण्डितने वर्णन किया है । जो लोग इस ६४ कोष्ठक यंत्रको धारणकर, जुएमें जायंगे, वे निश्चयही विजयको प्राप्त होकर प्रसन्न होंगे । क्योंकि इस यंत्रका नाम ही प्रसन्न यंत्र हैं ।। १-९ ।।

इति श्रीयंत्रचिंतामणिकी नववीं पीठिकाके शांति अधि-
कारमें द्यूतविजयकर नामक सत्रहवां यत्र ।। १७ ।।

श्रीशिवजी बोले–अब मनोहर वंदीमोचननाम यंत्र कहता हूँ । इस यंत्रके प्रयोग करनेसे बंदी क्षणमात्रमें बंधनसे छूट जायगा । अथवा किसी जीवको किसीने रोक लिया हो और उसके निकलनेका कोई उपाय न हो तो मुक्तिकारक इस यन्त्रराजका प्रयोग करे । विधान-कपूर और कुंकुम मिलाकर भोजपत्रके ऊपर एक चतुष्कोणको खींचकर उसके मध्यमें दो रेखा मिश्रित एक गोलाकार

बन्धमोक्षणं यंत्रम् ।



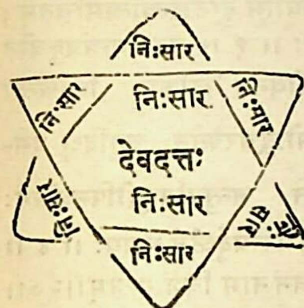
ष्टयेत् । चतुष्कोणं तु संवेष्ट्य रेखाद्वितयकेन तु ।। ५ ।। पूजनीयं प्रयत्नेन गन्धपुष्पैः फलैः शुभैः । त्रिलोहवेष्टितं कृत्वा बाहुमूले गलेऽथवा ।। ७ ।। धारणात्तत्क्षणान्मुक्तः संसार इव निर्ममः । स्वस्थता धारणान्नित्यमवरोधः कदाचन ।। ७ ।। जायते नैव संदेहः स्वप्नेऽपि हि कदाचन ।। ८ ।।

इति श्रीय० चि० वन्धमोक्षण नामाऽष्टादशं यन्त्रम् ।। १८ ।।

चक्र बनाकर उसमें विसर्गान्त साध्यव्यक्तिके नामको लिखकर अन्तमें ' हृल्लेखा ' इसको लिखकर उक्त गोलाकारके बहिर्भागके पूर्वादि चारों दिशाओंमें ' मां मोचय ' इस वाक्यको लिखे । फिर गन्ध-पुष्प आदि से यंत्रका पूजनकरके त्रिलोहके ताबीजमें बंदकर गले अथवा बाहुमूलमें धारण करे तो बंदी उसी क्षण बंधनसे छूट जायगा, जैसे कि संसाररूप बंधनसे ममतारहित होनेपर मुमक्षु-

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि भवबन्धविनाशनम् । निर्वाणपदयोज्यं हि निर्वेदपददायकम् ।। १ ।। षट्कोणस्य तु मध्ये तु साध्यनाम प्रतिष्ठितम् । निःसारं सम्पुटं कृत्वा भूर्जपत्रे सुविस्तृते ।। २ ।। निःसारं तु लिखेत्कोणे रोचनाचन्दनेन तु ।। ३ ।। लोहमध्यगतं कृत्वा रक्षयेच्छिरसा सदा । तद्धारणात्क्रमेणैव विरक्तः संप्रजायते ।। ४ ।। ज्ञानयोगं समासाद्य मुच्यते नात्र संशयः । पितृमित्रकलत्रेषु निर्मोहः संप्रजायते ।। ५ ।। निर्बन्धस्तु वना-

भवमोचनयन्त्रम्



लोग छूट जाते हैं । हे देवि ! इस यंत्रके धारण करनेसे शरीर स्वस्थ रहेगा, बंधन तो स्वप्नमें भी न होगा ।। १-८ ।।

इति श्रीयंत्रचिंतामणिकी नववीं पीठिकाके शांति अधिकारमें बंधमोक्षण नामक अठारहवां यंत्र ।। १८ ।।

श्रीशिवजी बोले–अब भवबंधन नाशक और मोक्षप्रद यंत्रको कहता हूँ । विधान-गोरोचन, लाल चंदन इनको मिलाकर भोजपत्रके ऊपर एक षट्कोण यन्त्रको खींचकर प्रत्येक कोणमें 'निःसार' इस पदको लिखे और इसी शब्दसे पुटित साध्यव्यक्तिके नामको यन्त्रके भीतर लिखे । तत्पश्चात् उक्त विधानपूर्वक यन्त्रराजका पूजन कर त्रिलोहके ताबीजमें बन्दकर शिरमें धारण करे तो विरक्त

रण्यदुर्गपर्यटनं गिरौ । जायते नाऽत्र संदेहो योगी सर्वत्र पूजितः ।।६।।

इति यं० चि० ना० म० प्र० उ० न० शा० दामोदरपण्डि-
तोद्धृते भवमोचनं नाम एकोनविंशं यन्त्रम् ।। १९ ।।

श्रीशिव उवाच ।। अथातःसंप्रवक्ष्यामि दुष्टसत्त्वात्प्रमोचनम् । यदाऽरण्ये सरिद्दुर्गे दुष्टसत्त्वेन बाधितः ।। १ ।। तदा यन्त्रंप्रकुर्वीत वामहस्ततलोपरि । निष्ठीवनेन ह्लींकारं लिखित्वा पूजयेत्तदा ।। २ ।। अनामोद्भवरक्तेन चतुर्दिक्षु प्रसेचयेत् । तत्क्षणान्मुच्यते जन्तुर्यावद्द्वीपिमहोरगैः ।। ३ ।। रुद्धो वृकैश्च हरिभिरन्यैर्दुष्टैर्न संशयः ।। ४ ।।

दुष्टसत्त्वप्रमोचनयन्त्रम्

ह्लीं

इति श्रीयन्त्र चि० ना० दुष्टसत्वात्प्रमोचनं नाम विंशं यन्त्रम्।।२०।।

इति शान्त्यधिकारः समाप्तः ।।

हो ज्ञानमार्गको अनुसरण करता हुआ पुत्रादिके मोहसे शून्य होकर वन, पर्वतादि श्रेष्ठ स्थानोंमें भी विरक्त पूजनीय, योगीश्वर होगा।।१-६।।

इति यन्त्रचिन्तामणिकी नववीं पीठिकाके शान्ति अधि-
कारमें भवमोचन नामक उन्नीसवां यन्त्र ।। १९ ।।

श्रीशिवजी बोले-अब दुष्टजीवोंसे मोचन करानेवाले यन्त्रको कहता हूँ । इस यंत्रका उस समय प्रयोग करे जिस समय वन, नदी, झाड़ी, इत्यादि मार्गोंमें सिंहादि दुष्ट जीवोंसे भययुक्त हो । विधान-अपने थूकसे बायें हाथके ऊपर चतुष्कोणयंत्र खींचकर भीतर के भागमें ह्लीं बीजको लिख, अनामिका अंगुलीके रुधिरसे पूर्वादि चारों दिशाओंमें सेचन करे तो तत्क्षण साध्यव्यक्ति हिंसक जीवोंके भयसे विमुक्त हो, सुखका भागी बने ।। १-४ ।।

इति श्रीयंत्रचिंतामणिकी नववीं पीठिकाके शांति अधिकारमें
दुष्टसत्वमोचन नामक बीसवां यंत्र ।।२०।।

इति श्रीयंत्रचिंतामणौ नाम महाकल्पे प्रत्यक्षसिदिप्रदे उमा-
महेश्वरसम्वादे नवमपीठिकायुतः शांत्यधिकारः समाप्तः।।

अथ मोक्षाधिकारः

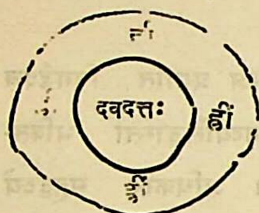
आपादमस्तकनिबद्धजनः क्षणेन मोक्षं प्रयाति निगडैश्च सुवेष्टिताङ्गः । यस्याज्ञया जगति देवमनुष्यसिद्धास्तां भक्तियुक्तमनसा प्रणतोऽस्मि बन्दीम् ।। ११ ।। अधिकारं महद्वक्ष्ये बन्दीमोक्षकरं नृणाम् । विश्वासात्तत्क्षणाद्देवि सर्वकार्यप्रसाधकम् ।। २ ।। देवानां मनुजेशिनां नृपजुषां स्त्रीणां शिशूनां ततो बद्धानां निगडैश्चिरं तनुजुषां मोक्षाय सिद्धिप्रदम् ।। ३ ।।

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि बन्दीमोक्षप्रसाधनम् । यत्प्रसादात्क्षणेनैव बन्दीमोक्षः प्रजायते ।। १ ।। साध्य

श्री वन्दीदेवीको नमस्कार है । मस्तकसे लेकर चरणपर्यंत सम्पूर्ण अङ्गमें निगडवद्ध पुरुष जिस वंदी देवीकी आज्ञासे विमुक्त हो सिद्धादि गतिको प्राप्त होते हैं, उस वंदीदेवीको भक्तियुक्त मनसे नमस्कार करता हूँ ।। १-३ ।।

श्रीशिवजी वोले—हे सुंदरि ! जिसके प्रयोगसे बंदी कैदसे छूट जाता है, अव उस यन्त्रराजको कहता हूँ । विधान-पुयेके ऊपर घृतसे एक गोलाकार चक्र लिखकर उसके वहिर्भागमें एक चक्र और लिखे । फिर प्रथम यन्त्रके भीतर साध्यव्यक्तिके नामाक्षर और दूसरे यन्त्रके पूर्वादि चारों भागमें ह्रीं बीज लिखकर गंध पुष्पादिसे

वन्धमोचनयन्त्रम्



नाम लिखित्वा तु वर्तुलं वेष्टयेत्ततः । अपूपस्योपरि लेख्यं घृतेनैव तु यन्त्रकम् ॥२॥ चतुर्दिक्षु च ह्रींकारं लिखित्वा वेष्टयेत्ततः । तत्रैव विविधैः पुष्पैर्नैवेद्यैः परिपूजयेत् ॥ ३ ॥ भक्षणार्थं प्रदातव्यमपूपं सुरसुन्दरि । त्रिदिनान्मुच्यते जन्तुर्दुष्टबद्धोऽपि सप्तमे ॥ ४ ॥

ऐं ह्रीँ श्रीँ बन्दीदेव्यै अमुकस्य बन्धमोक्षं कुरु कुरु मातर्नमः स्वाहा अनेन मन्त्रेण नाम गृहीत्वा पुनःप्रतिमन्त्रं गुग्गुल वटिकां होमयेत् ॥ अष्टोत्तरशतं सप्तविंशति दिनपर्यन्तं सर्वथा बन्धमोक्षो भवति नान्यथा ॥ यन्त्रकल्पविहित सिद्धमन्त्रोऽयम् ॥

इति श्रीय० चिं० ना० म० प्र० उ० मोक्षाधिकारे दा० वन्धमोचनं नाम प्रथमं यन्त्रम् ॥ १ ॥

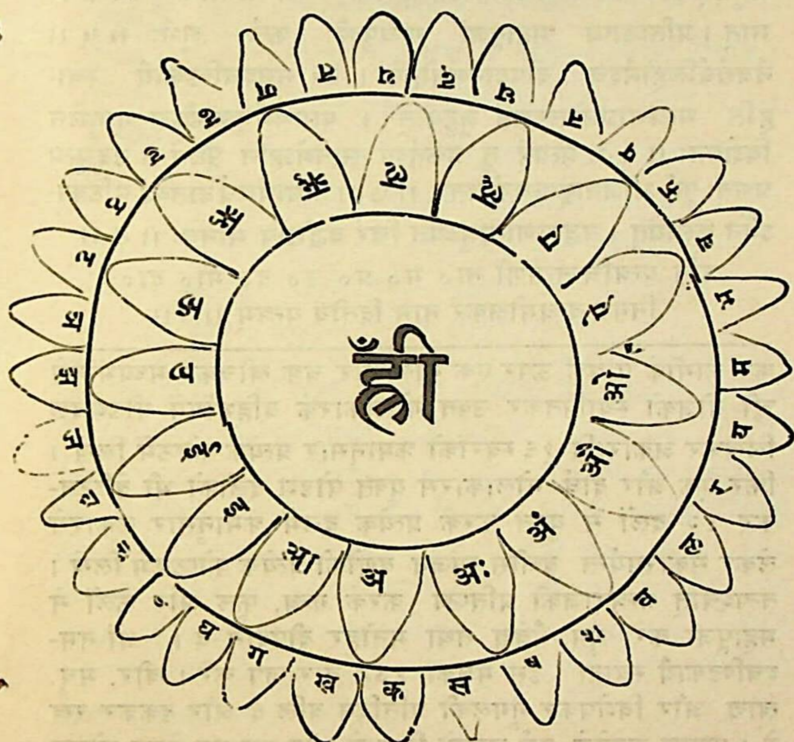
यन्त्रका पूजनकर साध्यव्यक्तिको खिला दें तो तीन दिन अथवा सात दिनमें बंधनसे छूट जायगा ॥ १-४ ॥

ऐं, ह्रीं, श्रीं, वन्दीदेव्यै अमुकस्य वन्धमोक्षं कुरु कुरु मातर्नमः स्वाहा ॥ इस मन्त्रसे नाम उच्चारण करके गुग्गल वटिकाकी आहुति देकर हवन करे । सत्ताईस दिनतक १०८ वार उक्त मन्त्रका जप करे तो बंदी अवश्य मोक्षको प्राप्त करे अर्थात् कारागारसे छूट जायगा । यह कल्पविहित सिद्ध मन्त्र है ॥

इति यन्त्रचिंतामणिकी दशवीं पीठिकाके मोक्षाधिकारमें बंधनमोचन नामक पहला यन्त्र ॥ १ ॥

श्रीशिव उवाच ।। अथातः संप्रवक्ष्यामि यन्त्रं निगडमोचनम् । हस्तपादतले बद्धो मुच्यते यत्प्रसादतः ।। १ ।। कांस्य-

निगडमोचनयन्त्रम्



पात्रोपरि लेख्यं रोचनाचन्दनेन च । कर्पूरकुंकुमाभ्यां च मृग-

श्रीशिवजी बोले–अब निगडमोचन यन्त्र कहता हूँ जिस यन्त्रराजके प्रतापसे सर्वाङ्गवंदी मुक्त हो सकता है। विधान-गोरोचन, लालचंदन, कपूर, कुंकुम, कस्तूरी इन सब वस्तुओंको एकत्रित

नाभियुतेन च ।। २ ।। ह्लींकारं मध्यदेशे तु वर्तुलं वेष्टयेत्ततः। ततस्तु षोडश दलानकारादिस्वरान्वितान् ।। ३ ।। ततस्तद्वेष्टयेत्सम्यग्वर्तुलं रेखया पुनः। तस्योपरि प्रकर्तव्यं द्वात्रिंशद्दलसंयुतम् ।। ४ ।। ककारादिसकारान्तं व्यञ्जनानि लिखेत्क्रमात्। प्रतिष्ठाप्य महापूजां गन्धपुष्पैः फलैः शुभैः ।। ५ ।। नैवेद्यैर्बलिहोमैश्च दीपदानैर्मनोहरैः। ॐ नमश्चण्डिकायै स्वाहेति मन्त्रेणाऽष्टोत्तरशतं जुहुयात् । पायसैर्मधुखाद्यैश्च गुग्गुलेन विशेषतः ।। ६ ।। प्रत्यहं तु प्रकर्तव्यं सप्तमेऽह्नि पूर्यते । उद्धृत्य प्रणतः पूर्वं भोजनाद्गन्धरोचनम् ।। ७ ।। पानार्थमर्धं दातव्यं गुटिकाऽर्धेन कल्पयेत्। तद्धारणात्प्रमुच्येत चिरं बद्धोऽपि मानवः ।। ८ ।।

इति यन्त्रचिन्तामणौ ना० म० प्र० उ० द० मो० दा०
निगड वन्धमोक्षकरं नाम द्वितीयं यन्त्रम् ।। २।।

कर कांसीके पात्रके ऊपर एक गोलाकार चक्र खींचकर मध्यभागमें ह्लीं बीजको स्थापितकर उक्त गोलाकारके वहिर्भागमें षोडशदल लिखकर अकारादि १६ स्वरोंको क्रमानुसार प्रत्येक कोष्ठमें लिखे। फिर एक और दीर्घ गोलाकारसे युक्त षोडश दलोंको भी वेष्टितकर ३२ दलों से युक्त करके प्रत्येक दलमें क्रमानुसार ककारसे लेकर सकारपर्यन्त वत्तीस व्यंजन वर्णोंको प्रत्येक कोष्ठकमें लिखे। तत्पश्चात् यन्त्रराजकी प्रतिष्ठा करके गन्ध, फूल और फलों से महापूजा करे, धूप, नैवेद्य तथा मनोहर दीपदान दे। 'ओं नमश्चण्डिकायै स्वाहा' इस मंत्रका १०८ वार जप करे। खीर, मधु, खाद्य और विशेषकर गूगलकी प्रतिदिन वलि दे और ढककर रख दे। प्रणाम करनेके पूर्व उसको निकाले और गंध-धूप देकर भोजन करे। पीनेके लिये इसका आधा भाग दे और आधेकी गुटिका वनाये। इस गुटिकाके धारण करनेसे जन्म-कैदी भी छूट जायगा ।। १-८ ।।

इति यंत्रचिंतामणिकी दशवीं पीठिकाके मोक्षाधिकारमें
निगड वंधमोक्षकारक दूसरा यंत्र ।। २ ।।

श्रीशिव उवाच ।। अथातः सम्प्रवक्ष्यामि यन्त्रं वै बन्धमोक्षणम् । विवरे चारुबद्धोऽपि मुच्यते यत्प्रसादतः ।। १ ।। ह्लींकार-

बन्धमोक्षकरयन्त्रम्

ह्रीं	दे
	व
	द
	त्त

मध्यदेशे तु साध्यनाम च यत्नतः । लिखित्वा भूर्जपत्रे तु रोचनाकुंकुमेन च ।। २ ।। तद्यन्त्रं पूजयित्वा तु वहमानेऽम्भसि क्षिपेत् । तदम्भःपक्वेनान्नेन भोजनं तस्य कारयेत् ।। ३ । एवं कृते तृतीयेऽह्नि मुच्यते नात्र संशयः । विवरस्थोऽत्र यो बद्धो गूढस्थोऽपि विमुच्यते ।। ४ ।।

इति श्रीयन्त्रचिन्तामणौ नाम महाकल्पे प्रत्यक्षसिद्धिप्रदे उमामहेश्वरसंवादे दशमपीठिकायां मोक्षाधिकारे दामोदरपण्डितोद्धृते बन्धमोक्षकरं नाम तृतीयं यन्त्रम् ।। ३ ।।

श्रीशिवजी बोले—अब बंधमोक्षण नाम यंत्र कहता हूँ—यदि कालकोठरी में भी भली प्रकार बद्ध होगा तथापि यंत्रराजके प्रतापसे छूट जायगा। विधि-भोजपत्र के ऊपर कुंकुमसे से चतुष्कोण यंत्रको लिखे । तत्पश्चात् ह्लीं बीजके मध्यमें साध्यव्यक्तिके नामको लिखकर यन्त्रराजके भीतर स्थापित करे। पुनः उक्त विधानसे पूजन कर यन्त्रको बहते हुए जलमें डाल दे और उस जलसे पके अन्नके साथ उक्त व्यक्तिको भोजन कराये । इस विधिके करनेसे तीसरे दिन विवरस्थ तथा गुप्तस्थानमें स्थित व्यक्तिभी मुक्त हो जायगा ।। १-४ ।।

इति यन्त्रचिन्तामणिकी दशवीं पीठिकाके पं० बलदेवप्रसादमिश्रजीकृतभाषाटीकायुत मोक्षाधिकारमें बंधमोक्षकर नामक तीसरा यन्त्र ।। ३ ।।

यन्त्रचिन्तामणिं नाम कल्पं श्रीशिवभाषितम् । धर्मार्थकाम-फलदं वैरिनिग्रहकारणम् ।। १ ।। यस्तु पूजयते नित्यं धारये-द्वाऽपि मानवः । अवध्यः सर्वलोकानां जायते नात्र संशयः ।। २ ।। शृणोति यस्तु धर्मात्मा वाच्यमानं कदाऽपि च । सोऽपि पूज्यश्च मान्यश्च जायते मत्प्रसादतः ।। ३ ।। यन्त्रचिन्तामणिं यस्य श्रुत्वा श्रद्धा न जायते । न वन्द्यः पापकृद्देवि दुर्भगो भुवि निश्चितम् ।। ४ ।। यस्तु श्रद्धाऽभियुक्तः सन्यन्त्रचिन्तामणिं श्रयेत् । तेन सार्द्धं तु कःकुर्याद्विरुद्धं वै जिजीविषुः ।। ५ ।। अतः परं किं बहुनोदितेन कल्पप्रभाव बहुधा तु देवि । यः शुद्धरूपी जगतःप्रशास्ता मत्तेजसा भाति सुशोभमानः ।। ६ ।। पुण्यं पवित्रं परमं रहस्यं सुसारसं यत्परिकीर्तितं ते । चिन्तामणिं चिंतित-

---

शत्रुनिग्रहकारक धर्म, अर्थ, काम, देनेवाले शिवोक्त इस चिन्तामणि नाम कल्पको जो मनुष्य नित्यप्रति पूजन तथा धारण करता है; वह मनुष्य निःसन्देह सब लोकों से अवध्य होता है ।। १ ।। २ ।। जो धर्मात्मा मनुष्य इस चितामिण नामक कल्पको श्रवण करता है, वह मेरे प्रसादसे पूज्य तथा माननीय होता है ।। ३ ।। हे देवि ! इस चिन्तामणि नाम यन्त्रको श्रवण करने पर जिस भी व्यक्तिकी यंत्रशास्त्रमें श्रद्धा नहीं होती है उस संशयात्माको प्रणामादि न करना चाहिये क्योंकि वे मनुष्य संसारमें दुर्भाग्यशाली होते हैं । ४ ।। जो मनुष्य श्रद्धापूर्वक यन्त्रचितामणि नामक कल्पका आश्रय लेते हैं, उन मनुष्योंके साथ ऐसा कौनसा व्यक्ति है जो विरोध करेगा अर्थात् कोई भी विरोध नहीं करेगा ।। ५।। हे देवि ! इस चितामणि नामक कल्पके अत्यंत प्रताप वर्णन करने से क्या है ? यह समुद्ररूप ग्रंथ लोगोंको शिक्षा देनेवाला मेरे तेजसे प्रकाशित है ।। ६ ।। हे देवि ! पुण्यदायक अत्यन्त पवित्र, परमरहस्यमय प्रीतिदायक जो यह

कार्यसाधकं प्रत्यक्षकामादिफलप्रसाधकम् ।। ७ ।। वश्याभिधानं प्रथमं द्वितीयमाकर्षणं स्तम्भनकं तृतीयम् । विद्वेषणं मारणकं ततश्च उच्चाटनं शान्तिकरं च सप्तमम् ।। ८ ।। बन्दीप्रसादजनकं तु महाप्रभावमत्यन्तमुच्चाटनकं वदन्ति । अष्टाधिकारं प्रवदन्ति कल्पं चिन्तामणौ देववरैः सुपूजिते ।। ९ ।। स्वर्गच्युतस्य बहुभाग्ययुतस्य पुंसः पुण्याधिकस्य बहुयोगयुतस्य लोके । प्राप्तिर्भवेत्कल्पवरेण तस्य येनार्चितो देववरो महेशः ।। १० ।।

इति श्रीय० महा० दशमपीठिकायुतो मोक्षाधिकारः समाप्तः ।।

अथ सर्वसायारणयन्त्रणविधि

तंत्रान्तरे–सुस्नातः सुवस्त्रचन्दनादिभिर्भूषितो यथोक्तद्रव्यैः शुद्धदेशे यन्त्रं लिखेत् ।। तत्रादौ षष्ठचन्तं साधकपदं मध्ये बीजं

कल्प मैंने तुमसे कहा, वह यह चिंतामणि नामक कल्प चिंतित कार्यों के फलका देनेवाला है ।।७।। इस चिंतामणि नामक कल्पमें आठ अधिकार हैं, जो कि देवपूजित हैं । संख्या-पहिला वश्याधिकार, दूसरा आकर्षणाधिकार, तीसरा स्तम्भनाधिकार, चौथा विद्वेषणाधिकार, पांचवाँ मारण-अधिकार, छठा उच्चाटनाधिकार, सातवां शांति अधिकार और आठवां बंदीमोक्षणाधिकार ।। ८ ।।९।। जो मनुष्य स्वर्गसे आये हैं, जो अत्यंत भाग्यवान् हैं, जिनके अतिपुण्य हैं, जो अत्यंत योगोंसे युक्त हैं और जिन्होंने देव श्रेष्ठ श्रीशिवजी महाराजका भक्तिसे पूजन किया है, उन्हें ही इस श्रेष्ठ कल्पकी प्राप्ति होती है । ।।१० ।।

इति श्रीयन्त्र० पं० बलदेवप्रसादमिश्रकृतभाषाटीका-
सहितदशमपीठिकायुतो मोक्षाधिकारः समाप्तः।

अब सब यंत्रोंके धारण करनेकी विधि कहते हैं–तंत्रोंमें लिखा है कि, प्रथम स्नानकर चंदन लगाकर सुन्दर वस्त्रोंको पहनकर जिस

तदधो द्वितीयान्तं साध्यनाम तत्पार्श्वयोः कुरु कुरु तदधो वियदयुक्तंसर्गबीजं (अः) लिखेत्। तत ईशानादिचतुष्कोणेषु हंसः सोऽहं प्राणबीजं चतुर्दिक्षु दिग्बीजानि प्रतिदिशं यन्त्रगायत्री वर्णान् लिखेत्॥ यन्त्रगायत्री यन्त्रराजाय विद्महे महा-यन्त्राय धीमहि। तन्नो यन्त्रःप्रचोदयात्॥ इति यन्त्रगायत्र्या प्राणप्रतिष्ठामन्त्रवर्णेन च यन्त्रं सर्वतो वेष्टयेत्॥ एवं यन्त्रं लिखित्वा सावधानतया सुवर्णादिना वेष्टितं कृत्वा यन्त्रप्र-तिष्ठां कुर्यात् सा यथा—सर्वतोभद्रमण्डलेऽष्टदले वा कर्णि-कायां कलश स्थापनविधिना कलशं संस्थाप्य तदुपरि यन्त्रं स्थापयेत्। मण्डल कोणचतुष्टय चतुष्कलशान्संस्थाप्य प्रति कलशं आँ ह्रीं क्रौं इति त्र्यक्षरीविद्यां कूर्चबीजयुतां सहस्त्रं

द्रव्यसे जिस यंत्रके लिखनेको कहा गया हो, उस द्रव्यसे शुद्धस्थानमें बैठकर यंत्रको लिखे। पहले साधकके नामके अन्तमें षष्ठीविभक्ति लगाकर लिखे, बीचमें बीजोंको लिखकर नीचे साध्यके नामके अन्तमें द्वितीयाविभक्ति लगाकर लिखे। दोनों ओर नीचे कुरु कुरु और उसके नीचे वियदयुक्त सर्गबीज (अः)को लिखे। फिर ईशानादि चारों कोनोंमें हंसः सोऽहं और प्राणबीजके चारों ओर दिग्बीजोंको प्रत्येक दिशामें यन्त्रगायत्रीके तीन वर्णोंको लिखे। यन्त्रगायत्री—"यंत्रराजाय विद्महे महायन्त्राय धीमहि। तन्नो यंत्रः प्रचोदयात्।" इस यन्त्र गायत्रीके द्वारा प्राणप्रतिष्ठाके मन्त्रोंके वर्णोंसे यन्त्रको चारों ओरसे वेष्टित करे। इस भाँति सावधानीसे

जपेत् ।। ततस्तद्यन्त्रं चतुष्कलशोदकैरभिषेकमन्त्रैरभिषिच्य गंधादिभिः संपूज्य यंत्रे प्राणप्रतिष्ठामन्त्रेण यन्त्रदेवताप्राणान् प्रतिष्ठाप्य यन्त्रगायत्र्या यंत्रं षोडशोपचारैः सम्पूज्य ब्राह्मणान् सुवासिनीः कुमारीश्च संभोज्य दक्षिणां दत्त्वा तेषामाशिषो गृहीत्वा यथोक्ताङ्गे यन्त्रं बध्नीयात् । अनुक्तलेखनस्थले भूर्जपत्रम् । अनुक्तलेखनद्रव्ये केसरगोरोचन कर्पूर कस्तूरीगज-

---

यन्त्रको लिखकर सुवर्णादिसे यन्त्रको वेष्टितकर यन्त्रीक प्रतिष्ठा करे । सर्वतोभद्रमंडलमें आठों दलोंमें कलशों का स्थापनकरके ऊपर यन्त्रको रक्खे । मण्डलमें चारों कोनोंमें चार कलशोंको स्थापित करे और प्रत्येक कलशपर (हाथधर) आं ह्रीं क्रौं इन तीन अक्षरोंवाली विद्यामें कूर्चबीजोंको लगाकर हजार वार जपे । फिर उस यंत्रको चारों कलशोंके जलसे अभिषेकके मन्त्रोंद्वारा अभिषिक्तकर गंधपुष्पादिसे पूजन कर यंत्रमें प्राणप्रतिष्ठाके मंत्रोंद्वारा यंत्र देवताकी प्राणप्रतिष्ठा करके यंत्रगायत्री के द्वारा यंत्रको षोड्शोपचारसे पूजा कर ब्राह्मण, सुवासिनी और कुमारीको भोजन कराकर दक्षिणा देकर उनका आशीर्वाद ले । फिर जिस अंगमें यंत्र धारण करना लिखा हो उस अंगमें यंत्रको धारण करे । जहाँ किसी पर यंत्र लिखनेका विधान न हो, वहाँ भोजपत्रपर लिखे । जहाँ यंत्रके लिखनेमें द्रव्यका विधान न हो, वहाँ केशर, गोरोचन, कपूर, कस्तूरी गजमद, चंदन और अगर इनमेंसे किसीके द्वारा लिखे । जहाँ

मदचन्दनागरुद्रव्याणि । अनुक्तलेखनिकायां सुवर्णशलाका । अनुक्तवेष्टने सुवर्णम् ।। अनुक्तधारणाङ्गे दक्षिणबाहुः ।। इति सर्वसाधारणयन्त्रविधिः ।।

इति श्रीदामोदरपण्डितोद्धृतो यंत्रचितामणिः समाप्तः।।

किसी लेखनीका विधान न हो, वहाँ सोनेकी सलाईसे लिखे । जहाँ किसीमें धरकर यंत्र धारण करने का लेख न हो, वहाँ सुवर्णके तावीजमें धरकर धारण करना चाहिये । जहाँ किसी अंगमें धारण करनेका लेख न हो, वहाँ दक्षिणभुजामें धारण करना चाहिये ।

इति श्रीपंडित–बलदेवप्रसादमिश्रजीकृतभाषाटीकासहित
यंत्रचिन्तामणि समाप्त ।

मन्त्र-तन्त्र तथा स्तोत्र विषयक अन्य ग्रन्थ

			रु. पै.
१.	अनुष्ठान प्रकाश संस्कृत (पत्राकार)	..	१२.००
२.	अष्टसिद्धि (हिन्दी टीका सहित)	..	१.३५
३.	आसुरी कल्प (हिन्दी टीका सहित)	..	०.२०
४.	(वृहत्) इन्द्रजाल अर्थात् कौतुकरत्न भण्डागार	..	४.००
५.	उच्छिष्ट गणपति पञ्चाङ्ग संस्कृत (सजिल्द)	..	१.७५
६.	उड्डीश तन्त्र (हिन्दी टीका सहित)	..	०.७५
७.	क्रियोड्डीश तंत्र (हिन्दी टीका सहित)	..	१.२५
८.	काम रत्न (हिन्दी टीका सहित)	..	५.००
९.	गायत्री तन्त्र (हिन्दी टीका सहित)	..	०.८५
१०.	दत्तात्रेय तन्त्र (हिन्दी टीकासहित)	..	०.७५
११.	धन्वन्तरितन्त्र शिक्षा (हिन्दी टीकासहित)	..	२.५०
१२.	पञ्चदशी तन्त्र (हिन्दी टीका सहित)	..	०.२०
१३.	प्रत्यङ्गिरापंचाग संस्कृत (सजिल्द)	..	१.७५
१४.	बटुकभैरवोपासनाध्याय संस्कृत (पत्राकार)	..	३.००
१५.	मन्त्र महोदधि संस्कृत (पत्राकार)	..	९.००
१६.	मन्त्र विद्या (हिन्दी टीका सहित)	..	१.५०
१७.	माहेश्वरी तन्त्र (हिन्दी टीकासहित)	..	०.४५
१८.	योगिनी तन्त्र (हिन्दी टीका सहित)	..	७.००
१९.	रुद्रयामल तन्त्र (हिन्दी टीका सहित)	..	१.००
२०.	श्री तत्त्वनिधि संस्कृत (सजिल्द)	..	७.००
२१.	कालिका सहस्रनाम संस्कृत	..	०.५०

२२.	गोपाल सहस्रनाम संस्कृत (सजिल्द)	..	०.४०
२३.	बृहत्स्तोत्र रत्नाकर संस्कृत (सजिल्द)	..	३.५०
२४.	शिव सहस्र नामस्तोत्र (हिन्दी टीकासहित)	..	०.५०
२५.	शिवमहिम्न स्तोत्र (हिन्दी टीका सहित)	..	०.४०
२६.	शिवस्तुति (हिन्दी टीका सहित)	..	०.६०
२७.	विष्णु पूजन विधि (हिन्दी टीकासहित)	..	०.२५
२९.	देवी स्तोत्र पञ्चक	..	०.१५
२८.	शिवस्तोत्र (हिन्दी टीका सहित)	..	०.१०
३०.	रामस्तवराज (हिन्दी टीका सहित)	..	०.५०
३१.	महालक्ष्मी पूजा पद्धति (हिन्दी टीकासहित)	..	०.२५
३२.	इन्द्राक्षी स्तोत्र	..	०.१०
३३.	गङ्गा लहरी (भाषानुवाद सहित)	..	०.४०



पुस्तक मिलने का पता–

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,
लक्ष्मीवेंकटेश्वर प्रेस,
कल्याण–बम्बई.

खेमराज श्रीकृष्णदास,
श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
बम्बई–४.